देवालय के रहस्य

रचयिता : त्रिमत के एकैक गुरू

आध्यात्मिक साम्राज्य के चक्रवर्ती, (88) दश अष्टाधिक ग्रंथकर्ता

इंदू ज्ञान धर्मप्रदाता, संचलनात्मक रचयिता, त्रैतसिद्धान्त आदिकर्ता

श्रीश्रीश्री आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर

www.thraithashakam.org

देवालय के रहस्य

रचयिता : **त्रिमत के एैकक गुरू**

आध्यात्मिक साम्राज्य के चक्रवर्ती, (88) दश अष्टाधिक ग्रंथकर्ता

इंदू ज्ञान धर्मप्रदाता, संचलनात्मक रचयिता, त्रैतसिद्धान्त आादिकर्ता

श्रीश्रीश्री आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर

Published by

इंदू ज्ञानवेदिका

(Estd. in 1978 - Regd.No.: 168 / 2004)

त्रैत शक : 39 **प्रथम मुद्र** : May - 2017

प्रतियाँ : 1000 **खीमत** : 115/-

योगीश्वर जी के संचलनात्मक त्रिमत के आध्यात्मिक रचनायें

02 इंदूज्ञानवेदिका के प्रचुरण

01) त्रैत सिद्धान्त भगवद्गीता
02) जनन मरन सिद्धान्त
03) ईश्वर का चिह्न - ९६३
04) धर्म शास्त्र कौनसा है?
05) इंदुत्व की रक्षा करते हैं
06) कौनसा असली ज्ञान हैं?
07) आध्यात्मिक प्रश्न - जवाबात
08) तत्वार्थ के तसवीरों में ज्ञान
09) मंत्र - महिमा (सच या झूट?)
10) गीतम - गीता (गानों में ज्ञान)
11) लु का क्या मतलब? (तेलुगु)
12) हिंदू मत में सिद्धान्त कर्तायें
13) तीन ग्रंथ, दो गुरू, एक बोधक
14) ईश्वर का ज्ञान कब्ज़ा हुआ है
15) हेतुवाद प्रश्न - सत्यवाद जवाब
16) त्रैत सिद्धाँत आध्यात्मिक घंटु
17) मेरा लोचन है तेरा आलोचन है
18) क्या जिहाद का मतलब युद्ध है?
19) क्या ईसा मरगया? या मारेगया?
20) तीन दैव ग्रंथ - तीन प्रथम वाक्य
21) कौनसा पहला है पेड या बींज ?
22) दैवग्रंथ में सत्यासत्य की विचक्षण
23) जिन्न - भूतों के यदार्थ संघटनायें
24) क्या सायिबाबा ईश्वर है या नहीं?
25) क्या श्रीकृष्ण ईश्वर है या भगवान
26) कलियुग (कभी भी युगाँत नही होगा)
27) गालियों में ज्ञान - आशिर्वादों में अज्ञान
28) ज्योतिष्य शास्त्र (शास्त्र है या अशास्त्र?)
29) क्या ईश्वर के आमद का समय ये नहीं है
30) क्या स्वर्ग इंद्रलोक और नरक यमराज्य है
31) हमारे त्योहार (कैसे करना है मालूम है?)
32) कृष्ण मूसा (श्री कृष्ण के मरण की बाद की ज़िदगी)

33) गुत्ता
34) सुबोधा
35) प्रबोधा
36) समाधि
37) कसौटी
38) फैसला
39) कर्मपत्र
40) आदित्य
41) धर्मचक्र
42) माँ - बाप
43) मत - पथ
44) भाव - भाषा
45) धर्म - अधर्म
46) प्रबोधा तरंग
47) त्रैत सिद्धान्त
48) प्रसिद्ध बोधा
49) सुप्रसिद्ध बोधा
50) वार्तक - वर्तक
51) तत्वों में ज्ञान
52) मरण रहस्य
53) गीता परिचय
54) त्रैतशक पंचांग
55) ईश्वर का चिह्न
56) ईश्वर की मुहर
57) तुझे मेरी लेखा
58) योहान सुवार्ता
59) कथाओं में ज्ञान
60) कथाओं में ज्ञान
61) त्रैताकार रहस्य
62) गुरुप्रर्थना मंजरि
63) देवालय के रहस्य
64) हेतुवाद - प्रतिवाद
65) पुनर्जन्म का रहस्य
66) त्रैताराधना
67) इंदू सांप्रदाय
68) आत्मलिंगार्थ
69) द्राविड ब्राह्मण
70) विश्व विद्यालय
71) प्रवक्तायें कौन?
72) पहेलियों में ज्ञान
73) एक ही दोनों हैं
74) एक बात तीन ग्रंथ
75) सामेताओं में ज्ञान
76) नास्तिक - आस्तिक
77) प्रबोदानंद नाटिकायें
78) क्या सुलेब ईश्वर है?
79) यज्ञ (सच या झूट?)
80) क्या इंदू ईसायि है?
81) निगूढ तत्वार्थ बोधिनि
82) रूप बदला हुआ गीता

83) सत्यान्वेशि की कथा
84) राजकीय - राजकीय
85) योहान कही हुयी ज्ञान
86) प्रथम दैवग्रंथ भगवद्गीता
87) मतातीत ईश्वर का मार्ग
88) मत बदलना दैवद्रोह है
89) आज्ञान में उग्रवाद बीज
90) एक व्यक्ति में दो कोण
91) मरण के बाद की जीवित
92) हिंदूमत में ही कुलविवक्षा
93) उग्रवाद स्वर्गकेलिये ही है
94) प्रतिमा विग्रह - दैव दैय्यमु
95) कौनसे मत में कितना मतद्वेष?
96) मध्यम दैंवग्रंथ में ज्ञानवाक्य
97) अंतिम दैंवग्रंथ में ज्ञानवाक्य
98) अंतिम दैंवग्रंथ में वज्रवाक्य

भाषा में पांडित्य को छोडकर, भाव में पांडित्य को देखनेवाला ही असली ज्ञानी है

01) माता
02) माता -पिता
03) मत - पथ
04) युग - योग
05) पैत्य - सैत्य
06) प्रभू - प्रजा
07) इंदू - हिंदू
08) बात - दवा
09) भक्ति - भय
10) भाव - भाषा
11) धर्म - अधर्म
12) नैज़ - सहज
13) प्रभू - प्रभुत्व
14) सुख - आनंद
15) दश - दिशायें
16) स्त्री - पुं/लिंग
17) पुस्तक - ग्रंथ
18) द्राविड - आर्य
19) भूत - महाभूत
20) ज्ञान - विज्ञान
21) प्रकृति - विकृति
22) मरण - शरीर
23) मुर्गा - पादरस
24) पैदाहोना - मरना
25) सृष्टि - सृष्टिकर्ता
26) द्वितीय - अद्वितीय
27) मायक - अमायक
28) सेकूवलि - कूलिसेवा
29) देश दोखा - देह मह
30) माँ बाप - गुरू दैव
31) गोरू - गुरु (नाखुन)
32) दिव्य खुरान - हदीस
33) दादा
34) आत्मा
35) समाधि
36) टकलू
37) यादव
38) भगवान
39) सांप्रदाय
40) कलियुग
41) वेलुगुबंट
42) ज्ञानशक्ती
43) ६-३=६
44) गुरुपौर्णमी
45) संचित कर्मा
46) इंदू महासमुद्र
47) त्रैत सिद्धान्त
48) कर्म का मर्म
49) श्रीकृष्णाष्टमी
50) सात आकाशें
51) तीन ग्रंथ
52) चमत्कार आत्मा
53) चंद्राकार (गंजा)
54) गुरू कोन है?
55) श्रीकृष्ण कौन है?
56) १ २ ३ गुरूपौर्णमी
57) एकता - एकाग्रता
58) श्रीकृष्ण जन्म मधुरा
59) आत्मा का काम
60) मतों में पवित्रयुद्ध
61) पुनर्जन्म का रहस्य
62) खिलानेवाली आत्मा
63) तेलुगु में तीन - छ - नौ
64) नाटक करनेवाली आत्मा

65) शैव - वैष्णव
66) जीर्ण+आशय
67) निदर्शा - निरूप
68) सेवा की फीसद
69) कौनसा धर्म है?
70) अधर्म आराधनायें
71) कौनसा शास्त्र है?
72) क्या ईश्वर का कोइ
73) काय - फल - काया
74) दैवज्ञान - माया महत्य
75) तीन पैदायिश - दो जगह
76) क्षमा न कियेजानेवाला पाप
77) ज्ञान के पास जत्तन रहना!!
78) बाल आत्मा की निशान है
79) एक निरंजन - अलकनिरंजन
80) हरिपैर - हरहाथ (हथेलि - तलवा)
81) बिना गुरू की विद्या अंधी विद्या ह
82) तीन निर्माण - एक परिशुभ्रता
83) सहज मरण - तात्कालिक मरण
84) मेघ एक भूत - रोग एक भूत है
85) प्रपंच की श्रद्धा - परमात्मा की श्रद्धा
86) कर्मवाला कृष्ण -बिना कर्मवाला कृष्ण
87) गुरू वह है जो पहचाना नहीं जाता
88) इच्छादीन कार्य - अनिच्छादीन कार्य
89) इच्छादीन कार्य - अनिच्छादीन कार्य
90) योगीश्वर जी का जन्मदिन का संदेश
91) बाहर का समाज - अंदर का समाज
92) सीने पर मोहर - माँ बाप की निशानी
93) स्वार्थ राजकीय (स्व + अर्थ राजकीय)
94) पैदायिश का दिन किसी को नहीं आता
95) आटा - दोबूचलाटा (खेल - छुपाछुपी का खेल)
96) टक्कु टमार, इंद्रजाल महेंद्रजाल, गजकर्ण गोकर्ण

97) भय
98) गुरुचिह्न
99) मतद्वेश
100) धर्म चक्र
101) पुरुषोत्तम
102) हान्कनेवाला
103) अर्थ - अपार्थ
104) ग्रंथ - बोधा
105) प्रज - मानव
106) दंत - अंत
107) शव - शिव
108) अदुरू - बेदुरू
109) भक्ति - श्रद्धायें
110) आस्ती - दोस्ती
111) दैवग्रंथ
112) ग्राहिता शक्ति
113) त्रैतशक संतक
114) कालज्ञान के वाक्य
115) ईश्वर की आज्ञा - मौत
116) मत सामरस्य
117) तेरे पीछेवाला
118) माया मर्म - आत्म धर्म
119) कालज्ञान के वाक्य
120) ज्ञान कब्जा हुआ है
121) क्या ईश्वर एक है! या दो!!
122) आध्यात्मिक प्रश्न - जवाबात
123) अंतिम दैवग्रंथ में प्रथम वाक्य
124) मोक्षमु - मोसमु (मुक्ति - धोका)
125) श्रीकृष्णमरगया? या मारेगया?
126) अक्षर ज्ञान

इंदू ज्ञानवेदिका के आध्यात्मिक प्रचुरण मिलने के पतें

प्रबोधाश्रम (श्रीकृष्ण मंदिर)

चिन्न पोडमल (ग्राम), ताडिपत्रि (मं), अनंतपुर (जिला) A.P
Cell : 98665 12667, 99516 75081, 94903 63038

इंदूज्ञान वेदिका शाखा
अनंतपुर टौन, A. P
Cell : 97059 59390, 99855 80099

के. लक्ष्मीनारायणा चारि (प्रसिडेन्ट)
मार्केट स्ट्रीट, धर्मवरम, अनंतपुर (जि)
Cell : 94405 56968,
92900 12413, 94406 01136

आदिशेषय्या (टीचर) (प्रसिडेन्ट)
गुत्ति, अनंतपुर (जि)
Cell : 9491362448, 7382986963

पि.आदिनारायण
मुद्दिरेड्डि पल्ली (ग्रां), अनंतपुर (जि)
Cell : 9440745800, 7259851861

ए.नागेंद्र (प्रसिडेन्ट)
क्रोत्त चेरुवु (ग्रां, मंडल) अनंतपुर (जि)
Cell : 9493622669, 9959316410,
9949995090

टि.वि.रमणा (प्रसिडेन्ट)
मुदिगुब्बा (ग्रां), अनंतपुर (जि)
Cell : 9440980036, 07406039453

पि.नागय्या (प्रथम मेंबर)
वीकर सेक्षन कालनी, कर्नूल टौन
Cell : 9440244598, 9849303902

एन.वि.रामकृष्ण (प्रथम मेंबर)
बोद्दाम (ग्रां), राजाम (मं), श्रीकाकुलम
Cell : 9494248963, 9959779187

इंदू ज्ञानवेदिका (Head office)
चैतन्यपुरि, दिलसुख नगर, हैदराबाद,
तेलंगाना रार्ष्ट. Cell : 9491040963,
9032963963, 9848590172

वि.शंकर राव (टीचर) (प्रसिडेन्ट)
अशोक नगर, विजयनगर (जिल्ला)
Cell : 9703534224, 9491785963

तुलसी राव
टि.टि.डि कल्याण मंडप, विजयनगर
Cell : 9441878096, 9030089206

यस अनिल कुमार
काकिनाडा टौन, तूर्पु गोदावरि जिल्ला
Cell : 9866195252, 9640526520,
73960 38888

बंडारु सत्यनारायण
मामिडि कुदुरु (मं), तू, गोदावरी जिल्ला
Cell : 95535 07141, 84669
20419, 94902 95577

यन.वि.रामकृष्णा (प्र.सभ्य)
बोद्दाम (ग्रां), राजाम (मं), श्रीकाकुलम (जिल्ला)
Cell : 9494248963, 9959779187

इंदू ज्ञानवेदिका शाखा
मल्लिगां (ग्रामं), कोत्तपेट (पो), रायगड (जि),
ओडिसा (राष्ठ). Cell : 09437527499,
09437527470, 09437975781

इंदू ज्ञानवेदिका शाखा
विशाख पट्टणम, आर्न्धप्रदेश
Cell : 76749 79663, 94400 42763, 89777 13666, 92478 26253

एन.बि.नायक (प्रथम मेंबर)
पेदमडका, अगनंपूडी, विशाख पट्टणम (जि)
Cell : 73964 92239, 92483 15309, 73862 12589

वि.सि.वर्मा आनंदाश्रम
मज्ञिवलस(ग्रां, पोस्ट), भीमिलि (मं), विशाख पट्टणम (जि)
Cell : 94415 67394, 95021 72711

वि.शंकर राव (टीचर) (प्रेसिडेन्ट)
अशोक नगर, विजयनगर (जि)
Cell : 9703534224,9491785963

तुलसी राव
तळळ दत ग.ग.ऽ.कल्याण मंडप, विजयनगर (जि)
Cell : 9441878096,9030089206

डा बि धर्मलिंगाचारी (प्रथम मेंबर)
श्री कनकमहा लक्ष्मी क्लिनिक, (कोट), विजयनगर (जि).
Cell:08966-275208, 9704911737

टि.उदयकुमार (प्रेसिडेन्ट)
भीमवरम १ टौन, पशिचम गोदावरी जिल्ला
Cell : 9948275984,7386433834

यम मुरलि
जडूचर्ला, महबूब नगर जिल्ला
Cell : 97057 16469

इंदू ज्ञानवेदिका शाखा
विशाख पट्टणम, आर्न्धप्रदेश
Cell : 76749 79663, 94400 42763,
89777 13666, 92478 26253

यम अल्लिपीर
मडकशिरा, अनंतपुर (जिल्ला), आं. प्र.
Cell : 89780 58081

शेक षफी
चेन्नै, तमिलनाडु रार्ष्ट
Cell : 09445554354

शेक इब्राहीम
कर्नूल टौन, आंध्रप्रदेश
Cell : 70950 08369

शेक अमीर अली
नल्गोंडा जिल्ला, तेलंगाण रार्ष्ट
Cell : 9505 989898, 9505768181

श्री प्रबोध क्लिनिक यु.जनार्दन
आटोनगर, बस्टान्ड रोड, कोयिल कुंट्ला (मं), कर्नूल (जिल्ला). Cell : 9491851911

अनमल महेश्वर (प्रेसिडेन्ट)
चवटपाल्यम (ग्रां), गूडूरु, नेल्लुरु जिल्ला
Cell : 9494631664, 9490809181, 8106065300

रौतु श्रीनिवास राव (प्रेसिडेन्ट)
एटुकूरु रोड, दर्गा मान्यम, गुंटूर जिल्ला
Cell : 9948014366, 9052870853

नर्रा श्रीनिवास रेड्डि
कंभं (मं), प्रकाश्म जिल्ला
Cell : 9849883261, 8142853311, 8187084516

डा.यम.वेंकटेश्वर राव (प्रेसिडेन्ट)
M.D(Acu)
शान्ति नगर, नेल्लूरु जिल्ला
Cell : 9440615064, 9246770277

यन.बी नायक (प्र.सभ्य)

पेदमडक, अगनंपूडी, विशाक पट्नम (जिल्ला)
Cell : 92483 15309,
73862 12589, 73964 92239

नायुडु

ख.क.ऊ कोलिमि गुंड्ला, कर्नूल (जिल्ला)
Cell : 9440490963

तलारि गंगाधर

गुडिपाटि गड्डा, नंद्याल टौन.
Cell : 9491846282, 7671963963

वै.रविशेखर रेड्डि

पेद्द कोट्याल (ग्रमं), नंद्याला (मं)
कर्नूल जिल्ला. Cell : 9440420240,
9885385215

टि.उदय कुमार (प्रसिडेन्ट)

भीमवरम वनटौन, पश्चिम गोदावरी जिल्ला.
Cell : 99482 75984, 73864 33834

इंदू ज्ञान वेदिका शाखा

विशाक पट्नम, आंध्रप्रदेश राष्ट्र.
Cell : 76749 79663, 94400 42763,
89777 13666, 92478 26253

इंदू ज्ञान वेदिका शाखा

कोत्तकोट, महबूब नगर (जिल्ला)
Cell : 87905 58815,
9440655409, 9701261165

पि रामकृष्णारेड्डि

कोलिमि गुंड्ला, कर्नूल (जिल्ला)

Cell : 9666202963

घडियं.पेद्दिरेड्डि (प्र.सभ्य)

नरसरावपेट, गुंटूरु जिल्ला
Cell : 9989204097, 9849555738

यम जैराम नायक

पद्मावती कालनी, महबूब नगर टौन.
Cell : 70321 74830, 90009 16419

सायि शंकर श्रेष्टी (टीचर)

अच्चं पेट, महबूब नगर जिल्ला.
Cell : 9948947630, 9640717574

पोटु वेंकटेश्वर्लु (प्रेसिडेन्ट)

हुजुर नगर, नलगोंडा जिल्ला.
Cell : 9848574803, 9866423853

बि.देवेंदर

भुवनगिरि टौन, नल्गोंडा जिल्ला.
Cell : 76800 65963,
9704885964, 9848741703

इ.श्री नाथ श्रेष्टि

गणेश स्ट्रीट, जनगां, वरंगल जिल्लाह.
Cell : 9573552963, 8096958359

ए.राघवेंद्र श्रेष्टि

श्री कृष्ण मेडिकल्स जनरल्स, पटेल नगर, ३ क्रास होस्पेट, बल्लारि जिल्ला, कर्णाटका राष्ट्र.
Cell : 097318 16452, 096111 33635

A.V LAKSHMI NARAYANA

San Antonio, TEXAS,U.S.A
+1(210)714 9696, +1(210)527 3436

K. SIVA KRISHNA

Atlanta, GEORGIA, U.S.A
+1 (404) 551 3297, +1 (470) 658 7635

www.thraithashakam.org

विषय सूचि

क्रम संख्या	- विषय	-	पेज नं
	रचयिता का प्रस्तावना	-	13
1.	देवालय के रहस्य	-	19
2.	लिंग प्रतिष्टा	-	25
3.	आकार प्रतिष्टा (भगवान का रुप प्रतिष्टा)	-	36
4.	मूल की माता बडी माता	-	42
5.	सात द्वार	-	49
6.	गोपुर	-	54
7.	राक्षसाकार	-	59
8.	द्वजस्थंब	-	61
9.	घंटी	-	66
10.	सिंहतलाट	-	68
11.	गर्भगुडि	-	71
12.	शंखु चक्र	-	73
13.	आयुध	-	75
14.	नामम्	-	77
15.	हस्त	-	79
16.	मोर की पिंछ	-	86
17.	मुरलि	-	92
18.	पैर	-	94
19.	शरीर का नीला रंग	-	95
20.	आराधना	-	96

विषय सूचि

क्रम संख्या - विषय		-	पेज नं
21.	दिया	-	100
22.	ताम्बूल	-	103
23.	फूल का हार	-	105
24.	अभिषेक	-	109
25.	नारियल (टेन्काया)	-	112
26.	सर के बाल समर्पण करना	-	119
27.	नमस्कार	-	122
28.	शठगोप	-	124
29.	प्रदक्षण	-	126
30.	कपूर	-	128
31.	गोविंदा	-	130
32.	तालाब (कोनेरु)	-	133
33.	ऊरेगिंपु	-	135
34.	तिरुनाल	-	136
35.	बट्टा बयलु	-	138
36.	देवदासियाँ	-	143
37.	देवदासें	-	145
38.	नक्षत्र	-	146
39.	चाँद	-	147
40.	परों का घोडा	-	148
41.	पीराँ	-	150
42.	हिंदू रक्षण! या हिंदू भक्षण!!	-	154

रचयिता की प्रस्तावना

देवालय का मतलब ईश्वर का आलय है। हमने यह तो ज़रुर सुना होगा कि ज्ञानी लोग कहते हैं कि ईश्वर एक ही है। जब ईश्वर एक ही है तो फिर ईश्वर का आलय भी एक ही होना चाहिये लेकिन कई तरह के देवताओं के आलय रहना हम देख ही रहे हैं। आख़िर इनमें से वह एक ईश्वर कौन है, यह सवाल ज़रूर पैदा होगा। और एक सवाल भी उठ्ठेगा कि आख़िर इतने सारे देवालयों में से कौनसा ईश्वर असली है। सबसे बडा सवाल तो यह है कि ईश्वर कौन है? हमें इन सवालों का जवाब ढूँढना हैं कि ईश्वर कौन हैं? और देवालय कौनसा है? अर्थात इनका जवाब मालूम करना पडेगा। इतने बडे सवालों का जवाब सिर्फ एक ही बात में कोई भी नहीं बता सकता। अगर मनुष्य को ईश्वर के बारे मेंं जानना है तो कई डीटेल्स (जानकारी) मालूम करनी होगी। ईश्वर के बारे में बताने केलिये पूर्वकाल के ज्ञानी लोगों नें जो निशान के तौर पर रख्खे थे वही देवालय है। ईश्वर एक ही है, देवालय भी एक ही है। लेकिन ईश्वर को जानने के तरीके सिर्फ दो ही हैं वहीं एक निराकार और दूसरा साकार तरीका। निराकार ईश्वर के बारे में बताने के लिये निर्माण किया गया देवालय ही **बिना नाक मुख वाला ईश्वर लिंग देवालय।** ज़मीन पर देवालयों का सांप्रदाय लिंग से ही शुरू हुआ था। निराकार,साकार रुपों में लिंग निराकार है तो साकार आलय रुपवाला प्रतिमा से शुरू हुआ। ज़मीन पर दूसरा देवालय **शंख, चक्रवाला पिशानी पर नामम् लगाया हुआ प्रतिमा का आलय।** पूर्वकाल में पूरे प्रपंच में सिर्फ दो ही दो क़िस्म से देवालय रहा करते थे। हज़ार लाख सालों के कालगमन में कई बेहिसाब देवालय बनाये गये।

यह कहसकते है कि ईश्वर के बारे में बताने केलिये निराकार, साकारों के तरीकों से पहले सिरफ दो ही दो देवालयों को ज्ञानी तय्यार करके रख्खे थे तो आज सैकडों के संख्या में देवालय तय्यार हुये है। पूर्व में जो देवालय तय्यार हुये वे अर्थात लिंग, प्रतिमा के आलय ईश्वर को ज़ाहिर करने के मतलब से जुडे हुये हैं तो बाद में जो देवालय तय्यार हुये वे अर्थरहित होगये। पूर्व में देवालय सांप्रदाय तरीके से निर्‌दिष्ट से, इसतरह ही (हमें) बाँधना चाहिये कहकर सोच समझकर बाँधा करते थे। लेकिन आज वैसी निर्‌दिष्टता का पालन कोई नहीं कर रहे हैं। जिसकी जैसी मरज़ी हैं वैसे बाँध रहे हैं। आख़िर में आज ऐसी हालत आगयी कि एक छोटा घोंसला बाँध कर उसमें छोटा सा पत्थर रखने पर भी वह देवालय बन जा रहा है। इसतरह कई प्रकार के देवालय तय्यार हुये तो अब हम ज़रा यह सोचकर देखते हैं कि मनुष्यों में पूर्वकाल में किसतरह की भक्ती रहा करती थी और आज किसतरह की भक्ति मनुष्यों में मौजूद हैं।

ज़मीन पर पूरे देवालय एक हिस्सा है तो, उनके पास जानेवाले भक्त और एक हिस्सा हैं। जैसे गीता में कहा कि भक्तों में चार क़िस्म के भक्त हैं उनके अपनी अपनी भक्ती के प्रकार भक्तों को विभाजित कर के बतासकते हैं। यह कहसकते हैं कि भक्त चार प्रकार के हैं एक आर्थी लोग, दूसरे अर्थार्थी लोग, तीसरे जिज्ञासी लोग, चौथे ज्ञानी लोग हैं। इस ज़माने में आर्थी लोग और अर्थार्थी लोग ज़्यादा हैं। जिज्ञासी, ज्ञानी सिर्फ नाम मात्र केलिए हैं। आर्थी लोग मतलब वे लोग हैं जो केवल आफत के वक्त में ही ईश्वर को याद करते हैं। अर्थार्थी लोग मतलब वे लोग जो सिर्फ पैसे के लिए ही ईश्वर को याद करते हैं। प्रस्तुत काल में सिर्फ आफतों से बचाने केलिये धन हासिल करने केलिये ही देवालयों में मन्नतें माँगे जाते हैं। सब के मन

में ईश्वर के प्रति यही भाव है कि आखिर मंदिर में ईश्वर हैं क्यों? (हमें) आये हुये सारे आफतों से बचाने केलिये और हमारे व्यापारों में लाभ लाकर हमें धनवान बनाने केलिये ही तो है ना! सब यही समझ रहे हैं कि देवालय का मतलब वह एक केंद्र है जिसमें ईश्वर से हम अपने इच्छाओं को बतासकते हैं। ऐसा कह रहे हैं कि इच्छायें हैं इसलिये ही मंदिर जा रहे हैं, अगर इच्छायें नहीं हैं तो मंदिर से हमें क्या काम? उसमें के ईश्वर से हमें क्या काम? इसी भाव (इरादे) से ही नौकरी करनेवाले उनके प्रमोशन केलिये, निरुद्योगी नौकरी केलिये, विद्यार्थी उत्तीर्ण होने केलिये, युवक युवती केलिये, पोलीस रिश्वत केलिये, चोर चोरी करने में आसानी होने केलिये मंदिर में के देवताओं को मन्नतें माँग रहे हैं। ऐसे बहुत से लोग मौजूद हैं जो यह समझते हैं कि ईश्वर उनके काम करने का दर्जा रखनेवाला है, इसीलिये कोई भी ईश्वर को हो नैवेद्य (चढावा) ज़रूर रखना चाहिए, यानि (किसी से कुछ काम करवाने केलिये) जिसतरह थोडा पैसा रिशवत में देकर काम करवाते हैं ठीक उसीतरह ईश्वर को भी पैसों से बाँधे हुए घंटियाँ रिश्वत देकर अपने इच्छायें पूरा करना चाहते हैं। ऐसे भक्त मंदिरों में के देवों को भी ना इनसाफ बना रहे हैं। अपने घर के छोटे बच्चों को भी यह सिखा रहे है कि चलो, अब तुम भी ईश्वर से माँगो कि तुम्हे फलाना चीज़ चाहिए। किसी भी तरह के इच्छायें न रखनेवाले छोटे (मासूम) बच्चा को भी यह सिखा रहे हैं कि ईश्वर से ऐसे माँगो कि तुम्हे खाने के चीजें (चाकलेट, बिस्कट वगैरा) दें। इसतरह देवालयों के पास इच्छाओं की भक्ती आसमान चूम रही हैं। आज के ज़माने में ईश्वर कौन है? देवालय क्या हैं? यह बात शास्त्रबद्ध के साथ, हेतुबद्ध के साथ बताने केलिए ही यह **देवालय के रहस्य** कहनेवाली ग्रंथ हमारे हाथ तय्यार हुयी। किस उद्धेश से

पूर्वकाल में पहलीवाली ईश्वरलिंग, दूसरीवाली शंखु, चक्र, नाममवाली प्रतिमा रख्खे गये उसी उद्धेश को हू ब हू (यदातद) बताने की छोटी कोशीष ही यह ग्रंथ का अंतरार्थ हैं। इस ग्रंथ में हमारा मुख्य उद्धेश यह है कि देवालय के निर्माण में जो गोपुर, द्वजस्थंब, घंटी, प्रतिमा, प्रतिमा दिखानेवाला हाथ, शंखु, चक्र पिशानी पर लगानेवाला नामम् यह सब बताते हुए असल में मनुष्य जिस आराधना को करनी चाहिए उनके मतलबों को बताना ही है। जैसे बडे लोग कहते है ना कि सच बहुत ही कडवा होता है इसीलिए कुछ लोगों को हमारी बात पसंद नहीं आसकती हैं। बीच में आयेहुए आचरण (अमल) उन्हे अच्छे लगने पर वे उन्ही आचरण को सच समझे होंगे। वही तरीके में एक पुस्तक को लिख लेकर कुछ आचरण फलाने पुस्तक में है कहते हुए बिना मतलब वाले आचारों को बोल ले रहे हैं। उदाहरण केलिए कुछ लोगों ने ऐसा लिखलिए कि गाय की घी से बत्तियाँ आर्ती देनी है और गाय की घी पवित्र है। हमने जिस कपूर की आर्ती के बारे में कहा उसके खिलाफ बोललिए। आर्ती का मतलब खत्म होजानेवाली के है कपूर के आर्ती में कपूर खत्म होजाता है इसलिए आर्ती का अर्थ सिर्फ कपूर पर ही लागू होता हैं मगर काटन के बत्तियाँ गाय की घी पर वह अर्थ कैसे लागू होगा। जो काम कर रहे हैं वह धर्म है या अधर्म है यह बात सोचे बगैर ही तमाम पुस्तकों को शास्त्र समझलेकर फलाना शास्त्र में ऐसा कहा गया है (इसलिये हम वैसा ही करेंगे) कहना समंजस है क्या? चाहे कोई कुछ भी बोल ले जो बात वास्तव नहीं हैं उसे छोडदेना हमारे कर्तव्य की तरह रखलेना चाहिए। इसीलिए हम कईलोग अमल कर रहे गलत आचरणों की खंडन करते हुए, वास्तव विषय को समझाते गये हैं। अगर कोई इसतरह कहता है कि बैल बछडा जनी तो मैं ने उसे कोटी में बाँध दिया तो

अंधेपन (मूर्खत्व) से उस बात की यकीन न करते हुए उसकी विमर्शा करके यह साबित करें कि बैल नहीं जनती बल्कि जनने वाली सिर्फ गाय होती है कहना चाहिए। इसीतरह जो लोग यह समझते हैं कि उन्हे जो ज्ञान मालूम है वही सच है उन सबकी खंडन करते हुए यह बताना हुआ कि ऐसी बहुत ज्ञान है जो तुम लोग नहीं जानते। माया गुरुओं से हमें थोडा तकलीफ पहुँचने पर भी सच की प्रकटना करने में कोई भी गलती नहीं हैं समझते हुए हमने यह बताया कि आप लोग जो पूजायें कर रहे हैं उनमें कसीतरह का मतलब या अर्थ ही नहीं हैं और यह भी बतायें कि आप लोगों ने अबतक प्रतिमा को असली भाव के साथ देखा ही नहीं हैं। जब एक विषय या बात मालूम नहीं है तो वह रहस्य या राज़ कहलाता हैं, अब देवालय के विषय मालूम हुए बगैर छुपजाने के कारण वे रहस्य होगये इसलिए ही उन सबको मिलाकर देवालय के रहस्य नाम रख्खा था। हर एक विषय का विवरण देते हुए हत्तल इमकान तमाम रहस्यों को बताने की कोशीष की हैं। ऐसे लोग भी मौजूद हैं जो यह कहते हैं कि आप जो कुछ बोल रहे हैं वह हमारे आगमशास्त्र में नहीं हैं इसलिए हम आप के बातों का यकीन नहीं करेंगे। हमने ऐसा कहीं भी नहीं कहा कि सबको हमारी बात माननी होगी। आपको जो सच लगेगा उसे मानिये। हमारा कर्तव्य कहने के हद तक ही है इसलिए हमने कहा हैं।

त्रिमत के एकैक गुरू

श्री श्री श्री आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर

झूट को हज़ार लोग कहने पर भी वह सच नहीं होता

सच को हज़ार लोग इनकार करने पर भी वह झूट नहीं होता

१) सिद्धाँत – अद्वैत

आदिकर्ता - श्री शंकराचार्य जी

जन्म स्थल - केरला

प्रतिपादन - परमात्मा

(एक)

२) सिद्धाँत – विशिष्टा द्वैत

आदिकर्ता - श्री रामानुजाचार्य जी

जन्म स्थल - तमिलनाडु

प्रतिपादन - जीवात्मा,परमात्मा

(दोनों)

३) सिद्धाँत – त्रैत

आदिकर्ता - श्री आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर

जन्म स्थल - आँध्रप्रदेश

प्रतिपादन - जीवात्मा,आत्मा,परमात्मा

(तीनों)

1. देवालय के रहस्य

देवालय का मतलब ईश्वर की रहने की जगह, यह बात तो सबको समझ मे आता ही हैं। देवालय में ईश्वर की प्रतिमा हैं। लम्बा सा, गिड्डा सा, रंग रूप वाले प्रतिमा को हम सब ईश्वर मान कर उसकी पूजा कर के नमस्कार कर रहे हैं। ब्रह्मविद्या शास्त्र के अनुसार ईश्वर वह है जो सब में फैला हुआ है और वह सब जगह मौजूद है। तो फिर यह शक ज़रूर पैदा होगा कि जब शरीर के अंदर ही रह कर हिलने कि शक्ति दे रहा आत्मा ही ईश्वर है तो, चार दीवारों के बीच में रहनेवाला प्रतिमा ईश्वर कैसे हो सकता है? शास्त्र का वचन यह है कि ईश्वर वह है जो आँखों को दिखनेवाली रूप न रखता हो। तो फिर आँखों को साफ साफ दिखायि देनेवाली प्रतिमा कैसे ईश्वर हो सकती है। इस तरह का सवाल ज़रूर उठ्ठेगा।

पूर्वकाल में ही देवालय बनाये गये थे तो फिर उस ज़माने के ब्रह्मवेत्ताओं ने (वे लोग जिन्होनो ज्ञान से ईश्वर को जान लिया) क्यों देवालय बनायें? जिन लोगों ने यह कहा कि ईश्वर का कोई रूप नहीं हैं वही लोग आकार (शकल बनाकर) के साथ बनाने का कारण कया था? सर्व प्रपंच का और सारे प्रणियों का मालिक (ईश्वर) एक ही है यह बात जानते हुए भी अलग अलग देवालय बनाकर उन में विभूति रेखाओं का ईश्वर, नामों को लगाया हुआ ईश्वर इस तरह अलग करके क्यों दिखायें? जब ईश्वर निर्गुण और निराकार है तो यह साकार प्रतिमायें क्यों? सगुणोपासना क्यों? इस तरह मानव के बुद्धी को कई सवालात पैदा होने पर उन सवालों का सही जवाब नही मिल रहा है। जब जवाब नहीं मिलता हैं तब मानव नास्तिक बनने का मौक़ा है। आज ऐसे बहुत से लोग मौजूद हैं जिन्हे यह नहीं मालूम है कि ज्ञान क्या चीज़ है? इसीलिए सामनेवाला जिस तरह कर रहा है उसे देखकर उसी तरह करते जा रहे हैं। इसी कारण से जो लोग

निराकार, साकार के बीच फरख नहीं जानते और जिन्हे उसका फरख बताने की शक्ती नहीं हैं वैसे लोग इसतरह समझ रहे हैं कि जो वे कर रहे हैं वही पूजा है। जिस ईश्वर की आराधना वे कर रहे हैं वही असली ईश्वर है। इच्छायें माँगना ही अपना काम हैं और उन इच्छाओं को पूरा करना ही ईश्वर का काम है इसलिए ही देवालय बनाये गये हैं, उन में से एक एक देवालय में ईश्वर भक्तों के कामनायें (इच्छायें) जल्दी पूरा करेगा, इसीलिए उन ईश्वरों को ज्यादा उपहार (तोहफ़े), पूजायें हो रहे हैं। चाहे कोई कुछ भी समझें शास्त्र सत्य है और नित्य है। शास्त्र वह है जो शासनों के साथ जुडी हुई हैं और शास्त्र वह है जो सिद्धान्त के रूप में साबित है और शास्त्र वह है जो अनुभव रूप में आया हो। शास्त्र के अनुसार सबके अंदर रहनेवाला ही ईश्वर है, शास्त्र के अनुसार नही दिखनेवाला ही ईश्वर है, तो फिर हमें जो देवालय नज़र आ रहे हैं क्या वे सब निरर्थक है (अर्थात बेकार है)? बहुत ही महनत के साथ, धन व्यय (पैसा खर्च) कर के बाँधे हुए देवालय आखिर क्यों, क्या ब्रह्मवेत्ताओं ने अखल कमी से उन देवालयों को बाँधा हैं? क्या अनादि देवालयों का कुछ मतलब ही नहीं है?...... ज़रूर है। अनादि देवालयों का मतलब संपूर्ण तरीके से है। फिर भी आज उनका सही मतलब कोई नही जानता। पूर्व काल में जिन लोगों ने ईश्वर के बारे में जान लिया उन्होने बडी अखल इस्तेमाल कर के किया हुआ काम ही देवालय है। उसके बावजूद कुछ वक्त (समय) के बाद उनका मतलब पोशीदा हो गया अर्थात उनका असली मतलब छुप गया। यह सब प्राकृतिक रूप से माया का काम है।
"भगवद्गीता ज्ञान योग अध्याय में"

9. श्लो. ***इमं विवस्यते योगं प्रोक्त वानह मव्ययम् ।***
विवस्वान मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवे ब्रवीत ।।

२. श्लो. एवं परंपरा प्राप्त मिमं राजर्षयो विदुः ।
सकाले नेह महता योगोनष्टः परन्तप ।।

भाव : "नाश न होनेवाले इस विद्या को पहले सूरज से कहा था, उसने उस विद्या को मनु से कहा था। मनु ने इक्ष्वाक राजा को बताया था। इस तरह एक से दूसरों को मालूम होते हुए सब को मालूम हो गया। जैसे जैसे वक्त गुज़रता गया वैसा वैसा वह वद्या पोशीदा होगया"। जैसे ईश्वर (परमात्मा) ने कहा वैसे यह प्राकृतिक (सहज) है कि पूर्वकाल में जो रहता है कुछ वक्त के बाद वह गुम होजाता है। इसी कारण से धर्म अधर्म जैसे बदल जा रहे हैं। अर्थ अनर्थ हो रहा है अर्थात मतलब बेमतलब हो जा रहा है। जब धर्म अधर्म में बदल जाते हैं तब उन्हे वापस धर्म में बदलाना कर्तव्य है। जब अर्थ अपार्थ में (गलत मतलब में) बदलजाते हैं तो उसका विवरण देकर असली मतलब (सही मतलब) बताना ही कर्तव्य है। अधर्मों को धर्मों में बदलाना भगवान का काम है तो वे चीज़ें जा बेमतलबी है उनका सही मतलब बोललेना या बताना हमारा कर्तव्य है। भगवद्गीता भक्ति योग अद्धाय में श्लोक १० में **"मत्कर्म परमो भव, मदर्थ मपि कर्मणि कुर्वन सिद्धिमवाप्स्यसि"**, मेरेलिए काम करो। मेरे काम करने से तुझे मेरा सान्निद्य (मुक्ति) मिलेगी। विश्वव्यापि परमात्मा सर्व जीवों का मालिक परमात्मा वही काम से (अधर्मो को धर्मो में बदलाने के काम से) मानव अवतार में आकर जब यह बताया कि यही धर्म हैं तो मैं मानवो में से एक मानव प्रबोधानंद जैसा गुरुप्रसाद पाया हुआ मैं जिनके अर्थ बदल गये वापिस उनका विवरण देना मेरा कर्तव्य समझलिया हूँ। जब ज्ञान प्रबोधा ही मेरा जीवन का लक्ष्य है तो देवालय के रहस्य को समझाना मेरे लक्ष्य का एक हिस्सा हैं।

ईश्वर को तेलगु ज़बान में देवुडु कहते हैं। यह कह सकते कि सब से बडा सवाल और बिना जवाब का सवाल इस दुनिया में एक ही एक है वह ***"ईश्वर (परमात्मा) कौन है"*** क्योंकि देवुडु लफ़्ज़ (शब्द) का अर्थ ही यह है कि ***ढूँढेजाने वाला*** या ***तलाश किये जानेवाला।*** ईश्वर ढूँढेजाने वाला ही है मगर मिलने वाला नही है। ईश्वर का विषय सिर्फ ईश्वर ही जानता है इसलिए ईश्वर ही ज़मीन पर पैदा होकर उसे पाने के लिये जो ज़रूरी इनफरमेशन (Details) चाहिए उसे वही बतायेगा। उस इनफरमेशन (Details) को ही दैवज्ञान कहते हैं। अगर हैदराबाद नगर को पहुँचना है तो मंज़िल (गम्य) के दूर को, मार्ग को, मार्ग में रहनेवाले मोड़ (Turnings) को रास्ते में आढ़े रहने वाले नदियाँ नालों को, ऊँच नीच को दुर्घटना होनेवाले स्थल का इशारा करनेवाले सूचनाएँ रहते हैं। ये सब जानकर उन सब को जब पार कर के जाते हैं तब ही हैदराबाद मंज़िल को पहुंच सकते हैं। इसी तरह ईश्वर तक पहुंचने केलिए, मुक्ती कहलानेवाली मंज़िल तक पहुँचने केलिए कई सूचनाएँ हैं। वहीं ज्ञान सूचनाएँ हैं। मंज़िल तक पहुंचने केलिए जिस तरह रास्ते में कई सूचनाएँ रहते हैं उसी तरह ईश्वर तक पहुंचने केलिए देवालयों में कई सूचनाएँ रख कर ईश्वर (परमात्मा) भगवान के रूप में आकर देवालयों का निर्माण किया है कह सकते हैं। हम लोग यह बात नहीं जानते हैं कि कृत युग में ईश्वर किस के नाम से आया हैं और कौनसे आकार से आया हैं?। इसीलिए हम ऐसा कह रहे हैं कि वे बडे लोग जो बहुत ही ज्ञान वाले थे उन्होने देवालयों का निर्माण किया है।

देवालय ईश्वर के विषय (ईश्वर के बारे में सत्य) बताने वाले सूचना केंद्र हैं। आलय के अंदर का हर भवन निर्माण हर मोड यह बताते हैं कि परमात्मा किस तरह मौज़ूद है। देवालय मनुष्य को ईश्वर

का विषय बतातें हैं तो उसमें के आराधनाएँ वह उद्धेश को बताते हैं जो मानव ने अपने ईश्वर के प्रति रख्खे हो। मनुष्य अपने विश्वास को और अपनी उद्धेश को कार्यरूप में ज़ाहिर करना ही आलय में आराधना के रूप में बनाये गये । नज़र न आनेवाले ईश्वर के विषय नज़र आनेवाले निशानियों के सूरत में, मनुष्य और ईश्वर के बीच संदेशवारधि जैसा देवालय है तो अपने भाव को व्यक्त करने के कार्यों की तरह आराधनाएँ रहना कृतयुग के बडे लोगों ने (ज्ञानियों ने) बनाकर रखे हुए तरीके हैं। यह कहसकते हैं कि ईश्वर ही मनुष्य के रूप में आकर देवालयों के निर्माणों को उसमें के आराधना के तरीकों को बनाया हैं।

उस ज़माने में जिस उद्धेश को देवालय ज़ाहिर करते हैं और जिस उद्धेश को आलयों में के पूजाविधान बता रहे हैं वे आज किसी को भी नहीं मालूम। कृतयुग में शुरू हुए तरीके रहस्य हैं तो कुछ लोग अपने अपने स्वार्थ के लिए पुराने तरीकों से बिलकुल संबंध न रखनेवाले नियमों को लिखलिये, वे बातें जिन का कोई कारण ही नहीं हैं और वे बातें जो बिलकुल शास्त्रीय नहीं हैं उन बातों को शास्त्र का नाम लगाकर कह रहे हैं कि ये सब बातें तो ऋषियों ने बतायीं हैं और ये सारे बातें वेदों में मौजूद हैं। इसतरह कुछ मनुष्य तयार की हुयी आगम्शास्त्र जो असल में शास्त्र ही नहीं हैं, आगम्शास्त्र माया शास्त्र हैं जिस में बतायी गयी बातें भगवान ने कृतयुग में बतायी गयी बातों के विरुद्ध रहते हुए परमात्मा के विषय को संकुचित करदिया।

चाहे अब कौन कुछ भी बोल लें, मानव अपने अज्ञान को देवालयों में भी घुसा कर शैव, वैष्ण कहते हुए भेद दिखाने पर भी, प्राचीन काल में भगवान ने कहीं हुयी बातें आज भी रहस्य ही रहकर मालूम न होने पर भी जैसे भगवान ने कहा कि वापिस अपने धर्म

स्थापित किये जायेंगे वैसा उन धर्मों को बाहर आना ही होगा। वे राज़ें या रहस्य ही अब देवालय के रहस्य कहलाने वाली ग्रंथ के रूप में बाहर आकर आगम शास्त्रों केलिए बडे सवालों के रूप में खडे हो रहे हैं। इस ग्रंथ में आलयों की जानकारी दैवज्ञान की बोधा करते हुए, आराधना के डीटेल्स (जानकारी) मानव की विश्वास को ज़ाहिर करते हैं। दैवज्ञान की बोधा न देनेवाले आलय हो, भक्ती को ज़ाहिर न करनेवाले आराधना हो व्यर्थ (बेकार) है, शास्त्रबद्ध नहीं हैं। यह बात बतानेवाली ज्ञानरूप ही **देवालय रहस्य** है।

आज के मानव, भक्ती के नाम पर अज्ञानमार्ग में चल रहे हैं उस अज्ञानमार्ग को रुकावट की तरह टहरनाही यह छोटी ग्रंथ का भाव है। सिर्फ देवालयों में मन्नतें माँगना ही हमारा विज्ञान नहीं है इसतरह जवाब देना ही इस ग्रंथ का उद्धेश है। कुछ लोग गलती से अज्ञान मर्ग को ज्ञान मार्ग समझ बैठे हैं, उन सबको अज्ञान के रास्ते से मोड कर स्वच्छ मार्ग को बताना ही यह ग्रंथ रचना का लक्ष्य है।

शुरू में जो लोग आत्मज्ञान जानते थे वे लोग कुछ भी न जाननेवाले मानवों को आत्मा के बारे में बताने के लिये जो लोग अज्ञान के अंधकार में है उनको परमात्मा के बारे में बताने केलिए, बिना रूप के, बिना नाम वाले के बारे में बताने केलिए आत्मज्ञान को अणुअणु में जमाकर रखे हुए निर्माण ही देवालय है। देवालय बाहर कैसे भी दिखें उनमें आत्मप्रबोध ही बसी हुयी है। रूप दिखाकर बिना रूप वाले को समझमें आये जैसा करनेवाली ही देवालय है। चार दीवारों के बीच के प्रतिमा को दिखाकर बेहद वाले परमात्मा के बारे में बतानेवाली ही देवालय है। देवालय वे निर्माण है जो बहुत ही ज्ञान रखनेवाले योगी खूब योचना करके परमिनेन्टली परमार्थ बसे हुये जैसा निर्माण किये।

पूर्वकाल में सब मानवों को आत्मज्ञान रहा करता था। लेकिन जैसे जैसे वक्त गुज़रता गया वैसे वैसे मानवों में ज्ञान नाश होकर अज्ञान बढगया। ऐसे समय में ज्ञान शक्ती रखनेवाले ब्रह्मर्षियाँ योचना करके कुछ वक्त के बाद आत्मज्ञान खत्म होजायेगा समझकर, इसबात पर खूब गौर करें कि इस हालत से (मानव) कैसे बचे और ऐसी हालत न आने केलिए कौनसा तरीका ठीक रहेगा? खूब योचना करने के बाद आखिर में देवालयों का निर्माण करने के लिए फैसला करलिया। देवालय के निर्माण में बहुत ही अखल इस्तेमाल कर के ऐसा निर्माण करना शुरू किये कि हर एक चीज़ में भी आत्मज्ञान का ही अर्थ मौजूद हो। इसतरह शुरूकिये निर्माणों में से सबसे पहलेवाला देवालय लिंगप्रतिष्टा से शुरू हुआ।

2. लिंग प्रतिष्टा

जब यह प्रपंच ही नही था तब सिर्फ एक परमात्मा ही मौजूद था। उस हालत में से कुछ वक्त के बाद प्रपंच उत्पत्ति हुआ। प्रपंच उत्पत्ति की सिर्फ एक ही एक शक्ती कारण है, वह है परमात्मा। प्रपंच वह है जो परमात्मा से पैदा हुयी। प्रपंच अर्थात! **प्र** का मतलब **पैदाहोना, पंच** का मतलब **पाँच।** प्रपंच का मतलब पैदाहुए १.आकाश, २.हवा, ३.आग, ४.पानी, ५.भूमी है। ये पाँच भागों को मिलाकर प्रकृती कहना हुआ । ये जानलें कि प्रकृती कहें या प्रपंच दोनो एक ही हैं। प्रकृती के पाँच भागों से कई जीवराशियाँ (प्राणियाँ) पैदाहुये। जीवसाशियाँ पैदा होकर मरने केलिए जो यंत्राँग ज़रूरी है वह प्रकृती से ही बनी हैं। प्रकृती जनित ही यह शरीर है और गुण भी प्रकृती जनित ही है। सर्व प्राणियों के शरीर प्रकृती में ही पैदा होकर, प्रकृती में ही बढकर, प्रकृती में ही लय (नाश) हो रहे है। फिर प्रकृती में ही पैदा हो रहे हैं।

क्या प्रकृती को प्राणियों को पैदा करने की स्वयंशक्ती है? अगर हम इस बात पर गौर करें तो यह मालूम होता है कि प्रकृती को वह (पैदा करने की) ताकत नहीं है। प्रकृती में होनेवाले सब कामों केलिए एक शक्ती की ज़रूरत है। वही परमात्मा की शक्ती । भगवद्गीता राजविद्या राजगुह्या योग अध्याय श्लोक १० में कहा कि

श्लोक १०: मयाध्यक्षेण प्रकृति स्सूयते सचराचरम ।
हेतुना नेन कौंतेय! जगद्विपरिवर्तति ।।

परमात्मा ने कहा कि प्रकृती मेरे आधार से ही ऐसा कर रही है कि सर्व जीवराशियाँ पैदा हो और मरजाये ।इसलिये मैं धुरा (axle) की तरह हूँ। प्रपंच मुझे आधार करलेके ही चक्र की तरह घूम रही है।

ब्रह्मविद्या के शुरु में हम लोगों को यह जानना चाहिये कि असल में हम कौन है?हमारा पैदायिश क्या है?ऐसा ही मरण या मौत क्या चीज़ है? मौत और पैदायिशों का कारण कौन है? कौनसी शक्ती के कारण से ये सब कुछ हो रहा है? इसतरह प्रश्न (सवाल) कर के विवरण करलेने से यह मालूम हो रहा है कि प्रकृती से हमारा शरीर तय्यार हुआ है, तय्यार हुयी शरीर में आत्मा चैतन्य स्वरूप होकर शरीर को हिला रही है। इसलिए यह मालूम हो रहा है कि शरीर को तय्यार कर के एक आकार देनेवाली प्रकृती है। इसीलिए प्रकृती को पूरे जीवों की माता कह रहे हैं और परमात्मा की शक्ती जड शरीर (बेजान शरीरों) को हिलाने की ताकत देकर हिलाते हुये जीवस्वरूप में लारही है इसीलिए परमात्मा को सब प्राणियों का पिता कह रहे हैं। सर्व प्रपंच के लिए माता प्रकृती है, तो पिता परमात्मा है। यह बात जान लें कि यही ब्रह्मविद्या में प्रथमाँश है। सबसे पहले

ब्रह्मविद्या में सबको यह बात मालूम होनी चाहिए कि परमात्मा शक्ति जो मूल है उससे हम सब बाहर निकल कर, प्रकृती के आधार से हम सब शरीरों का धारण करके पैदा होकर मर रहे हैं।

यह बात बताने केलिए ही योगि वेमना जी ने कहा कि! जो पुत्र माता पिता पर दया नहीं करता वह पैदा हुये तो क्या? या मरगये तो क्या? **क्या दमकोरे** (Ant hill) **में दीमक पैदा होकर मर नहीं रहा हैं?** अर्थात जो व्यक्ती परमात्मा, प्रकृति के बारे में मालूम नहीं करता वैसा व्यक्ती पैदा होने पर भी पैदा न होने के बराबर ही है। किसी को मालूम हुये बगैर ही क्या दमकोरे में दीमक पैदा नहीं हो रही है और मर नही रही है? उनका कहने का मतलब यह है कि अगर असली माता पिता को नहीं जानपाये तो हमारी ज़िंदगी भी दीमक की तरह बेकार है। इसीलिए हर जीव (मानव) को यह जानना होगा कि उसके असली माता पिता कौन है? सर्व जीवों के असली माता पिता के बारे में बताते हुए भगवद्गीता में गुणत्रय विभाग योग अध्याय में

श्लो ३। मम योनि र्महद्ब्रह्म तस्मिन गर्भम दधाम्यहम ।
सम्भव सर्वभूतानाम ततो भवति भारतः ।।

श्लो ४। सर्वयोनिशु कौंतेय! मूर्तयः सम्भवन्तिया: ।
तासाम ब्रह्म महद्योनि रहम बीज प्रदः पिता ।।

भाव :- तमाम प्रकृति मेरेलिए स्त्री है। और मैं उसका बीजदाता हूँ। इसलिए समस्त प्राणियाँ हमें पैदा हो रहे हैं। यह बात अच्छी तरह जान लें कि चाहे वह कोई भी प्राणि क्यों न हो किसी भी गर्भ में से किसी भी आकार से पैदा हो अर्थात सर्व प्राणियों की माता प्रकृती है तो मैं बीजदाता उन सबका पिता हूँ। पूर्वकाल में शास्त्र वचन के

प्रकार जिन लोगों ने यह बात जानलिया कि असली माता - पिता प्रकृति परमात्मा हैं उन्होने जानी हुयी यह बात हमेशा याद रहने केलिए लिंग प्रतिष्टा किया ताकि सबको यह बात समझमें आजाये कि असली माता - पिता प्रकृति और परमात्मा है। क्यों कि परमात्मा का कोई आकर नही है इसलिए बिना नाक मुखवाले एक पत्थर को रख कर ईश्वर कहना पहले हुआ। पुरुष अंग के आकार का लिंग इसलिए प्रतिष्टा किये ताकि लोगों को यह मालूम होजाये कि परमात्मा पुरुष है। प्रकृति को स्त्री की तरह पहचानने केलिए स्त्री की योनी की आकर में पाणिमट्ट को तय्यार किया। **प्रकृती और पुरुष दोनों मिलकर है यह मतलब आये जैसा स्त्री अंग की आकार वाली पाणिमट्ट में पुरुष अंगाकार लिंग को प्रतिष्टा किया। पाणिमट्ट के बीच में लिंग को रखने से यह मालूम हो रहा है कि परमात्मा प्रकृति केलिए धुरा है। पाणिमट्ट के ऊपर लिंग को रखने से मालूम हो रहा है कि प्रकृती को अधिष्टान करके परमात्मा है। लिंग का थोडा हिस्सा पानिमट्ट के अंदर, थोडा हिस्सा पानिमट्ट के बाहर दिखने से यह बात मालूम हो रहा है कि परमात्मा प्रकृती के अंदर और प्रकृती के बाहर भी मौजूद है।** इसतरह बडे लोगों ने एक मतलब या अर्थ के साथ रखना श्रृगांर केलिए नहीं बलकि एक आध्यात्मिक रहस्य अर्थात प्रकृति पुरुषों का रहस्य बताने केलिए ही है।

इसतरह प्रतिष्टा करने का मतलब सिर्फ यह बात बताने केलिए ही है कि यह समस्त जगत का मूलकारण प्रकृति पुरुषों का मिलन ही है मगर कुछ और मतलब उसमें नहीं है। सिर्फ यह बताने केलिए ही लिंग प्रतिष्टा किया कि सर्व जीवों की माता प्रकृति है और पिता परमात्मा है। लिंग पर एक कटोरी रख कर उसमें से एक एक

खत्रा पानी लिंग पर गिरे जैसा किया ताकि इससे यह बात मालूम होजाये कि सर्व जीवरासियाँ परमात्मा के चैतन्य से और प्रकृति के ज़रिये एक आकार लेकर पैदा होरहे हैं। लिंग पर गिरा हुआ पानी का खतरा (ड्राप) लिंग से पिसल कर प्रकृति से कम्पार किया गया पानिमट्ट को पहुँच कर वहाँ से एक मार्ग के द्वारा बाहर पड रहा है। इसतरह हर एक पानी का ड्राप भी फिसल रहा है। इस बात के सबूत के तौर पर लिंग प्रतिष्टा पर धारा पात्र (पानी का कटोरा) रखना हुआ कि हर प्राणि प्रकृति पुरुषों से ही पैदा हो रही है। पानी के बिंदुओं को जीवों से कम्पार करके लिंग पर से पानिमट्ट में से बाहर आये जैसा इसलिए किया ताकि यह बात मालूम होजाये कि प्रकृति परमात्मा से ही जीव पैदा हो रहे हैं। नीचे के पानी को ही यानि तालाब से हो, झील से हो, कुंअे से हो लाकर धारा पात्र में रखते हुये हमेंशा हरवक्त लिंग पर पानी गिरे जैसा करते हैं ऐसा करने से यह मालूम हो रहा है कि हर हमेशा जीव मरते पैदा हो रहे हैं। लिंग से पानी गिर कर पानिमट्ट पर से जाना ही सृष्टि का अंतरार्थ है कहते हुए बडोंने निर्माण किया।

अब जो बात बतायी जा रही है वह बहुत ही मुख्य है,सर्व जीवों का अंतरार्थ इसमें बसा हुआ है। परमात्मा का स्वरूप तीन भागों में विभजन (डिवैड) हो कर पूरे प्रकृति में फैलाहुआ है। यह दिखाना ही इसमें का मुख्य सारांश है कि ऐसा फैलाहुआ विधान इसतरह है। परमात्मा प्रकृती से अतीत रहते हुए तीन पुरुषों के रुप में फैलाहुआ है इस बात के तार्काण के तौर पर ही ईश्वर लिंग पर विभूति रेखाओं को तीन की तरह दिखाना हुआ। जैसे भगवद्गीता में पुरुषोत्तम प्राप्तियोग अध्याय में कहा कि एक पुरुष ही तीनो पुरुषों में डिवैडेड (विभाजित) हैं वही मतलब के साथ लिंग पर तीन सुफेद

लिख्खीरें (रेखायें) दिखाना हुआ। इस मतलब से उन लिख्खीरों को सजाना हुआ कि नीचेवाला जीवात्मा है, बीचवाली रेखा वह आत्मा है जो सर्व जीवों में मिल कर है, ऊपरवाला रेखा परमात्मा है। लिंग पर तीन रेखायें रखनाही नहीं बलकि सिर्फ बीचवाले रेखा को चंदन से हो या कुंकुंम (तिलक) से हो ठीका लगाने से उसे एक प्रत्येकता मिली। इसतरह ठीका लगाने का मतलब यह है कि!

एक एक शरीर में एक एक कर के अलग अलग से है। आत्मा सब शरीरों में एक ही अंश की तरह रहते हुये एक एक शरीर में अलग अलग से है। परमात्मा शरीरों में और बाहर पूरा फैल कर है। जीवात्मा, आत्मा सिर्फ सजीव शरीर में ही रहते हैं। परमात्मा सजीव और निर्जीव शरीरों में भी रहता है। जहाँ जीवात्मा रहती है वहाँ आत्मा रहती हैं। इसीलिए आत्मा को कूटस्थ भी कहा गया। भगवद्गीता पुरुषोत्तम प्राप्तियोग में

१६ श्लो द्वा विमौ पुरुषौ लोकेक्षराक्षर एवच ।
क्षर स्सर्वानि भूतानि क्षर उच्यते ।।

लोक में दोनों पुरुष हैं, वहीं क्षराक्षर हैं। क्षर सर्व प्राणियों के शरीरों में मौजूद है। जहाँ क्षर रहता है वहाँ उसके साथ अक्षर रहता है।

श्लोक १७ में कहा था कि यह दोनो पुरुषों से भी अलग, उत्तम और एक पुरुष हैं, उसीको परमात्मा कहते हैं। आत्मा से परे रहता है इसीलिए तीसरेवाले को परमात्मा कह रहे हैं। इसतरह तीन पुरुषों के बारे में बतानाही लिंग पर के तीन रेखाओं की पहचान है। जब जीवात्मा परमात्मा तक पहुँचजायेगा जन्म खतम होजाकर जीव का भाव नाश होकर देवभाव आजायेगा। अर्थात जीवात्मा हरजगह

फैलाहुआ परमात्मा में दाखिल होकर खुद भी शून्य होजायेगा। इसतरह जीवात्मा परमात्मा तक पहुँचना है तो दूसरीवाली आत्मा को किसी भी हाल में मालूम करना होगा। आत्मा को मालूम कर के आत्माज्ञानशक्ती से जन्मो का कारण यानि पूरेकर्म को निर्मूलन करलेने के बाद ही जीवात्मा परमात्मा में मिलसकता है। जीवात्मा जब शरीर से रहता है तब अगर उसने आत्मा के बारे में मालूम करलिए तो, शरीर छोडने के बाद परमात्मा को संदर्शन करले सकता है। इसलिए शरीर से रहते हुए कोई भी परमात्मा को मालूम नहीं करसकते। परमात्मा उन्ही को मालूम होगा जिनका शरीर नहीं रहता। कोई भी जीव हो उसे अपनी ज़िंदगी में आत्मा को ही मालूम कर के ध्यान करना चाहिए। परमात्मा को न ध्यान करसकता है, न पूजा। इसीलिए लिंग पर रहनेवाले तीन रेखाओं में से बीचवाले रेखा को चंदन, कुंकुम लगाकर एक पहचान दी।

स्वच्छ सुफेद रंग से रेखाओं को इसलिए सजाया गया ताकि उससे हम यह पहचान सके कि आत्मायें स्वच्छ और साफ हैं। मुख्य से पानिमट्ट को छोडकर सिर्फ लिंग की ही पूजा करते हैं। इसलिए यह मालूम हो रहा है कि प्रकृति से भी पुरुष ही मुख्य है। ऊपर बयान किये गये तीन रेखाओं के बारे में बहुत से लोगों में भिन्न अभिप्राय है। विमर्शाओं के सामने न ठहरने वाले, बने बनाये हुए कहानियाँ ज्ञान नही है। यह बात साफ जानलें कि सही ज्ञान उसे कहते हैं जो विमर्शाओं का सामना करता हो।

लिंग पर के तीन रेखाओं को धनेषण, धारेशण, पुत्रेषण कहलानेवाले ईषणत्रयों की तरह अभिवर्ण करके बता रहे हैं। बहुत से लोगों को यह नहीं मालूम कि यह बात बिलकुल असत्य है। सत्यासत्य तो सिर्फ विमर्शा से ही पता चलेगा। (सत्यासत्य मालूम होने केलिए

और कोई चारा ही नहीं है) इसीलिए अब विमर्शा करना ही पडेगा। जीव को रहनेवाले गुणों में से १.काम (आशा), २.क्रोध, ३.लोभ, ४.मोह, ५.मद, ६.मात्सर्य कहलानेवाले मुख्य है। उनमें से पहलेवाली आशा (काम) कई क़िस्मों से हैं। खाने पर आशा, कपडों पर आशा, ज़मीन पर आशा, ऐसा कई क़िस्म के आशायें होसकते है। बहुत से

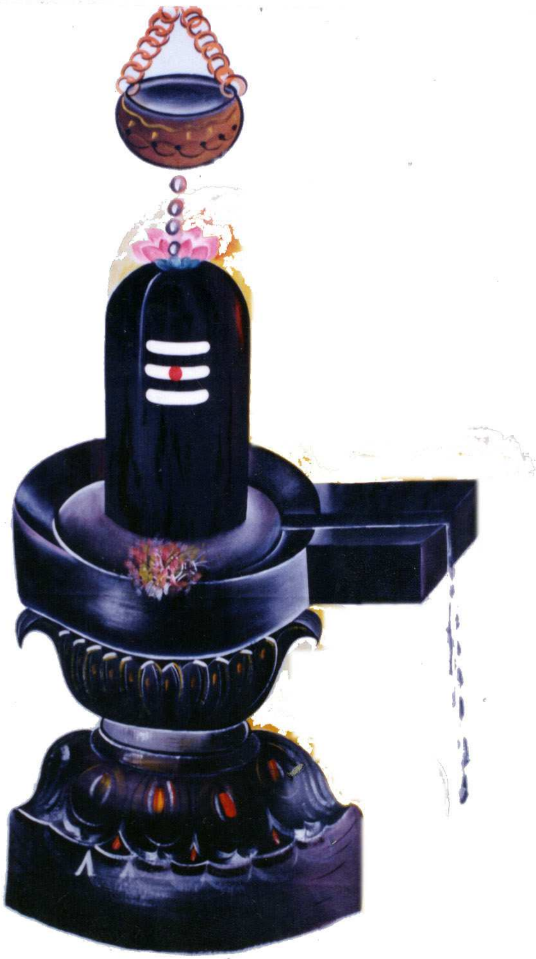

लिंग प्रतिष्टा

लोग यह समझते हैं कि शंकर ने धन पर आशा, बीवी पर आशा, पुत्रों पर आशा को जला कर राख करके उस राख को अपने माथे पर लगालिया, और यह समझते हैं कि उसने विभूति रेखायें इसलिए पहनी क्यों कि उसने यह तीन गुणों पर जीत हासिल की है इसीलिए निशान के तौर पर माथे पर उसने वह रेखायें पहन कर दूसरों को भी यह बताना चा रहा है कि तुम लोग भी इसीतरह यह तीन पर जीत हासिल करो। अगर ऐसी बात है तो इससे साफ मालूम हो रहा है कि शंकर को सिर्फ धन, बीवी, पुत्रों पर आशा नहीं है इसका मतलब बाक़ी सब चीज़ों पर आशाएँ हैं। यह बात कहना समंजस (अच्छी बात) है कि ज्ञानमार्ग में पूरे आशाओं पर जीत हासिल करना ही पडेगा। लेकिन ऐसा कहना कहाँ तक समंजस (ठीक) है कि सिर्फ तीन गुणों पर ही जीत हासिल कीजिये? शंकर को धन पर कोई आशा नहीं है लेकिन ज़मीन और सोने पर तो आशा हो सकती है ना! ऐसाही हो सकता है कि बाक़ी सब पर आशायें हो । ऐसी सूरत में वह कैसे कामदहन हो सकता है? इन सवालों का ठीक जवाब नहीं है। इसीलए धनेषण, धारेशण, पुत्रेषण कहनेवाले यह ईषणत्रय का भाव विभूति रेखाओं केलिए बराबर नहीं होगा। अर्थात वह मतलब सही नही है। असल में तो लिंग को और शंकर को किसी भी तरह का संबंध नही है। वह ऐसा है कि!

पूर्व में परमात्मा के बारे में बताने केलिए लिंग प्रतिष्टा किया गया तो आज उस मतलब को वक्रीभव करके (गलत मतलब में बदल देकर) लिंग को शंकर की तरह कम्पार कर रहे हैं। ईश्वर में और शंकर में बहुत फरख है उसके बावजूद भी आज ईश्वर शंकर हुआ और शंकर ईश्वर हुआ। कोटीश्वर (करोडपति) का अर्थ कोटी का मालिक (अधिपति) है मतलब करोडों का मालिक है। लक्षादीश्वर का

अर्थ लाख का अधिपति है। ऐसाही भोगेश्वर का अर्थ भोग का अधिपति है। योगीश्वर का अर्थ योग का अधिपति है। तो अब साफ तौर पर मालूम हो रहा है कि ईश्वर शब्द का अर्थ अधिपति है । ब्रह्मविद्या में सिर्फ एक परमात्मा को ही ईश्वर कहना हो रहा है जो पूरे प्रपंच का अधिपति या मालिक है। प्रकृति का अधिपति परमात्मा है इसी भाव के साथ लिंग को रखना हुआ तो उसे गले में साँप को धारण किया हुआ या पहना हुआ शंकर से कम्पार करना बेमतलब का काम है।

आदिकाल में जो ज्ञान रहता था आज वह पूरा ज्ञान उल्टा होगया। उसका कारण मत में दरार, स्वार्थ। प्राचीन काल में सिर्फ एक ही एक मत रहता था। जैसे वक्त चलते गया उसके साथ एक ही मत से कई मत बटगये। पहले मत की तरह जो है वह इंदू मत है। वही मत आज हिंदू मत होगया है। पहले इंदू मत में रहनेवाले कुछ जन एक वर्ग या जाति में बदल जाकर वे अपने आप को बडे जतालेने के मक़सद से इसतरह किया कि हमारा शैवमत है, शैव मत का ईश्वर शिव है, वह शिव ही यह लिंग है, यह लिंग की पूजा करने वाले सब हमारे शैव ही है, ईश्वर लिंग की पूजा करनेवाले सब शैव ही है कहने का इरादा लोगों में लाकर उसके लिए जो तबदीलियाँ बदलाव ज़रूरी है उन्होने वे सब तबदीलियाँ किये थे। ऐसा करने में ईश्वरलिंग के सामने नंदीश्वर, सैड में पार्वती को रखना हुआ।

शिव की बीवी पार्वती, वाहन नंदी है। इसलिए अगर इनदोनों को ईश्वरलिंग के साथ संबंध रखें तो ईश्वरलिंग को शिव के नीचे जमा कर सकते है समझकर पार्वती को सैड में, नंदी को सामने रख्खा है। लिंग प्रतिष्टा पहले आदि में ही होकर था। इसलिए पार्वती को खास तौर पर सैड में रख्खा है। लेकिन उसको उस लिंग पीठ में जोड नही सके। इसीलिए कहीं भी हो पार्वती खास तौर पर सैड

में ही रहती है। बाक़ी देवतायों को गौर करें ता शोहर के पीठ पर ही बीवी रहना देखसकते हैं। ऐसा ही उनके अपने अपने वाहन भी वही पीठ में जमाकर रख्खे होंगें। लेकिन पहले से तय्यार हुयी ईश्वर लिंग को कुछ न कर सकके पार्वती को और नंदी को अलग अलग करके रखना हुआ। ऐसा करना ही नहीं बलकि उन चीज़ोंको समर्धन करने केलिए पुराण भी तय्यार किये गये। नंदी को लिंग के सामने थोडे दूर पर रख कर उसे भी एक बनी बनायि हुयी कहानी बनाकर कहना हुआ। बिना आकारवाले ईश्वर के निशान के तौर पर बिना नाक मुख वाले पत्थर को शंकर की तरह वर्णन करने के लिए भी एक कहानी बनाकर ऐसा वर्णन करना भी हुआ कि शाप के कारण से शंकर गुंडु (गोल पत्थर) बनगया।

चलिए, चाहे कुछ भी हो हम यह समझरहे हैं कि अखलमंद इनसान तो इस बात को बहुत ही आसानी के साथ समझजायेंगे कि लिंग को, न पार्वती से किसी भी तरह का संबंध है न नंदी से । यह ज़माने में भी थोडे जगहों पर ईश्वरप्रतिष्टा के देवालयों में पार्वती नहीं है। सिर्फ एक नंदी को लिंग के सामने रहना पहचानसकते है। खासकर पार्वती की मंदिर तयार करने केलिए बहुत ही खर्चा होगा इसलिए पार्वती को छोडकर सिर्फ उस नंदी को हि रख्खे थे जो बगैर मंदिर के भी रहसकता है ऐसे ईश्रर देवालय भी हमें वहाँ वहाँ नज़र आते हैं।

ज्ञान का दिया कभी नहीं बुझता, इसीलिए हम समझरहे हैं कि आज वह ज्ञान बहिर्गत हो रहा है। पूवकाल में बडेलोगों ने बहुत ही कोशीष कर के ज्ञान को मूर्थीभव करके निर्माण कियेगये ईश्वरदेवालय आज शंकर की देवालय जैसा बदलजाना हमारी बदनसीबी है। फिर भी बडोंकी महनत बेकार नहीं होगी। इसीलिए आज भी शिवमंदिर

कहनाही नहीं बलकि ईश्वर की देवालय कहना भी आज मौजूद है। मुख्य से जाननेवाली बात यह है कि शिव, ईश्वर दोनों अलग अलग है। हमने पहले ही बतादिया कि ईश्वर अर्थात अधिपति है। शिव अर्थात यह भाव रखते है कि वह त्रिमूर्तियों में से एक है। त्रिमूर्तियों का अधिपति भी एक ही है। वह एक ही ईश्वर (परमात्मा) है।

3. आकार प्रतिष्टा

(भगवान की रूप प्रतिष्टा)

हमलोगों ने यह बात जानलिया कि आदि में ही ईश्वर लिंग का प्रतिष्टा हुआ। यह सब बिना आकारवाले ईश्वर का विवरण है। बिना आकार के हर जगह फैला हुआ ईश्वर का विषय इनसानों को नहीं मालूम। ईश्वर की बात ईश्वर ही जानता है इसलिए उसकी जानकारी (डीटेल्स) उसे खुद मनुष्य को बताना पडेगा। खुद मानव ईश्वर के बारे में नहीं जान सकता। इसलिए धर्मों को ईश्वर को ही बताना पडेगा। मानव धर्मप्रतिष्टापन नहीं करसकता। बिना रूपवाला ईश्वर अपने धर्मो को खुद बताने केलिए अपने आप एक रुप बनालेकर पैदा होना पडेगा। सब जगह फैल कर रहते हुये उसके साथ साथ एक शरीर में माया से जुडी हुयी जन्म लेकर, शरीर के द्वारा उसे (ईश्वर) जो ज्ञान बतानी है उसे वह धर्मयुक्त से बता कर ही जायेगा। इसतरह पैदाहुये व्यक्ती को **भगवान** कहते हैं। **भग से जो पैदा होता है उसे भगवान कहते हैं।** परमात्मा वह है जो सर्व शरीरो में, सर्व जड पदार्थो में पूरे विश्व में हर जगह फैला हुआ है फिर जब वही परमात्मा एक शरीर में निवास करता है तो उसे या उस व्यक्ती को भगवान कहते हैं।

पूरे विश्व में फैले हुए बिना रूपवाले ईश्वर के बारे में बताने केलिए प्रतिरुप के तौर पर लिंग प्रतिष्टा किये थे। वही ईश्वर जबजब अर्थात जब उसे ज़रुरत पडती है तब अपने विषय को बताने केलिए वह खुद एक शरीर में पैदा होगा यह बात के निशान के तौर पर आकारवाले ईश्वर के बारे में दिखाने केलिए नाक मुख रखनेवाले प्रतिमाओं के आलयों को भी बडों ने तय्यार किया है। प्रपंच में सबसे पहले ईश्वर लिंग के देवालय तय्यार हुये फिर उसके बाद थोडा वक्त गुज़रजाने के बाद वे बडे लोग जिन्हे यह बात मालूम होगया कि परमात्मा ही **मानव के रूप में भी आता है** तो उन्होने वे देवालयों को भी तय्यार किया जिसमें आकारवाले ईश्वर के बारे में बताया जाता हैं। उस ज़माने में लिंग के बाद तय्यार हुआ प्रतिमा की मंदिर श्रीरंग का देवालय है। श्रीरंग की देवालय हमें उस परमात्मा के तरफ इशारा करती है जो गर्भ से जन्म लिया। इसीलिए श्रीरंग का कोई गत (पिछले का) चरित्र नहीं है। चरित्र रखनेवालों के देवालय बाद में बहुत तय्यार हुये मगर श्रीरंग का कोई चरित्र नहीं हैं। श्रीरंग को ऐसा समझना चाहिए कि श्रीरंग वह प्रतिमा है जिसे यह दिखाने केलिए निशानी के तौर पर बडों ने रख्खा कि बिना रूपवाला निर्विकार **खुद परमात्मा साकार रूप में आया है। निर्विकार परमात्मा को लिंग के आकृती में दिखाकर नीचे पानिमट्ट ऊपर विभूति रेखायें धारापात्र को इनतेज़ाम करके बहुत ही अर्थ बताये हुये लोग श्रीरंग पर भी कई पारमर्थिक अर्थ बतायें। उनका आकार ही बडी आध्यात्मिक संदेश हुयी।** इसतरह पूर्व में तय्यार हुये लिंग, श्रीरंग के देवालयों में ईश्वरालय के बारे में पुराण बनाकर शैवों ने ये बोललिये कि यह वह शंकर का आलय है जो त्रिमूर्तियों में से एक है। उनसे अलग (व्यत्यास से) वैष्णव तय्यार होकर ऐसे पुराण तय्यार करके

प्रचार करलिए कि श्रीरंग आलय हमारा है, वह विश्नू जो त्रिमूर्तियों में से एक है उसका आलय ही श्रीरंग का आलय है। शैव बोललेते हैं कि त्रिमूर्थियों में से शिव या शंकर नामपाया हुआ शिव ही महान है तो वौश्णव इसतरह बोललेते हैं कि हरगिज़ नही शिव से विश्नु ही महान हैं। शैवों ने शिव ही बडा है कहते हुये शिवपुराण को

आकार प्रतिष्टा (भगवान का रुप प्रतिष्टा)

शैवो ने तयार करलिया तो विश्नु ही बडा है कहते हुये विश्नुपुराण को वैश्नओं ने तयार करलिया। लिंग ही हमारा मत है कहे जैसा लिंग पर के विभूति रेखाओं को शैवो ने निशान के तौर पर पहनलिया तो वैश्नव हमारा वर्ग अलग है कहे जैसा श्रीरंग के पिशानी पर के नामम् (माथे पर लगानेका टीका) को अपने पाल भाग पर (सर का ऊपरवाला हिस्से पर) अच्छे से लगालिये। इसतरह इंदू मत में पहले शैव कहलानेवाला वर्ग तय्यार हुआ तो बाद में उनसे थोडा व्यतिरेक दिशा में वैष्णवों का वर्ग तय्यार हुआ। लोगों को नामधार मोडीदारों में बदलकर फरख दिखाये। पूर्व में बडेलोग मामूली इनसानों को दैवज्ञान बताने केलिये बहुत ही योचना कर के बिना रूपवाले ईश्वर को, रुपवाले ईश्वर को तय्यार कर के दिखाये तो दैव व्यतिरिक्त माया ने लोगों को औरएक रास्ता पकडाकर साकार निर्विकार में दिखाये गये ईश्वर को वर्गों के रुप में समझमें आये जैसा की है। उस ज़माने में भी और आज भी लिंगाकार का देवालय एक ही है, तो आज नाक और मुख वाले आकार के आलय बहुत से लोगों के नामों से तय्यार हुये। बहुत से वैशणव नामम् वाले ईश्वरों को तय्यार करलिए। पूर्व में उद्धेशपूर्वक से ही एक तरीके के साथ श्रीरंग देवालयों को तय्यार किये तो, बाद में मानव बाक़ी देवताओं के नाम से रख के निर्माण करना तो माया का प्रभाव ही है कहसकते हैं। पूर्व में बडेलोगों ने प्रजाओं को ज्ञान बताने केलिए कृतयुग में ही इस मक़सद से निराकार लिंग का आलय और साकार श्रीरंग का आलय तय्यार किये कि साकार ही निराकार है और निराकार ही साकार है। कृतायुग के पहले अंक के थोडे संवत्सरों (वर्षो) में ही शिवालय को, श्रीरंग के आलय को निम्रित किये। हम इस बात से चिंतित है कि (लोगों को) यह बात तक नहीं मालूम कि पहले देवालय कहाँ निर्मित

हुये। लिंग पुरुष की निशानी है, यह बात बताते हुये कि सर्व प्रपंच केलिए एक पुरुष है जो उसका भर्ता (शोहर) है जगत्‌भर्ता को बताने की लिंग को रख के उसके ऊपर त्रैत पुरुषों की निशानी के तौर पर अर्थात जीवात्मा, आत्मा, परमात्मा के निशान के तौर पर तीन आढ़े रेखाओं को रख्खा है। उसीतरह पुरुषाकार श्रीरंग प्रतिमा को इसलिए बनाया ताकि उससे यह मालूम होजाये कि अगर परमात्मा जन्म लेगा तो पुरुष की तरह ही पैदा होगा। **श्री** मतलब **शुभकरवाली मोक्ष** की सूचना है तो **रं** कहलानेवाला शब्द **मंत्र बीजाक्षर** है। **रं** का मतलब **नाश करनेवाली, ग** का मतलब **गतियाँ** है तो **रंगा** अर्थात **मौत और पैदाइश कहलानेवाले गतियों को खत्म करनेवाला,** कर्म के गतियाँ मिटानेवाला, मोक्ष को देनेवाला इसतरह के अर्थ आनेवाले नामों को रख्खे थे। श्री रंग वह है जिसका कोई चरित्र नहीं है, इसीलिए ज़मीन पर पैदा होकर गती (मरगये) हुये चरित्र रखनेवालों के प्रतिमा न रखते हुये, बिना चरित्रवाला कहीं पे भी पैदाहोकर न मराहुआ श्रीरंग का प्रतिमा रखना हुआ ताकि लोगों को यह मालूम होजाये कि श्रीरंग वह है जो शून्य परमात्मा से पैदा हुआ है। इसतरह बिना चरित्रवाले को रखने में यह मतलब है कि परमात्मा निराकार है, उसका कोई गतजन्म नहीं है, वह तो सब जगह पैलाहुआ शून्य हैं। पैदाहुआ सामान्य व्यक्ती ग्रह विग्रह होसकता है लेकिन जो व्यक्ती पैदा नहीं हुआ वह ग्रह हो, विग्रह हो नहीं होता। इसलिए श्रीरंग की प्रतिमा विग्रह नहीं है। बाक़ी सब प्रतिमायें विग्रह है। पूर्व में इसतरह बिना रूपवाले का एक रूप देकर ये बताये कि परमात्मा भगवान की तरह आसकता है तो जैसे जैसे वक्त गुज़रता गया वैसे वैसे पूर्व में ज्ञानियों ने जिस भाव से यह सबकुछ रख्खा वह पूरा ज्ञान पोशीदा होगया। आज के ज़माने में सब देवालय चरित्र रखनेवालों के ही दिख रहे हैं।

पैदाहोकर न मराहुआ रंगा का देवालय उस ज़माने की निशान के तोर पर कहीं एक जगह मौजूद है तो आज अनेक मरकर पैदाहुये लोगों के देवालय कई नामों से तय्यार हुये। आक़िर में उन मनुजों को भी आलय में रख कर प्रतिष्टा कर के सज़दा करना शुरू किये जो सौ साल के नीचे मरगये। समझमें आरहा है कि ये सब माया का प्रभाव ही है। माया का मुख्य काम ही यह है कि वह परमात्मा के बारे में मालूम न होने देती है, ऐसा करती है कि किसी को भी परमात्मा का ज्ञान मालूम न हो। माया से प्रभावित हुये सारे मनुष्य भक्ति मार्ग में रहने के बावजूद भी यह मालूम हो रहा है कि वह भक्ति परमात्मा पर नहीं बल्कि माया की भक्ती है।

अब भी कुछ देरी नहीं हुयी है। चलिये कम से कम अबसे तो हमारे सांप्रदायों को बडों के संदेशों की इज्ज़त करते हैं। उस भक्ति मार्ग की अनुसार करते हैं जो जन्म राहित्य को देती है। ग्रह की आराधना को छोडकर भगवान की आराधना करते हैं। चलिए, अब हम यह जानते हैं कि आलय में रहनेवाले सब प्रतिमायें ईश्वर के प्रतिबिंब नहीं होते हैं। सांप्रदाय के देवालयों की दर्शन करके उसकी अंतरार्थ को जानते हैं। ज्ञान को प्रदर्शन करनेवाले आलयों में के चिह्नों के अर्थ मालूम करते हैं। आईए यह मालूम करते हैं कि इंदू मत में सनातन धर्म हैं और वह किसी भी मत के विरुद्ध नहीं हैं। जब हमारे विधान के बारे में हम मालूम नहीं कर सके तो ऐसा समझने का मौका है कि यह मत में कुछ नहीं है और दूसरे मतों में कुछ न कुछ है ऐसा समझने से मत बदलने का मौक़ा भी है।

4. मूल की माता बडी माता

वह परमात्मा जो विश्व में सब जगह फैल कर सब में बसा हुआ है उसका न नाम है न आकार यह बात ज़ाहिर करते हुए लिंगरूप का निर्माण किये। वही ईश्वर अपना विषय या अपने बारे ंमें वह खुद मानवों को बताने के लिए अपने भाग (अन्श) के द्वारा आकारवाले भगवान के सूरत में पैदा होगा यह बात ज़ाहिर करने केलिए ही आकार वाले प्रतिमा के रूप का निर्माण किया। इसतरह पहले ईश्वरलिंग का आलय बाद में भगवान की आकार का आलय तयार हुये। अब एक संदेह आकर कुछ लोग ऐसा पूछ सकते हैं कि बहुत सारे औरत देवताएँ भी तो मौजूद है हेना। तो फिर वे सब कब तयार हुये? उसका जवाब विस्तार से इसतरह है।

आदि मद्यँत रहित अर्थात जिसका न कोई शुरुआत है न मद्ध और ना हि अंतिम । और एक तरीके से कहें तो जन्म अर्थात शुरुआद, बढ़ना अर्थात मद्ध, मरण अर्थात अंतिम है। इसी को एक शब्द में इसतरह कह सकते हैं कि बिना जनन मरण वाला है। **आदि मद्यँत रहित** एक नाम नहीं है यह समझ में आ रहा है कि वह शब्द ईश्वर की स्तिथी को और ईश्वर की महानता को बता रही है। प्रभु अर्थात **भु** का मतलब **जो पैदा हुआ, प्र** का मतलब **जो मुख्य है,** सारांशवाली है, महत्व वाली चीज़ है। जो पैदा हुआ वह सबसे अतीत है, पूरे सृष्टि के लिये मुख्य है और बडी है, सारांश रखनेवाली है इसलिए **प्रभू** शब्द भी नाम नहीं है।

पूरे सृष्टि में क्षर, अक्षर कहलानेवाले पुरुष है तो उन दोनों से अतीत, अन्य, उत्तमपुरुष परमात्मा है, इसलिये वही मतलब के साथ ईश्वर को पुरुषोत्तम कहा गया। पुरुषोत्तम भी एक नाम नहीं है यह समझना चाहिये कि वह शब्द सिर्फ ईश्वर की दर्जे को बताती है।

परमात्मा का कोई निवास स्थल नहीं है। जिसका कोई गाँव नहीं है वह पूरे विश्व में छागया है। जिसका न कोई स्थल है न गाँव इसलिए निवास से अतीत है यही मतलब से उसे परंधाम कहे हैं। परंधाम शब्द भी उसका व्यापक बतानेवाला शब्द है मगर एक नाम नहीं है। आत्मा, जीवात्मायें परमात्मा के अंश से हैं । जीवात्मा से आत्मा बहुत ही महान है। आत्मा से अलग रहनेवाला परमात्मा है, पर अर्थात अलग है। यह जानलें कि परमात्मा अर्थात आत्मा भी नहीं है उस से भी अलग रहने वाला है।

प्रपंच में सब को खिलानेवाली, काम करानेवाली को विधि या कर्मा कहते हैं। कोई भी हो अपने स्वयं कुछ निर्णय नही ले सकता कुछ काम नहीं कर सकता। सब कर्माधीन में रह कर उसके प्रकार चलना पडेगा। सिर्फ एक परमात्मा ही कर्माधीन में नहीं है। जैसे कर्म सबको खिलाती है वैसे परमात्मा को नहीं खिला सकती। कर्म परमात्मा के आधीन में है मगर उसके आधीन में परमात्मा नहीं हैं। अगर कुछ करने की ज़रूरत पडी तो खुद परमात्मा ही नर्णय लेकर वह खुद करसकता है। कुछ भी हो कोई भी काम हो वह खुद करसकता है इसलिए यह बात ज़ाहिर करने केलिए ही उसे **खुदा** कहा गया। **खुदा** एक नाम नहीं है वह शब्द यह बताती है कि **स्वयं निर्णय लेनेवाले को खुदा कहते** हैं।

परमात्मा न दिखायि देता है न सुनायि देता है। न कोई इंद्रिय को मालूम होता है यानि वह इंद्रियातीत है। शरीर के साथ रहनेवाला व्यक्ती हो कसी भी तरह के साधना से हो उसे मालूम नहीं कर सकते। योगियों को सहित परमात्मा व्यक्त नहीं होता। वह परमात्मा जो पूरे प्रपंच में फैलकर बाहर, हमारे सामने, हमारे अंदर भी है किसी को भी किसी भी तरीके से गोचर नहीं होता। इसलिए उसको

अव्यक्ता कहा हैं। यह शब्द भी उसके तरीके को ज़ाहिर करनेवाली ही है मगर निर्दिष्ट नाम नहीं है।

राजा उसे कहते हैं कि जो सब पर आदिपत्य रखता हैं। यह बात तो आम ही है कि जो व्यक्ति सबसे और सब कामों में बडा होता है उसे राजा कहते है। राजा वह है जो राज्य पर अधिकार रख कर वह जो चाहता है उसे अमल करने का स्वयं अधिकार रखता है। अपने राज्य में के सारे लोगों में से महान होकर सब पर अधिकार रखके सबको हुक्म देकर अपने अनुचरों के साथ चलानेवाला राजा होता है। परमात्मा केलिये तो विश्व ही राज्य है। वह सब जगह फैलकर सब चीज़ो पर अधिकार रखता है। परमात्मा हर मनुष्य हर जीवरासि पर अपने प्रकृती के द्वारा अधिकार रखते हुए जिसतरह जंत्रवाला खिलोनों को खिलाता है उसी तरह सबको खिलारहा है। प्रपंच में ऐसा कोई है ही नहीं जो उससे बडा हो वैसा ही ऐसी कोई चीज़ प्रपंच में है ही नहीं जो उसकी आज्ञा की अतिक्रम करती हो इसीलिए ही वह सबका राजा है। **राजा** शब्द उसके दर्जे को बतानेवाली शब्द ही है मगर एकनाम नहीं है।

सबसे बडा परमात्मा है, सर्व जगत में पूरे प्रपंच में ऐसा कुछ भी हो या कोई भी हो नहीं है जो परमात्मा से बड़कर हो। इसलिए सबसे बडे परमात्मा के लिए बडा कहलानेवाला शब्द इस्तेमाल किया करते थे। उसी भाव के साथ ही परमात्मा को **तीनों को पैदा की हुयी माता मूल की बडी माता** कहा हैं। जिसने प्रकृति को, तीन गुणों को तयार किया वह परमात्मा है इसलिए यह कहा गया कि **तीनों को पैदा की हुयी।** परमात्मा ही सबका मूल और आधार है इसलिए कहा कि **मूल की ।** सबकेलिए और सब चीज़ों केलिए बडा परमात्मा ही है लेकिन वह परमात्मा औरत है या मर्द यह किसीको नहीं मालूम

इसीलिए परमात्मा को एक जगह **यह** (यानि फीमेल या स्त्रीलिंग) और एक जगह **वह** (यानि मेल या पुंलिंग) में पुकार रहे हैं। क्योंकि परमात्मा ने ही सबलोगों पैदा किया है इसलिये कुछ लोगोंने परमात्मा को माता कहा हैं। क्योंकि परमात्मा सबलोगों केलिये बडा है इसलिए उसे बडी माता कहा हैं। लेकिन इसतरह कहने से लोग ऐसा गलत समझने का मौक़ा है कि परमात्मा औरत है इसीलिए यह बात बताने केलिए ही बडी माता को मूंछें रखना हुआ कि परमात्मा औरत नहीं मर्द हैं। आज भी कहीं बडी माता के मंदिरों में प्रतिमा को मूंछ रखने की सांप्रदाय है। बुलाते हैं तो बडी माता के नाम से, लेकिन मुंह पे देखें तो मूंछ के निशान नज़र आते हैं। इससे किसी को यह समझमें नहीं आता कि आख़िर परमात्मा औरत है या मर्द। इनदोनों में से वह कुछ भी नहीं है यानि न औरत है न मर्द यह बात बताने केलिए ही पूर्व में बडेलोगों ने मूंछें, दांतें रख्खे थे। मर्दजात के जानवरों को दांत रहने के कारण मर्दजात को ज़ाहिर करने वाले दांत मूंछे रखकर बडी माता कहा हैं। इससे पता नहीं वह औरत है या मर्द इन दोनो में से कुछ भी नहीं हैं वही परमात्मा है। पूर्व में ज्ञान जाने हुए बडेलोग अपनी ज्ञान को दूसरों को बताने केलिए बडा कहलानेवाला नाम मुख्य से रख कर, बडी माता का नाम इसलिए रख्खा ताकि लोगों को यह समझमें न आये कि वह अय्या है या अप्पा है और यह निशान के तौर पर नाम रख्खा गया कि वही माता हैं और पिता भी वही है। आज यह भाव लोगों में बिलकुल नहीं हैं इतना ही नहीं बडी माता के भी छः बहने हैं एक भाई है कहकर एक कहानी को बनाकर साधारण देवता के नीचे, क्षुद्र देवता के जैसा जमाकियें। दीदी को हैं इसलिए बहनों को भी रहना चाहिए इसतरह समझकर सुंकलम्मा, मारेम्मा, पोलेरम्मा, माचम्मा, पोचम्मा, मैसम्मा कहलानेवालों को कुछ जगह चाँदी के मूंछे दांत रखलेना भी देख रहे हैं। ये सब ग्रामदेवताएँ

हैं तो इन में बडी माता को मिलाना गलत बात है। सात दीदी बहने रहना सच ही है मगर बडी माता इन में से नहीं हैं। एल्लम्मा कहलानेवाली ग्रामदेवता को मिलालिए तो १.सुंकलम्मा, २.मारेम्मा, ३.एल्लम्मा, ४.पोलेरम्मा, ५.माचम्मा, ६.पोचम्मा, ७.मैसम्मा इन सबके वास्तव में नाम है मगर यह जान लें कि बडी माता का शब्द नाम नहीं हैं। यह समझमें आयेगा कि सब पर महानता को बतानेवाली परमात्मा की निशानी के सूरत में हैं। परमात्मा औरत और मर्द से अतीत है इसलिए बडी माता को दांत और मूंछ रख्खे हैं। सब तरीकों से परमात्मा को बडा कहलाने का शब्द बराबर होजायेगा समझकर पुरुषोत्तम शब्द में उत्तम का शब्द विशेषार्थ बताये जैसा, बडी माता, बडे भाई के शब्द में बडा कहलानेवाला शब्द विशेषार्थ बता रहा है। इसलिए यह कह सकते हैं कि सर्व लोकों केलिये माता पिता दोनों परमात्मा ही है इसलिए बडे का शब्द उस के लिए बराबर होजायेगा। माता पिता सब वही है यह बात बताने केलिए ही शब्द बडी को माता को जोड़ कर बडी माता कह कर माता के तरफ इशारा करते हुए मूंछें रख कर पिता के तरफ इशारा करते हुए बडी माता कह कर तसवीर को दिखाये थे। बडी माता को मूछें रख सकते है मगर सुंकलम्मा वगैरा ग्रामदेवताओं को मूछें नहीं रखनी चाहिए। इलाखों (प्रांतों) के हिसाब से बाखी देवताओं के नाम बदलेरहते हैं मगर बडी माता एक नाम नहीं हैं इसलिए बडी माता कहना न बदलते हुए कहीं भी हो बडी माता हीं हैं। आज के ज़माने में बिला मूंछवाले बडी माता के आलयों को भी तयार किये। यह सांप्रदाय के विरुद्ध हैं, अर्थरहित हैं।

इसतरह औरतदेवता के नाम से पहले देवालय हुए तो कालक्रम में कई औरतदेवताओं कों मनुष्यों ने तयार करलिया। पहले

जो तयार हुए वे देवालय अर्थ के साथ जुडे हुए हैं मुख्य से ईश्वरालय,बाद में रंगा का आलय, उस के बाद बडी माता के आलय तीन ही है तो आज कई सैकड़ों के देवालय अर्थरहित से तयार हुए हैं। ऐसे बने हुए आलयों के बारे में मनुष्य ही पुराण लिखलिये। कुछ न कुछ एक बनायी हुयी कहानी लिखकर यह फलाना पुराण का अंतर्गत है कह कर अष्टादश पुराणों में किसी न किसी एक पुराण से अनुसंधान किया। इसतरह कुछ लोग बनायीहुयी कहानियों के पुराणों को बोलने की वजह से, और कुछ लोग कुछ न कुछ लिख के उसे शास्त्र का नाम रखने से देवालय में पहले के उद्धेश खत्म होकर, भक्तों में भी पिछले के भाव खत्म होजाकर यह समझरहे हैं कि ईश्वर मुक्ती के लिए नहीं बल्कि सिर्फ इच्छायें, मन्नतें पूरा करने केलिये ही है। यह जान नहीं पाये कि देवालय दैवज्ञान को बताने के पुल (वारधि) जैसे हैं। उसदिन त्रेतायुग में राम के मंदिर में शुरुहुए आलय बाद में आँजनेय (हनुमान) का, फिर नरसिंहस्वामी का, विघनेश्वर का, इसतरह आज फ्रेश से सायिबाबा का, अय्यप्पस्वमी तक तयार हुए। पता नहीं भविश्य में न जाने कितने तयार होंगे।

देवालय सिर्फ कुछ मुख्य प्रदेशों में ही रहा करते थे। पुर्वकाल में मुख्यक्षेत्र पुकारेजाने वाले कुछ जगहों में ही रहते थे। त्रेतायुग में राम के बाद आर्य प्रभाव के कारण सभी गावों में राम के देवालय निर्माण कियें थे। त्रेतायुग से पहले कृतायुग में ईश्वर के आलय,रंगा के आलय और पेद्दम्मा के आलय बहुत ही दूरजगहों में दिखायी देते थे। हिमाचल से कन्याकुमारी तक पाँच छः ईश्वरआलयों से ज्यादा नही रहते थे। उतनी ही संख्या में रंगा के आलय रहते थे। पाँच छः से ज्यादा पेद्दम्मा के आलय भी नहीं रहते थे। कहीं भी अगर कुछ आलय रहता है तो वह गाँव के बाहर दूर पहाड़ों पर हो, जंगल के प्रांत में हो, समुद्र के किनारे हो, नदियों के पास हो रहा करती थी।

गाँव में कोई आलय नहीं रहता था। हर एक छोटे गाँव में भी गाँव के बीच में **बोड्डुरायि (शिव लिंग आकार में रहनेवाला गोल पत्थर)** (बोड्डु मतलब तेलुगु ज़बान में नाभि है,रायि मतलब तेलुगु भाषा में पत्थर है) नाम से एक गुंडु (पत्थर) रहता था। उस ज़माने के लोगों को उस के बारें में पूरी जानकारी मालूम था, आज हमें हीं वह बात मालूम नहीं। इसलिए उस के बारे में मालूम करते हैं। पूर्वकाल में एक गाँव को जब तयार किया करते थे तो पहले एक बोड्डुरायि को गडाकर उसके गोल एक गाँव का निर्माण करलेते थे उस बोड्रायि को गाँव में ऐसा रखते थे कि चाहे किधर से भी देखलो गाँव के बीच में दिखे । इसतरह रखने के पीछे उनका उद्देश यह है कि परमात्मा सर्व प्रपंच का मूलकारण और धुरा (Axle) है और उसी को आधार बनालेकर प्रकृति परिभ्रम कर रही है। उसी उद्देश से बोड्डुराई को बीच में रखकर, उसी को परमात्मा समझ कर, गाँव को प्रपंच समझकर बाँधते थे। इनसान को बीच में बोड्डु (नाभी) रहती है। नाभी के आधार से ही माता के पेट में बच्चा बडा हो रहा है। शरीर पहले तयार होने केलिए नाभी ही मूलाधार है। प्रपंच का मूलाधार परमात्मा ही है। इसलिए गाँव के बीच में रखागया पत्थर को बोड्रायि का नाम दिया गया। बोड्रायि पृथ्वी में आधा गाडकर आधा ऊपर दिखे जैसा रखा हुआ होता है। बोड्रायि ईश्वरलिंग का आकार में रहता है। मंदिर में का ईश्वर पाणिमट्ट के साथ रहता है। बीच गाँव का बोड्रायी (बोड्डुरायी) बिना पाणिमट्ट का ईश्वरलिंग की तरह दिखता है। पाणिमट्ट न होने के कारण ज़मीन मेँ दफ़नाया हुआ गोल पत्थर के जैसा दिखता रहता है। प्रपंच केलिए आधार परमात्मा के बारें में बतानेवाली निशान ही बोड्रायी है इसीलिए उसे पोतुलय्या भी कहना हुआ ताकि उससे यह बात ज़ाहिर हो कि वह पुरुष है। पोतुलय्या अर्थात पुरुषोत्तम है। क्योंकि वह सर्वप्रपंच का सृष्टिकर्ता है इसीलिए

गाँव से पहले बोड्रायी रखकर बाद में गाँव निर्माण करते थे। बोड्रायी इसलिए कहा गया क्योंकि वह गाँव केलिए आधार है, पहले एक बोड्डुराई (गोल पत्थर) को गाढ़ कर उस के गोल गाँव का निर्माण करते थें। चाहे किधर से भी देखें गाँव के बीच में दिखे जैसा बोड्डुराई को रखते थे। एसे रखने में बडेलोगों का उद्देश गाँव केलिए मूल है और नाभी जैसी हैं। बोड्रायी को पोतुलय्या इसलिए कहा गया ताकि उससे यह बात मालूम होजाये कि पूरा गाँव प्रपंच है और बीचवाला पत्थर परमात्मा पुरुष है और पुरुषोत्तम है। इसलिए यह कहसकते हैं कि बोड्रायी में पोतुलय्या परमात्मा का भाव नज़र आरहा है।

5. सात द्वार

देवालयों में सात द्वार बहुत ही विशिष्टता रखते हैं। आलय के सामने ही बडा ऊँचा सा गोपुर रहता है, वह गोपुर के ऊपर नीचे से ऊपर तक सात द्वार निर्माण करके रहते हैं। ऐसा ही गोपुर को पार कर के अंदर जाने के बाद गर्भगुडी के प्रतिमा तक सात द्वार पार करनी होती हैं। अब हम यह मालूम करते हैं कि पहले ही मौजूदा गोपुर के सात द्वारों का, इसीतरह गर्भगुडी के सामने के सात द्वारों का क्या मतलब है और पिछले ज़माने में बडेलोग किस उद्देश से गोपुर के ऊपर, गुडी (मंदिर) के सामने सात द्वार रख्खे हैं। हमारे शरीर में साढेतीन लाख नाडियों में से ७२ हज़ार नाडियाँ मुख्य हैं तो उसमें से दस शिरोनाडिया प्रामुख्य हैं तो उनसे भी मुख्य तीन है। उनके नाम ही इड पिंगल सुशुम्न नाडियाँ कहते हैं। उन्ही को सूर्य चंद्र ब्रह्म नाडियाँ भी कहते हैं। शरीर में दस शिरोनर यही तीन नाडियों से शुरु हुए। और शरीर में के हर एक छोटी नाडि भी इन तीन

नाडियों से ही अनुसंधान होकर है। शरीर में पूरी नाडिव्यवस्था केलिए आधार सूर्य चंद्र ब्रह्म नाडियाँ हीं हैं। सूर्य चंद्र ब्रह्म नाडियों में अति मुख्य ब्रह्मनाडी ही हैं। ब्रह्मनाडी में हीं आत्मा निवास कर रही है। अर्थात ब्रह्मनाडी को आधार बनालेकर वहाँ से अनुसंधान नाडियों के द्वारा पूरे शरीर में फैलरही है। ब्रह्मनाडी में रहनेवाली आत्मा नाडियों के द्वारा अपनी शक्ती को पूरे शरीर में फैलाकर शरीर को हिला रही है। यह मालूम होरहा है कि शरीर में रहनेवाले जोड आत्माएँ जीवात्मा, आत्माओं में से आत्मा ब्रह्मनाडी में मौजूद हैं।

देह ही देवालय है, आत्मा ही ईश्वर है बडों की इस वाक्य के प्रकार यह मालूम हो रहा है कि शरीर के अंदर ब्रह्मनाडी में रहनेवाला आत्मा ही ईश्वर है। तेरे शरीर में तू जीव है तो तेरे शरीर में रहनेवाला आत्मा ही ईश्वर है। लोग कहते हैं ना कि **जीवोदेवो सनातनः** इसीतरह शरीर में हमेशा जीव, ईश्वर मौजूद हैं। वह परमात्मा जो देवों का देव हैं वह भी आत्मा से अलग सा शरीर में ही मौजूद हैं। शरीर को छोडकर मुक्ती पाने के बाद ही परमात्मा मालूम होगा। मुक्ती पानेसे पहले ही आत्मा को मालूम करसकते हैं। आत्मा को दर्शनकरने को ही दैवदर्शन कह रहे हैं। दैवदर्शन के संबंध का परिज्ञान बतानेवाली ही देवालय है। इसीलिए देवालय में सात द्वार शरीर में दैवदर्शन के निमित्त संदेशार्थ के तौर पर निर्माण किये गये। गीता में भगवान भी बताया था कि जिसतरह सूरज आकाश में रह कर अपने किरणों से पूरे प्रपंच को रोशनी देता हैं उसीतरह आत्मा ब्रह्मनाडी में रह कर पूरे शरीर को ताकत पहुँचा रही हैं। हमने बयान करलिया कि शरीर में ईश्वर कहलानेवाली आत्मा ब्रह्मनाडी में मौजूद है। आकाश में सूरज कहाँ है? अगर ऐसा पूछने पर कहते हैं कि फलाना राशि मे मौजूद है उसीतरह शरीर में आत्मा कहाँ है?

यह पूछने पर कहसकते हैं कि ब्रह्मनाडी में फलाना जगह मौजूद हैं। आकाश में सूरज बारह राशियों में से कोई न कोई एक राशी में रहता हैं। उसीतरह शरीर में आत्मा कहाँ हैं पूछने पर यह बताना पडेगा कि ब्रह्मनाडी में फलाना जगह मौजूद है। इसतरह बोलने केलिए पहले ब्रह्मनाडी के बारे में पूरा मालूम होकर रहना चाहिए। शरीर में ब्रह्मनाडी कहलानेवाली सर से शुरुहोकर गुद स्थान तक के मध्य भाग में फैली हुई है। स्पैनल कालम् (मेरुदण्ड) की नाडी होने से उसे स्पैनल कार्ड (मेरुरज्जु) भी कहते हैं। यह कहसकते है कि स्पैनल कार्ड या ब्रह्मनाडी सात भागों मे विभाजित हैं। एक एक भाग में एक एक नाडीकेंद्र है। अर्थात ब्रह्मनाडी एक ही होने पर भी उसमें सात नाडीकेंद्र मौजूद है। उन्ही को कुछ लोग सात पद्मों (कमल) की तरह बोललेते हुये एक एक पद्म पर एक एक ईश्वर है कहते हैं। वास्तव मे ब्रह्मनाडी में सात नाडीकेंद्र मौजूद है मगर वहाँ न पद्म कहलानेवाले फूल हैं न देवतायें हैं। ब्रह्मनाडी में आत्मा शिरस में रहनेवाले सातवें नाडीकेंद्र में रहते हुए बाक़ी छः केंद्रों में अपनी ताकत ही भरा कर पूरे सात नाडीकेंद्रों के द्वारा शरीर को चलारही है। मुख्य से वह श्वास (साँस) जो हमारे शरीर में हम जीने केलिए ज़रूरत है उस श्वास को ये सात नाडी भाग चलारहे है। जब से पैदाहुए थे तब से मौत तक जीवात्मा का आयू (उर्म) श्वास के रूप में ही रहता है। जनम से लेकर मरण तक सातकेंद्र ही एक के बाद एक श्वास को घुमा रहे हैं। जीव शरीर में रहने केलिए श्वास चलना ज़रूरी है, श्वास चलने के लिए २४ घंटे ब्रह्मनाडी में केंद्र काम करना पडेगा। इसलिए यह मालूम होना चाहिए कि हर जीवरासि केलिए साँस को चलानेवाला उस शरीर में रहनेवाला ईश्वर ही है।

एक दिन के लिए २१,६०० साँसें चलना पडेगा तो वे साँसें इसतरह सातकेंद्रों के द्वारा होरहे हैं। नीचेवाला नाडीकेंद्र शरीर में

गुदस्थान के बराबर स्पैनल कालम् के ब्रह्मनाडी में मौजूद है। उस नाडीकेंद्र का नाम (१) आधार रख्खा। आधार नाडीकेंद्र के द्वारा ६०० सँासें होते हैं। आधार नाडीकेंद्र से कुछ नरें (नस) शुरु होकर पेपडों तक फैलकर रहने से आत्मा अपनी शक्ती से पेपडों को हिलाते हुए उच्छ्वास निच्छ्वासा को पैदा कर रही है। इसी तरह लिंग के स्थान के बराबर और एक नाडीकेंद्र मौजूद है। उस नाडीकेंद्र का नाम (२) स्वादिष्ठान रख्खा। स्वादिष्ठान नाडीकेंद्र के द्वारा ६००० सँासें होरहे हैं। बादवाला केंद्र नाभी के स्थान के बराबर है। उसे (३) मणिपूरक नाम दिया है। यह केंद्र द्वारा ६००० सँासें चलते हैं। ऐसा ही बादवाला केंद्र हार्ट के बराबर स्थान पर हैं। उसका नाम (४) अनाहत रख्खा। अनाहत नाडीकेंद्र के द्वारा भी ६००० सँासें होते हैं। पँाचवा केंद्र कंठ के बराबर है, (५) उसे विशुद्ध कहते हैं। यह केंद्र के द्वारा १००० सँासें हो रहे हैं। बाद में छटा केंद्र (६) आग्नेय कहला रही है। उसके द्वारा १००० सँासें हो रहे हैं। अब सबसे मुख्यवाला सातवँा केंद्र है। यह केंद्र में ही आत्मा निवास होकर है। यह केंद्र का नाम सहस्त्रार है। सहस्त्रार के द्वारा भी १००० सँासें हो रहे हैं। यह समझना चाहिए कि दिमाग का हिस्सा ही सातवँा केंद्र हैं। यह बात जानलें कि हर दिन २१, ६०० सँासें चलाते हुए शरीर को ताकत देते हुए आत्मा ही नींद में हो, होश में हो कई काम कर रही है। सात नाडीकेंद्र के द्वारा ही शरीर में काम हो रहे हैं और और सँासे चलरही है और उनके द्वारा ही मनुष्य के ज़ीवित का नाटक चल रहा है यह बात बताने केलिए ही सात द्वारों को देवालय पर रखके दिखाये। आत्मा को सातवें द्वार पर इसलिए रख्खा गया क्योंकि जब मानव शरीर पर ध्यान छोडकर सातवें केंद्र पर ध्यान रख्खेगा तो तब जाकर उसे वहँा के आत्मा के बारे में मालूम होगा।

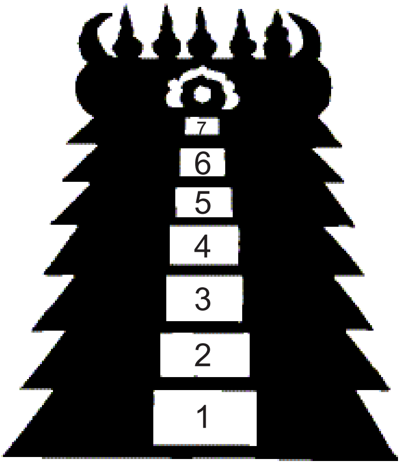

सात द्वार

हमने यह कहा था ना कि जब शरीर ही देवालय है तो आत्मा ही ईश्वर है। वह आत्मा जो ईश्वर है शरीर को ताकत देकर हिलाते हुए बल, अबल की तरह रहनाही नहीं बल्कि आरोग्य, अनारोग्यों को भी देरही है। शरीर अंतर्गत में कई काम करते हुए बाहर नज़रआने वाले बल, अबल आरोग्य, अनारोग्यों को भी कर्म के प्रकार दे रही है। बल (ताकत) अबल (कमज़ोरी) सात नाडीकेंद्रों के द्वारा मिल रहे हैं तो आरोग्य, अनारोग्य शरीर में के सात ग्रंधों के द्वारा मिल रहे है। आत्मा ब्रह्मनाडी में सातवें केंद्र में निवास करते हुए शक्ती देतेहुए और ग्रंधों में भी निवास कर रही है। ग्रंधों में छः शरीर के अलग अलग हिस्सों में हैं तो सातवाँ ग्रंधि शरीर में आइब्रोस के बीच ऊपर के हिस्से में समतल से सर के बीच में मौजूद है। सातवें ग्रंधि को ग्रंधिराज कहते है। यह ग्रंधिराज में भी आत्मा निवास करते हुए बाक़ी छः केंद्रों को अपनी शक्ती को किरणों के द्वारा प्रसरित करते हुए सारे ग्रंधियों को काम कराते हुए ग्रंधियों के रस के द्वारा आरोग्य, अनारोग्यों को दे रही है। शरीर में कर्म के प्रकार कामों का अनुभव

और कर्म के प्रकार आरोग्य का अनुभव जीव को होता है। इसलिए काम होनेकेलिए जो ताकत ज़रूरी है वह नाडीकेंद्रियों के द्वारा ब्रह्मनाडी से और ग्रंधियों के द्वारा ग्रंधिराज से आत्मा की शक्ती (दैवशक्ती) प्रसरित कर रही है। शरीर में दैव दो तरीकों से जीव के ओर अपना कर्तव्य पूरा कर (भी) रही है। इसलिए देवालयों में दो तरीकों से ऊपर सात द्वार, अंदर सात द्वार रखके दिखाये। छः नाडीकेंद्र ठेहर जाकर शरीर का ध्यान जाकर जब सातवें केंद्र में लग्न होता है और शरीर में छः ग्रंध ठेहर जाकर जब सातवें ग्रंध मे ध्यान रखते है तो शरीर में मौजूदा ईश्वर मालूम होगा। यह दो तरीके मन के स्तिरथा पर आधारित है इसीलिए उसी मक़सद से द्वारों को दिखाये गये। ताक़त हो, आरोग्य हो यह दोनों का कारण तेरे अंदर का ईश्वर ही हैं वह ईश्वर तेरे शरीर को इसतरह अधिष्टान कर के हैं यह बात बताने केलिए ही ऊपर अंदर दो तरीखों से द्वार रख्खे हैं। तिरुपति में ऊपर के सात द्वार अंदर के सात द्वार देखसकते हैं।

6. गोपुर

हमने यह बयान करलिया कि देवालय में गोपुर उसके सात द्वार रहते हैं। गोपुर के बीच में नीचे से ऊपर तक द्वार रह के सात भवनों की तरह दिखता है। इतनाही नहीं गोपुर के नीचे से ऊपर तक अर्थात सात भवनों की लम्बाई तक गोल कई तसवीरें चित्रकिये हुये होते हैं। वह प्रतिमाएँ श्रिंगार से लेकर भक्ती तक, दोस्ती से लेकर दुशमनी तक, शादी से लेकर संतान माँगने तक वायिद्य बजाना नाट्य करना घोडे चढकर फिरना युद्ध करना बीवी शोहर भक्ती से रहना श्रिंगार में कई भंगिमायें वगैरा और भी बहुत मानव के जीवित

में संभव होनेवाले कई संघटनाएँ सब दिखाये जैसा रहता है। इसतरह जीवित के कई संघटनाओं के दृश्यों को चित्र करने में पूर्वकाल के बडों का क्या उद्धेश है अगर हम इस बात पर योचना करें तो थोडा विवरण मालूम हो सकता है।

तसवीरों के रूप में गोपुर पर बनाये गये सारे दृश्य मानव के जीवित (जीवन) में होनेवाले ही हैं। जब से पैदा हुआ, शिशुदशा से लेकर आख़री मरण तक होनेवाले सब काम शरीर में ब्रह्मनाडी में नाडीकेंद्रों के द्वारा आत्माही करा रही है। शरीर में ऊपर से नीचे तक फैलेहुए ब्रह्मनाडी के द्वारा ही यह सब काम हो रहे हैं और ब्रह्मनाडी में ऊपर से फैलेहुयी आत्मा ही यह काम होने केलिए चैतन्य दे रही है। यह बात बताने केलिए ही गोपुर पर नीचे से ऊपर तक कई संघटनाओं के चित्रों को रख्खे हैं। देवालयों में ईश्वर के तसवीरें होनी चाहिए मगर नाट्य करने के, युद्ध करने के स्त्री पुरुष के श्रृंगार करने वाले तसवीरें क्यों है? अगर इसतरह का सवाल जब पैदा होता है तो उसका जवाब ढूँढने पर यह मालूम होता है कि हर काम का हर हरकत का सब कर्म होने केलिए आत्मा ही आधार हैं। यह बात बताने केलिए ही गोपुर पर कई तसवीरें सात द्वारों के गोल सर्व कार्य आत्मा से ही हो रहे हैं। गोपुर पर अनेक प्रतिमाओं को रखने के पीछे बडों का उद्धेश यह है कि शरीर में के ईश्वर के कर्तव्य को (एक न एक दिन तो इनसान ज़रूर) मालूम करेंगें।

कई प्रकार के तस्वीरवाले गोपुर को गर्भगुडी के आगे ही क्यों रखना चाहिए? यह एक संशय है तो, अगर आत्मा को, आत्मा के कर्तव्य को बतानेवाली ही गोपुर है तो गुडी (मंदिर) के सामने हो या मंदिर के बाज़ू में हो रखसकते हैं ना! या तो मंदिर के

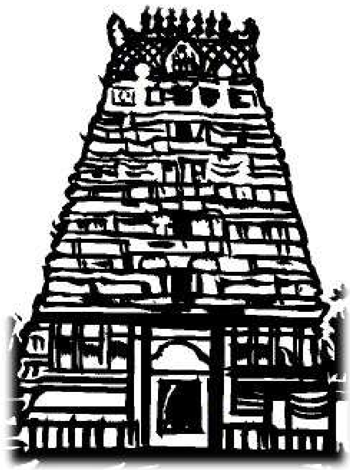

गोपुर

पीछे रख सकते थे ना? इसतरह के सवाल उत्पन्न होते हैं। अब हम उसका जवाब क्या है देखते हैं। गोपुर पर तसवीरें रखने का उद्धेश अगर आत्मा का विधान बताने के लिए ही है तो गोपुर को और उसके सैड में मंदिर को बाँध सकते थे ना! इसतरह मंदिर के सैड में न बाँधेहुए मंदिर के सामने बाँधने में और एक तरीका नज़र आरहा है। मंदिर के सामने गोपुर है तो मंदिर में जानेवाले गोपुर को पार करके जाना होगा। वही अगर सैड पर हो तो गोपुर पार करके जाने का मौका नहीं रहेगा। मंदिर के सामने गोपुर रहने के कारण से ज़रुर उसको देखने के बाद ही मंदिर दिखेगा। अगर ऐसा नही रहा अर्थात सैड में रहने से गोपुर को देखे बगैर डैरेक्ट मंदिर को ही भक्त देखसकते हैं। इस कारण जो बात मंदिर में जानेसे पहले मालूम करनी चाहिए उसे जान नहीं सकते। यह बात मालूम नहीं होगा कि आत्मा या ईश्वर किस तरह शरीर में मौजूद है इतनाही नहीं बलकि और एक विधान (तरीका) भी मिस हो जायेगा। वो विधान यह है कि!

गोपुर पर कई तसवीरें होते हैं ना! उनमें से पहले यह चीज़े दिखायि दिये जैसा निर्माण किये हुए होते हैं जो हमारे मन को चंचल करते हो, जो बातें भूलगये उन्हे याद दिलाते हो, आसानी से मन को आकर्षित करते हो। श्रृंगार पुरुषों के लिए श्रृंगार के तसवीर युद्ध प्रियों केलिए जंग के तसवीरें, संगीत के प्रयों केलिए वायिद्य के चीज़ें इसतरह कई तसवीरें कईलोगों को दिखते रहते हैं। सब क़िस्म के लोगों को सब तसवीरें दिखे जैसा गोपुर का निर्माण रहता हैं। देवालय को जानेवाले हर एक को भी पहले गोपुर कों दर्शन करके फिर बाद में ईश्वर की दर्शन करनी हैं। सब लोगों को पहले जो देखनी हैं वह गोपुर ही है इसीलिए मंदिर के सामने ही गोपुर का निर्माण करके रख्खें हैं। जो लोग मंदिर गये वो सामनेवाली गोपुर को जब देखते हैं तो उनके ऊपर तसवीरें दिखते हैं। जिसे जिस पर श्रद्धा रहता हैं उन्हें वे तसवीरें दिखने के कारण मंदिर के सामने गये हुए लोगों को उनके अपने सर में योचनायें थोडा हिलना शुरु होंगे। इसतरह सर में योचनायों का प्रेरणा हुए जैसा करना ही गोपुर का मुख्य उद्धेश है। योचनायें रहना हर इनसान केलिए सहज ही है फिर भी ईश्वर के सन्निधान में मन को योचनाओं से मोडकर ईश्वर पर रखना चाहिए यही उसका मुख्य उद्धेश हैं। गोपुर के पास जाते ही जो भूलगये जो मन में नहीं हैं वह सब खयाल आते हैं। बडों का खयाल यह है कि इसतरह दब गये हुए सब चीज़ें बाहर आने पर उन्हे रहे बगैर करलेना ही मुख्य कर्तव्य हैं, जब ऐसा करलेने से बिना योचना वाले निर्मल मन को ईश्वर पर ठहरा सकते हैं।

बडे लोग यह कहते हैं कि आलय के पास गये हुए लोगों को गोपुर पर सात द्वारों का अर्थ उनके सैड में तसवीरों को देखकर आत्मा का महत्व मालूम होने पर भी कुछ लागों को तसवीरों को

देखकर मन योचनाओं में डूबना भी सहज हैं। इसतरह योचना आते ही फौरन कुछ लोग ईश्वर के आलय में इसतरह के खयाल आनी नहीं चाहिए समझकर अपने आपको निग्रह करलेंगें। इसतरह आये हुए खयालों को दबाडालने से बाद में थोडी देर तक योचनायें आये बगैर मन स्थिरता पाकर ईश्वर पर लग्न होता हैं।

गोपुर पर तसवीरें देखकर चंचल हुयी मन अगर फौरन अचलन नहीं हुआ तो गोपुर पार करके जाने के बाद द्वजस्तंब के दृश्य से उसमें के भाव से मन चंचल हुए बगैर ठहरजाता है। गोपुर के पास शुरू हुआ मनोचलन गोपुर पार करने के बाद भी नहीं रुका तो द्वजस्तंब के पास जाने के बाद तो ठहरना चाहिए। अगर वहाँ भी नही ठहरा तो वह घंटी के पास तो ठहरना चाहिए जो गर्भगुडी के सामने मौजूद है। मन के योचनाओं को रोकने केलिए द्वजस्तंब में गुण के जानकारी को, घंटानाध में योचना टहरने के अर्थ को समा कर रख्खा है। गोपुर और उसके बाद द्वजस्तंब फिर आखिर में गर्भगुडी के सामने घंटी बजाना इसलिए रख्खा कि सहज से रहनेवाले गुण योचनाओं के रुप में आते रहते हैं यह बात बताते हुए गोपुर के पास गुणों की प्रेरणा हुए जैसा करके इसतरह प्रेरणा हुए इनसान के गुण जब दबजाते हैं तबही ईश्वर मालूम होगा। बिना स्थिरता वाली भक्ती निष्प्रयोजन है यह बात बताने केलिए आलय में बनायी हुयी निर्माण में गोपुर भी एक हिस्सा है। यह बात जानलें कि यह बताते हुए गोपुर का निर्माण किया गया कि शरीर में ईश्वर आत्मा के रूप में हैं,ईश्वर के कारण ही हर एक हरकत हो रही है, सब काम सात नाडीकेंद्रों के द्वारा हो रहे हैं।

7. राक्षसाकार

गर्भगुडी के सामने आनेवाली गोपुर कई आकार के प्रतिमाओं से भरीहुयी होती है तो, गोपुर के ऊपर कलशों के नीचे, नीचे के तरफ दिखे जैसा विकृताकार रहता है। वह विकृताकार चारों तरफ दिखे जैसा रखना गौर करसकते हैं। हम और एक बार याद दिला रहे हैं कि सांप्रदाय तरीके से बाँधे हुए देवालयों में यह सब नज़र आता है। आज भी तमिलनाडु के रायवेलूरु में गोपुर पर रहनेवाले पूरे तसवीरों से ऊपर विकृताकार को रखा हुआ रहना देखसकते हैं,आँध्रा में भी बहुत ही प्राचीन देवालयों पर भी देख सकते हैं। इसतरह गोपुर पर विकृताकार रख के दिखाने में उनका यह मतलब है कि! हम यह बात जानलिए कि गोपुर पर रहनेवाले सब तसवीरें हमारे जीवन के संघटनायें ही है। हमारे जीवित में होरहे सब कार्य कर्म प्रेरित गुणों के कारण से ही हो रहे हैं, इसलिए गोपुर पर के सब संघटनाचित्र मायापूरित ही होते है। यह माया को छोडकर जब उधर जायेंगे तबही ईश्वर मालूम होगा, यह संदोश देनेकेलिए ही गोपुर के बाद मंदिर में ईश्वर को रख्खा हैं। गोपुर के ऊपर के भाग में चारों तरफ दिखे जैसा विकृताकार को इसलिए रख्खा ताकि हमें इस बात का अहसास हो जाये कि गोपुर पर चित्र किये गये सब चित्र माया के आवरण में के ही है।

गोपुर पर विकृताकार माया की निशान है। मंदिर के अंदर का सौम्य आकार ईश्वर की निशान है। देवालय के बाहर गोपुर में विकृताकार को माया के निशान के तौर पर, अंदर मंदिर में सौम्य आकार को ईश्वर की निशान के तौर पर निर्माण किया है। गोपुर पर विकृताकार के मुताबिक यह मालूम हो रहा है कि वह माया का निशान है और उसके नीचे के पूरे चित्र उसीके हैं। विकृताकार बडे

बडे दाँतों से, तेज़ नज़र रखते हुए, मुख खोल कर तकरीबन सिंह के सर के आकृती की तरह रहती है। इसलिए माया के आकृति को सिंहतलाट कहना भी हो रहा है। सिंह के सर जैसी दिखनेवाली सिंहतलाट को गोपुर पर कई चित्रों के शकल में दिखाये हैं ताकि उससे लोगों को यह समझमें आजाये कि माया कितने क़िस्म से हैं। **गुणमयी मम माया दुरत्यया** भगवान के इस वाक्य के प्रकार यह बताये थे कि माया पर जीत हासिल करना नामुमकिन है माया वह सिंह जैसी है जो पशुबल रखती हैं। वास्तव में ईश्वर को जानना इतना आसान नही हैं। माया को पूरे तरह से जीतना होगा। इस बात से डरने की ज़रूरत नहीं है कि माया ताकतवार है। ईश्वर ने यह बताते हुए कि **मामेव येप्रपद्यन्ते माया मेतां तरन्तिते** जो मेरे शरण में आया वह आसानी के साथ मेरी माया को पार कर सकता है। जैसे भगवद्गीता में कहा अगर वैसे ईश्वर के शरण में नहीं आये तो जंगल में मानव खूब भूकवाली सिंह के नज़र से जिसतरह बच नहीं सकता ठीक उसीतरह उस माया से भी वह बच नहीं सकता जो कई संघटनाओं के रूप में, बंधुओं के रूप में, बीवी के रूप में, कई क़िस्म से व्यतिरेकता करती है। अगर हमारे पास ए.के.४७ रैफिल हो तो बडी ताकतवाली सिंह को भी आसानी से जला सकते हैं । दैवज्ञान रखते हुए सर्व तरीकों से ईश्वर की शरण में जो व्यक्ती आता है वह दैवज्ञान कहनेवाली बंदूक से माया कहनेवाली सिंह को आसानी से मारडाल सकता है। इसलिए माया के ओर अप्रमत्त रहना है तो किसी भी क़ीमत पर दैवज्ञान कहलानेवाला आयुध चाहिए।

8. द्वज स्थंब

गोपुर पार करने के बाद पहले द्वजस्थंब दिखता है। द्वजस्थंब अर्थात पताक स्थंब या जेंडा स्थंब है। जेंडा एक राज्य को बताती है या एक की अधिकार को बताती है। यहाँ देवालय में द्वजस्थंब की क्या ज़रूरत पडी? यहाँ किसके अधिकार को बताने केलिए वह रख्खी गयी? इसतरह के सवाल ज़रुर पैदा होंगे। यह जानलें कि देवालय में ईश्वर के राज्य को दिखाने केलिए ही झंडा है। द्वजस्थंब से पहलेवाले गोपुर में आत्मा या ईश्वर को जानने केलिए सात द्वार रहनेपर भी उन के गोल माया के संबंदित चित्रों को दिखाये गये हैं। गोपुर के ऊपर माया विकृताकार की दर्शन दे रही है। अर्थात शरीर में ईश्वर रहने पर भी यह मालूम हो रहा है कि शरीर माया के काबू (वश) में हैं। इतना ही नहीं ऊपर दिखनेवाले सबचित्र माया के संबंदित ही है। इसलिए उनको देखते ही मन चंचल होजाता है। इसके मुताबिक, यह मालूम होने केलिए द्वजस्थंब को रख्खा कि गोपुर से लेकर द्वजस्थंब तक माया का राज्य है और द्वजस्थंब से लेकर ईश्वर का राज्य है। द्वजस्थंब पर माया का निशान रख के उसके ऊपर यह बताने केलिए ईश्वर का निशान भी रख्खा कि ईश्वर माया से बडा है। अब हम यह देखते है कि वह किसतरह है !

देवालय में गर्भगुडी के सामने गोपुर के बाद द्वजस्थंब रहता है। इसतरह का कोई निर्णय नहीं हैं कि द्वजस्थंब इतना ही लम्बा होना चाहिए। इसलिए एक एक देवालय में एक एक क़िस्म के हैट से रहता है। चाहे द्वजस्थंब छोटा हो या बडा, उसके ऊपर के भाग में जैसे चित्र में दिखाया गया वैसे तीन लैनों में घंटियाँ रहते हैं। एक एक लैन में छः घंटियों को लटकाये हुए होंगे। घंटियाँ छोटे रहकर ऐसा रहते हैं कि हवा आने पर हिलजाते हैं। तीन लैनें एक ही तरफ रहने

के कारण देखनेवालों को ऐसा लगता है कि वह एक झंडे जैसा है। स्थंब ऐसा अनुकूल से तय्यार किया होता है कि घंटियों के ऊपर स्थंब के ऊपर के हिस्से में तेल डालकर बत्तियाँ लगाकर चिराग (दिया) जलासके। पूर्व में हरदिन शाम के वक्त ही सीढी (लाडर) के मदद से ऊपर चडके दिया जलाया करते थे। कुछ ज़माने के बाद पुजारियों में सुस्ती आजाकर, पेट वज़न होजाने के कारण हरदिन चडने के बदले में सिर्फ महीने में एक बार चडके दिया जलाते थे। और थोडे वक्त के बाद महीने में एक बार भी भूलजाकर साल को एक बार जलाना शुरू किये ।आखिर आज वह आदत भी खत्म हो गया। फिर भी निशान के तौर पर कि फलाना सांप्रदाय पूर्व में रहा करता था यह बात दिखाने केलिए सिर्फ कुछ जगह संवत्सर में एक बार जलाना है। वह भी खास कर कार्तीक पौर्णमी के दिन द्वजस्थंब पर दिया जलाते रहते हैं। पूरे साल में सिर्फ एक बार जला रहे हैं। इसलिए कुछ जगहों में आज भी साल को ३६५ दिन है कह कर हिसाब कर के ३६५ बत्तियों को मिलाकर एक ही बत्ती कर के जलाते हैं। कुछ देवालयों में तो पूर्व के सांप्रदाय के प्रकार जो द्वजस्थंब होनी चाहिए आज वह नज़र ही नहीं आरहे हैं।

कुछ आलयों में सांप्रदाय सिद्द से द्वजस्थंब रहने पर भी उसमें घंटियाँ तीन लैन में नहीं रहते, सिर्फ एक लैन में रहना हो या एक ही घंटी रहना हो, कुछ जगहों में तो असल घंटियाँही नहीं रहते इसतरह कई क़िस्म के द्वजस्थंब नज़र आरहे हैं। जैसे जैसे वक्त गुज़रता गया उस वक्त के साथ साथ कुछ आलयों में तो गोपुर ही नहीं रहा तो कुछ आलयों में द्वजस्थंब ही नहीं रहा। कुछ आलयों में रहने पर भी वे सिर्फ देखने के हद तक ही है लेकिन घंटियाँ हो या दिया हो बिलकुल नहीं रहतें। इसतरह पूरे सांप्रदाय खत्म होकर

इन्दू मत प्रत्येक हिन्दू मत में बदलगया। वे लोग जो यह कहते हैं कि देवालय निर्माण करने केलिए प्रत्येक आगमशास्त्र है, वे लोग जो यह कहते हैं कि हमने वेद वेदांग पढे थे और हम सब जानते हैं, कहाँ गये वे जब सांप्रदाय मिट्टी में मिलजा रहे है तो, उनके बारे में तो कुछ

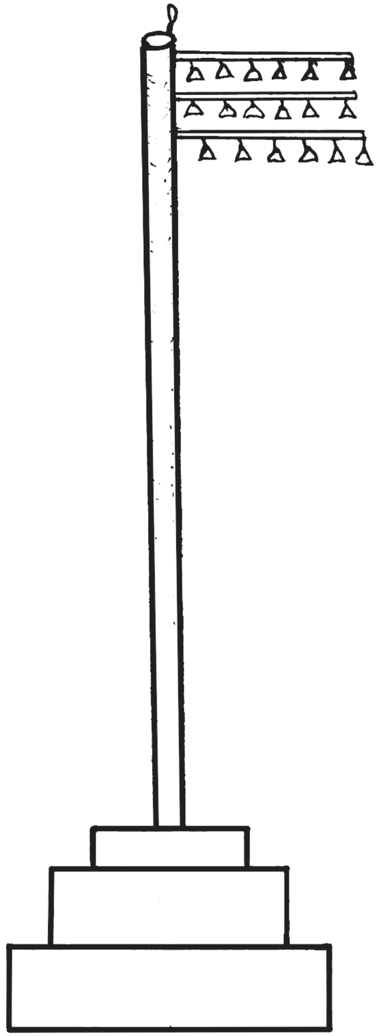

द्वजस्थंब

नहीं कह रहे हैं। इंदू मत गुज़रते वक्त के साथ हिंदू मत में बदल गया। पूर्वकाल में इंदू मत में जो हदें और आचार रहते थे आज वे नहीं रहे। इसीलिए वह इंदू मत जो समस्त दूनिया भर में रहता था आज सिर्फ भारत देश में हिंदू मत की बच कर है। चाहे जो भी हो हमारे आचार व्यवहारों को बचालेना और उसका पुनरउद्धरन करना हम सबका कर्तव्य है। इसीलिए देवालयों में के पूर्व तरीकों को समपूर्ण से मालूम करते हैं।

हमने पहले ही बयान करलिया ना! कि देवालय पूर्व में आध्यात्मिक केंद्र की तरह रहकरते थे। उसके प्रकार द्वजस्थंब में भी बहुत ही आध्यात्मिक ज्ञान बसा हुआ है। वह ज्ञान यह है कि हमारे शरीर के अंदर मन बिना फुरसत के विशयचिंतन लाकर रखती हैं। चाहे वह कोई भी विषय क्यों न हो वे ज़रूर राग द्वेश संबंदित, या काम (आशा) दान के संबंदित, या लोभ मोह के संबंदित, या गर्व विनय के संबंदित, या गुस्सा दया के संबंदित होते हैं। मन के पास आनेवाला कोई भी विषय हो ज़रूर वे विषय सत्विक राजस, तामस कहलानेवाले गुण के हिस्सों में से हीं होते हैं। भगवान ने भगवद्गीता में तीन गुणों को ही माया कह कर गुनमयी मम माया कहचुका था। माया तीन गुणों के रूप में रहते हुए एक एक हिस्से में छः वर्गों में हैं। एक एक वर्ग में दो क़िस्म के गुण हैं। उदाहरण केलिए आशा द्वेश एक समूह (ग्रूप) जानिये। ऐसे समूह छः सत्विक में,राजस में, तामस में रहने के कारण द्वजस्थंब पर उनके निशान के तौर पर तीन लैनों में घंटियाँ रख्खे थे। एक एक गुण भाग में छः ग्रूप रहने के कारण उनके जानकारी मालूम हुए जैसा गुणविषयों के निशान के तौर पर एक एक लैन में छः घंटियाँ रख्खे थे। हवे के काल में घंटियाँ हवा आने पर हिलते हुए एक के बाद एक शब्द करते रहते हैं। अगर एक

घंटी हिली तो उसका शब्द खत्म होने से पहले ही और एक घंटी हिलकर शब्द करती रहती है। उसीतरह हमारे शरीर में मन भी बिना फुरसत के विषय के याद लाकर रखती हैं। एक विषय का खयाल खत्म होने से पहले ही और एक विषय लाकर रखदेती हैं। इसतरह एक के बाद एक आनेवाले विषयों के निशान के तौर पर घंटाराव है जैसा घंटियाँ रख्खे थे। माया विधान को बताने केलिए घंटियाँ और घंटाराव दिखाये तो, उसे दबाने की यानि उसे पार करने का ज्ञान भी मौजूद है कहते हुए, उस पर अधिष्टान कर के दैवज्ञान है कहते हुए, घंटियों के ऊपर के हिस्से में द्वजस्थंब के आक़िर में बडी चिराग (दिया) रख्खे थे। इसको पूर्व में ज्ञानज्योती कहा करते थे। इंद्रिय के विषयों सभी ज्ञान महत्व है इसलिए घंटियों के ऊपर वाले हिस्से में ज्योती को रख्खे थे। विषयों से उत्पन्न होनेवाली कर्म को ज्ञानाग्रि जला देती है इसलिये घंटियों को गुणविषयों से कम्पार करके उसके ऊपर के हिस्से में ज्ञानाग्नि के चिह्न जैसा दिया को जलाये थे। गोपुर पर के चित्रों को देखकर आलोचनायें सर में शुरु हो रहे हैं तो अब तक तुम माया कहलानेवाली अंधेरी आवरण में हो। द्वजस्थंब के पास से दैव के आवरण में यानि ज्ञान की रोशनी में प्रवेश कर रहे हो सिर्फ यह बात ज़ाहिर करने केलिये जलती हुयी दीप को द्वजस्थंब पर रखते थे। पूर्व में जिनलोगों को द्वजस्थंब के बारे में मालूम है वे वहीं अपने खयालों को खत्म करलेने की कोशीष किया करते थे। कुछ लोग द्वजस्थंब के अर्थ के प्रकार अपनी ज्ञान से आलोचनायें या खयालों को दबा डाल रहे हैं। कुछ लोगों को विषयों का (बल) ताकत ज़्यादा रहने की वजह से वहाँ न दबते हुये और भी विषय सरमें रह सकते हैं। वैसे लोग आक़िर में गर्भगुडि के सामनेवाले घंटी के पास खत्म करले सकते हैं। माया के ताकत से न दबे हुये खयाल रहने पर भी आक़िर में वे भी हटजाकर निर्मल मन ईश्वर पर

लग्न हुये जैसा घंटी को रख्खा हैं। घंटाराव के ज़रिये न हुयी मनोनिश्लता द्वजस्थंब के पास ज़रुर हासिल होगी।

9. घंटी

हर देवालय में भी मूल प्रतिमा के सामने एक घंटी लटकायि हुयी रहती हैं। वे भक्त (आस्तिक) जिन्होने आलय में प्रवेश किया पहले घंटी बजाने का संप्रदाय है। सामान्य से बगैर घंटी बजाये ईश्वर को नमस्कार नहीं करते।कुछ लोग गिड्डे होने पर भी उचलकर तकलीफ उठाकर भी हो घंटी बजाकर ही नमस्कार करना आदत सी होगयी हैं। ऐसे घंटी क्युं बजानी चाहिये? अगर यह सवाल करें तो उसके जवाब में यह कहरहे हैं कि वह एक पद्दती (तरीका) है वैसाही बजानी चाहिये। लेकिन कोई भी भक्त उसका विवरण नहीं दे पा रहा है। इससे यह बात समझमें आया कि सब भक्त भेडियों के भीड जैसे जो काम कर रहे हैं उसका अनालसिस न करते हुये दूसरे जैसे कर रहे हैं वैसे करते जा रहे हैं, इसीलिये उन्हे छोडकर आलयों में पूजा करनेवालों को तो यह बात ज़रुर मालूम होकर रहेगा समझकर हमने जाके उनसे पूछने पर कह रहे हैं कि ईश्वर नींद की हालत में हैं। घंटाराव सुनकर भक्त आया है समझकर वह जाग जायेगा। अच्छा अगर ऐसी बात है तो ईश्वर को नींद से जगाने केलिये एक भक्त घंटी बजाये तो काफि है ना।पीछे ही आया हुआ भक्त भी घंटी क्युँ बजानी चाहिये? क्या ईश्वर ऐसा है कि एक भक्त को देखते ही फौरन दूसरे भक्त को देखे बगैर ही नींद में चलाजाता हैं? इसतरह का सवाल करने पर जवाब न देते हुये कह रहे हैं कि यह सब सवाल समंजस नहीं हैं। सब से अतीत रहनेवाले योगियाँ, जिन्हों ने देवालयों में अद्भुत अर्थ देनेवाले आत्मा ज्ञान को बसाकर रख्खा हैं, उन्होनें घंटाराव के

बारे में पहले ही द्वजस्थंभ के पास बताये हैं। उन्होने यह बताया कि घंटाराव विषयों का लहर है।मानव देवालय में आने से पहले कई विषयों से भराहुआ रहता हैं। वैसा शक्स सब विषयों के ज्ञापकों को खत्म कर के कम से कम एक पल (क्षण) तो भी आलय में के प्रतिमा पर मन ठहराने के मक़सद से ही घंटी को प्रतिमा के सामने रखना हुआ। एक बार मंदिर में घंटी बजाकर घंटानाद सुनिये। टंग.......ग्......ग्....ग्... इसतरह दीर्घ से एक स्थायि वाला नाध सुनायि देगा। कहते हैं कि पूर्व के भक्त इसतरह घंटी को बजाकर उस घंटानाध पर मनोदृष्टी रख कर सुना करते थे। ऐसा करने में उनका भाव यह है कि ऐसा सुनने से बंदर की तरह अनेक विषयों पर फिरनेवाली मन उस नाध में ऐक्य होकर जैसे नाद एक स्थायि या स्तिथी में आता हैं वैसे मन भी एक स्तिथी पर आता था।नाद एकस्थायि से बजते हुये जिसतरह न सुनाये देने की हालत में आजाता है वैसा ही मन भी एक ही स्थायि में ठहर कर चंचल हुये बगैर ठहरजाता हैं। उस हालत में एक पल तो मनो निग्रह के साथ प्रतिमा पर दृष्टी ठहराना अच्छी बात हैं।

आज एक बार के अलावा ठंग ठंग करते हुये कई बार बजानेवाले घंटी का कोई मतलब नहीं हैं। यह बात मालूम न होते हुये ही कि हम क्यों घंटी बजारहे हैं? और सामनेवाले ने क्युों बजाया? इसका खयाल बिलकुल भी नहीं कर रहे हैं सिर्फ उन के मन में यह खयाल है कि सामने वाले ने बजाया इसलिये मुझे भी बजाना चाहिये। इस उद्देश के सिवा आज कोई भी यह मालूम नहीं कर रहे हैं कि घंटानाद मनोनिश्चलताके लिये है। वे पूजायें व्यर्थ है जिसमें मनोनिश्चलता नहीं हैं। इसलिये एक बार घंटी बजाइये, फिर उस नाद में मन को रख्खो। नाध के स्थायि में मन एक बार न रुकते हुये अगर बाहर के

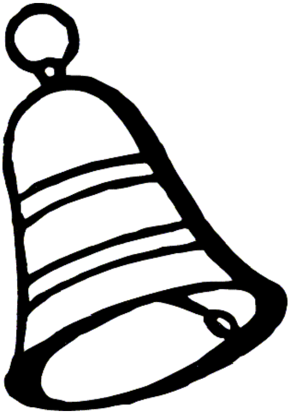

घंटी

खयाल ही याद आरहे हैं तो दूसरी बार घंटी को बजाकर नाध के खतम होने तक सुनकर मन की चंचलता को रोक कर पूजा करने से प्रयोजन पासकते हैं। वरना मंदिर को सिर्फ टैंमपास के लिये जाकर, टैंमपास के लिय घंटी बजाये तो पूजा भी टैंमपास की तरह रहता हैं। यह बात अच्छी तरह से जानलें कि इसतरह की गयी पूजा में कुछ सारांश हासिल नहीं कर सकते।

10. सिंहतलाट

गोपुर को पार करने के बाद द्वजस्थंब, द्वजस्थंब को समझकरले के उसे भी पार करने के बाद गर्भगुडि के सामने घंटी, घंटी को भी पार कर के सामने आने के बाद सातवें द्वार के अंदर ईश्वर की प्रतिमा रहती हैं। चाहे प्रतिमा कौनसे भी शकल में रहें उसे उस मंदिर का मूलविराट कहते हैं। दूसरे मत के लोगों को यह शक पैदा होसकता हैं कि बिना आकार वाले ईश्वर को आकार वाले प्रतिमा की तरह गर्भगुडि में क्यों रख्खें? इसका जवाब यह है कि!परमात्मा

वह है जो हर जगह फैला हुआ हैं।सबजगह फैले हुये परमात्मा को इंदू मत में **पुरुषोत्तम**, इस्लाम में **अल्लह**, ईसायियत में **एहोवा** कह रहे हैं। चाहे कौन कैसे भी बुलायें जिसे बुला रहे हैं वह एक ही हैं। तो फिर ऐसे ईश्वर के बारें में लोगों को कैसे बतायें! लोगों को एक तरीके से बताना चाहिये तभी तो ईश्वर के बारे में वे लोग समझ सकते हैं यही मक़सद से देवालयों का निर्माण किया गया। ईश्वर निराकार हैं यह बात लोगों को समझाने केलिये बिना आकार वाले यानि बिना नाक मुख आँख वगैरा बिना शरीर आकृती के पत्थर के गोले को दिखाये। कुछ आलयों में वह लिंग को रख्खे हैं जिसका कोई शरीरआकृती नहीं हैं तो सिर्फ कुछ मंदिरों में आकारवाले प्रतिमा को रख्खे हैं। उदाहरण के लिये तिरुपति वेंकटेश्वरस्वामि को लेते हैं। वहाँ आकार वाले प्रतिमा को रख्खे हैं। लिंग यह बताने के लिये रख्खा हैं कि ईश्वर निराकार हैं तो जब जब ईश्वर साकार रुप में भी आयेगा यह बताने केलिये मानव के आकारवाले प्रतिमा को रख्खे हैं।गीता में भी कह चुका हैं कि ईश्वर बिना रुपवाला होते हुये भी वह धर्म प्रतिष्टापन के लिये अपने आप को तय्यार करलेके परमात्मा **प्रतिनिधि** या **परमात्मा का दूत** की तरह ज़मीन पर मानव का जन्म उठा रहा हैं। **बिना अवदि (बेहद) वाले परमात्मा के बारे मे ंसमाचार लाता हैं इसीलिये उसे अवदूता भी कहना हुआ।** यही तरीके से इस्लाम मत में भी दैवदूत (पैगंबर या खलीफा) कहा हैं। देवालय में लिंग की प्रतिष्टापना यह बताने केलिये किया कि ईश्वर निराकार हैं, और प्रतिमा की प्रतिष्टापना यह बताने केलिये किया कि ईश्वर साकार हैं। प्रतिमा रख्खे हुये तिरुपति वेंकटेश्वरालय में वेंकटेश्वर के प्रतिमा के गोल किरीट के ऊपर के हिस्से में सिंह के सर के आकार जैसा आकार रहते हुये वह दोनों तरफ फैला हुआ रहता हैं।

ऐसे रहने में यह मतलब है कि! यह बात मालूम हो रहा है कि आकार रखने वाला भगवान भी माया के आवरण में ही हैं।ऐसे भगवान को जानने केलिये उसके गोल फैली हुयी **माया (सैतान या सातान)** को जानकर उसे पार करना होगा।उसके गोल रहनेवाले माया के आवरण को पार नहीं किये तो वह भगवान जो अवदूता के सूरत में आया हैं वह साधारण मानव की तरह ही नज़र आयेगा। उसके माया को पहचान कर पार करें तो यह मालूम होजायेगा कि जो आया हैं वही भगवान हैं।ऐसे पहचान न सक के कई बार माया में फसगयें। परमात्मा ने कहा कि जब मैं आया था तब मुझे कोई पहचान नहीं पाये और फिर बाद में भी आऊँगा तब भी पहचान नहीं पाओगे। ज्यादा ताकत को मृगबल कहते हैं। मनुष्य से मृग ज्यादा ताकत रखता हैं। इसलिये जब हात नहीं होता तो कहते हैं कि सामनेवाला मृग की ताकत रखता हैं। मृगों में राजा सिंह हैं। माया बहुत ही ताकत रखती हैं इसलिये उसे सिंह से कम्पार किया। जो व्यक्ति ईश्वर के तरफ जाने की कोशीष करता हैं उसके ओर ज्यादा तकत रखके माया परेशान करती हैं। गीता में भी कहचुके थे कि ऐसी माया को

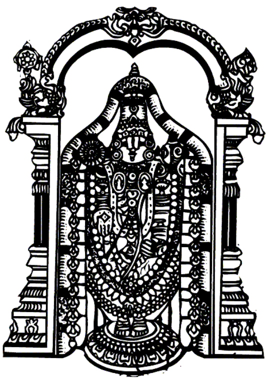

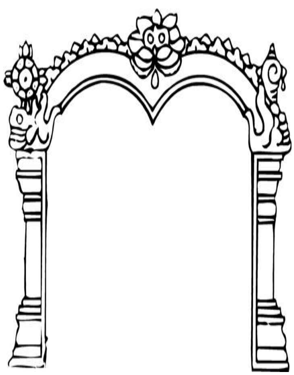

सिंहतलाट

पार करना या माया पर जीत हासिल करना नामुमकिन हैं। यह बात बताने केलिये ही वेन्कटेश्वर के ओर ईश्वर के भाव रखते हुये उस प्रतिमा के गोल सिंहतलाट को रख्खा था।सिंह की ताकत रखते हुये माया तेरे सरमें ही योचना की सूरत में, बाहर बीवी शोहर बंधुओं के सूरत में, कई कार्य रुपों में कैसे भी रहसकता हैं। सिंहतलाट में दिखायि हुयी माया को पार करना मुशकिल ही है मगर हमारी कोशीष छोडनी नहीं हैं। सिंह को सामने से ताकत इस्तेमाल करके नहीं जीत सकते लेकिन बुद्दि की ताकत इस्तेमाल कर के कितनी भी बडी सिंह को हो कितने भी सिंह को हो अपने आधीन में रहे जैसा हमारे बात को सुने जैसा करलेसकते हैं। ऐसा हि माया कहलानेवाली सिंह को बुद्दी के ज़रिये जीत सकते हैं। यह बात जानलें कि ईश्वर तब तक मालूम नहीं होगा जब तक माया पर जीत हासिल नहीं करेंगें सिर्फ यह बात बताने केलिये हि देवालयों में सिंहतलाट को रख्खे हैं।

11. गर्भगुडि

देवालय में गर्भगुडि उसे कहा जाता है जहाँ मूल विराट का प्रतिमा हैं। गर्भ से सजीव पैदा होनेवाला भगवान हैं।प्रपंच में सिवाये एक भगवान के कोई भी मनुष्य माँ के गर्भ से सजीव से यानि ज़िंदा पैदा नहीं होता । सब जगह पैलाहुआ परमात्मा माँ के गर्भ से सजीव से पैदा होरहा हैं।एक जगह रहनेवाला जीवात्मा माँ के गर्भ से बाहर आया हुआ शरीर में, सिर्फ दाखिल हो रहा हैं। मनुष्य और भगवान दोनों एक जैसे दिखने के बावजूद भी पैदायिश में ही बहुत फरख हैं। वह फरख यह है ंकि हमारि तरह वह कर्मबद्ध होकर पैदा नहीं होता,माँ के शरीर में भी हर जगह पैलाहुआ है वही माँ के शरीर से सजीव से पैदा होगा यह अर्थ से ही उसे भगवान कहे हैं। इसीलिये

भगवान के निशानि के तौर पर बनाये हुये आलयों में ईश्वर की प्रतिमा की जगह को गर्भगुडि कह रहे हैं। इसका मतलब यह है कि गर्भगुडि में गर्भ से यानि भग से पैदाहुआ भगवान रहता हैं। कहीं भी हो गर्भगुडि सिर्फ उसी को कहना चाहिये जहाँ आकार वाली प्रतिमा होती हैं। बिना नाक मुख आकार वाले लिंग के आलय में लिंग के जगह को गर्भगुडि नहीं कहना चाहिये। क्योंकि परमात्मा की सिर्फ पहचान रहती है लेकिन वह पैदा होने वाला नहीं है।निराकार स्वरूप को बतानेवाली लिंग के जगह को गर्भगुडि कहना बहुत की बडी गलती हैं और सांप्रदाय के विरुद्ध भी हैं।लिंग को सिंहतलाट नहीं रहना चाहिये। ऐसा ही लिंग रहनेवाली जगह को गर्भगुडि नहीं कहना चाहिये। आकार रखनेवाली प्रतिमा की जगह को गर्भगुडि कहना चाहिये। ऐसाही प्रतिमाकार को ज़रुर सिंहतलाट रहना चाहिये। परमात्मा ज़मीन पर अवतार लेने पर भी वह हर जगह फैला हुआ रहता हैं। पैदाहुआ आकार को यानि भगवान को माँ का गर्भ रहता हैं। निराकार परमात्मा को माँ का गर्भ नहीं रहता हैं।उसे पैदाइश नहीं हैं। इसलिये श्री रंग जी के देवालय को गर्भगुडि कहसकते है जो आकार वाले भगवान के रुप को समता से हैं उस लिंग के आलय को गर्भगुडि नहीं कह सकते हैं जो बिना आकार वाले परमात्मा को समता से हैं। ऐसा ही आकार वाला भगवान माया में फसकर फिरनेवाला होता है इसलिये माया से समता वाली सिंहतलाट को आकार वाले प्रतिमा को रखना चाहिये। बिना आकार वाला परमात्मा माया के अंदर फसा हुआ नहीं रहता हैं इसीलिये परमात्मा की निशानि यानि लिंग को सिंहतलाट नहीं रखना चाहिये।आकार वाले भगवान को ही आयुधों की ज़रुरत है, बिना आकारवाले ईश्वर को यानि परमात्मा को आयुधों की ज़रुरत नहीं हैं, वह खुद आयुधों में फैलाहुआ हैं

इसलिये लिंग के पास आयुध नहीं रहते और न ही रखना चाहिये। सिर्फ आकारवाले प्रतिमा के पास ही आयुधों को रखना चाहिये।

12. शंखु चक्र

तिरुपति वगैरा देवस्थानों में सिर्फ शंख चक्र नामम् ही प्रतिष्टा करके रहना गौर करनेवाली बात है तमिलनाडु में कई देवालय के प्रंगणो पर शंख चक्र नामम् की दर्शन होता है। इसीतरह सिर्फ शंख चक्र नामम् के चित्र पठ भी हैं जिन्हे देवताओं के चित्र मानेजाते हैं। सबसे ज्यादा तिरुपति तिरुमल में हीं ज्यादा शंख चक्र नामों का दर्शन होता हैं। ऐसा ही पिशानी पर नामम् लगाये हुए देवताओं के हाथों में भी शंख चक्र रहते हैं। जब देवालय का हर निशान आत्मज्ञान केलिए ही है तो शंख चक्र नामम् का भी विशेष अर्थ ही होगा। वह विशेष अर्थ यह है कि!

मानलीजिये कि एक युद्ध होनेवाला है, वहाँ पहले चिखें, चिल्लाना, शंकाराव, ढंकाराव वगैरा बडा कोलाहल मचेगा। बाद में नाश होगा। उसीतरह कर्मनाश केलिए योगसाधना कहलाने वाली युद्ध करना चाहिए। यह योगसाधना कहलाने वाली युद्ध बगैर शब्द के शुरू नही होता। गुरू से बाहर आनेवाले ज्ञानबोधा कहलाने वाली शब्द या शोर पहले होना चाहिए। ज्ञानबोधा कहलाने वाली शब्द पहले शरीर में के मन को पहुँचने के बाद योगसाधना कहलाने वाली युद्ध शुरू होगी। जिसतरह बगैर शब्द के छोटे झगडे से लेकर बडे युद्ध तक ज़रा भी नहीं होते, उसीतरह बगैर ज्ञानशब्द के कर्म कहलानेवाली शत्रू पर योगसाधना कहलानेवाली युद्ध जरा भी नहीं होता। इसीलिए जन्मराहित्य केलिए,आत्म दर्शन केलिए पहले ज्ञान ज़रूरी है बाद में

योग ज़रूरी है। बिना ज्ञान के योग बिलकुल सफल नहीं होता। भगवद्गीता भी यही बोधा कर रही है कि **श्रेयोहि ज्ञानमभ्यासात, ज्ञानद्ध्यानम् विशिष्यते**

शंखु से शब्द उत्पन्न होता है। ज्ञान शब्द से जुडी हुयी है। इसीलिए इनसान केलिए पहले ज्ञान ज़रूरी है यही उद्धेश के साथ नामम् के बायें तरफ शंख को रख्खा है। वे लोग जो ज्ञान से योगसाधना करते हैं उन्हे योग शक्ती हासिल होती है वही शक्ति कर्म को जलादेती है। इसलिए कर्मनाश होने केलिए चक्र को दिखायें। इस उद्धेश से चक्र को दायें तरफ रखना हुआ कि पहले ज्ञान शब्द कहलाने वाली शंखाराव कर के बाद में योगसाधन कहलानेवाली युद्ध करने से योगशक्ती कहलाने वाली चक्र से कम कहलानेवाली शत्रृ का नाश होगा। अगर ज्ञान नहीं है तो ज्ञानशक्ती भी नहीं है। इसलिए कहीं पे भी बगैर शंखु के चक्र नहीं रखते। कहीं पे भी हो शंख चक्र दो निशान रहते हैं। वे दो निशानों के बीच नामम् रहता है। इसतरह शंख चक्रों के बीच नामम् हो या नामम् वाला ईश्वर हो रहने की वजह (कारण) यह है कि!

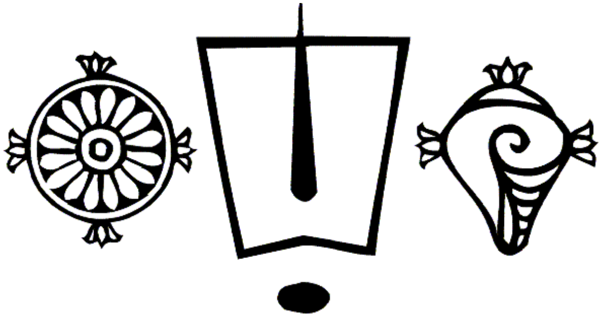

शंखु चक्र

जिन लोगों ने ज्ञान पाकर योग आचारण किया उन्हे योगशक्ती (ज्ञानशक्ती) के ज़रिये कर्म जलजाते है। वैसा शक्स मुक्ती या मोक्ष पाता है। इसलिए वह नामम् वहाँ रखना हुआ जिसे ब्रह्मनाडी कहते है। नामम् के ऊपर के हिस्से का अग्रभाग (कोना) शून्य के तरफ इशारा कर रहा है। इसीलिए देवालय में रहनावाली प्रतिमा यह इशारा कर रहा है कि शंख चक्र रखनेवाला मैं मोक्ष में हूँ। जो शक्स (व्यक्ती) ज्ञान योगशक्ती रखता है वह भी इसीतरह मोक्ष पायेगा कहते हुए ज्ञान की निशान के तौर पर शंख को, मोक्ष की निशान के तौर पर नामम् को, कर्मनाश शक्ती की निशान के तौर पर चक्र को दिखाना हुआ। आज बडे लोगों ने रख्खे हुए निशान बाक़ी है मगर उनके संबंदित आत्मज्ञान की जानकारी मौजूद नहीं हैं। इसलिए पढनेवाले बहुत ही ध्यान के साथ पढकर अमल करनी चाहिए।

13. आयुध

एक शिवालय में लिंग के सिवा रूपवाले सभी देवताओं के हाथो में आयुध रखना हम देखते ही है। वे आयुध भी कुछ लोगों को एक कुछ लोगों को दो से शरू होकर सात या आठ तक रहना भी देख चुके हैं। हमें इसका अंतरार्थ भी जानना होगा कि आखिर क्यों देवताओं के हाथों में आयुध रखते हैं? वायु का मतलब हवा है हमारे नाकों में खेलरहा साँस हवा ही है अर्थात वायु। साँसों के हिसाब से ही हमारे जीने का वक्त रहता है। एक इनसान अपनी साँसों पर जीता है इसलिए वायु ही उसकी ज़िदगी का माप है। इसलिए पूर्व में ज्योतिश्य के प्रकार यह कहते हुए कि इसकी ज़िदगी यहाँ तक ही रहेगी और इसका इतना वायु है कहते थे। हमने यह भी बयान

करलिया कि वही कालक्रम में वायु का शब्द आयु में बदल गया है। बदले हुए शब्द के प्रकार आयुध वह है जो आयू को खत्म करती है। आयुध का शब्द आयू से पैदा हुआ है। ऐसे आयुधों को देवताओं को पहनाने में कुछ न कुछ अंतरार्थ तो ज़रूर होगा। इससे पहले जब शंखु चक्र के बारे में बताये थे तब चक्र को कर्म नाश का निशान कहा था।

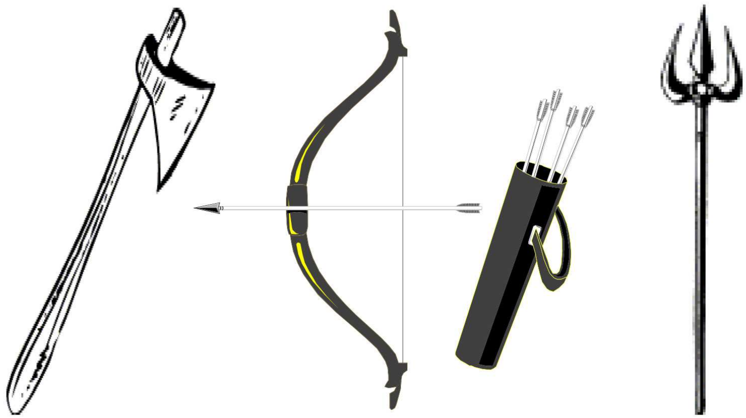

आयुध

ऐसा ही यहाँ भी कई आयुधों को दिखाने में यह मतलब बसी हुयी है कि ज्ञान कहलाने वाली आयुध से सूक्ष्म से रहनेवाले कई क़िस्म के कर्मो का खंडन करना है। जब कर्म नाश होजाता है तब जीव को मुक्ती मिलती है। यह तरीका बताने केलिए भगवान के पास रहने वाले ज्ञानखड्ग (ज्ञान की तलवार) को हमारे कर्म पर उपयोग करलेनी चाहिए। ऐसा होने केलिए जब हम भगवान पर पूरा यकीन करते हैं उनके ज्ञान से हमारा पूरा कर्म खत्म हो जायेगा।

14. नामम्

जिसतरह ईश्वरलिंग पर विभूति रेखाओं का मतलब क्षर, अक्षर, पुरुषोत्तम है उसीतरह त्रिनामम्ों को भी अलग क़िस्म से आत्मज्ञान को समझाने का मतलब एक है। वह अर्थ यह है कि! सुना है कि हर जीवरासि (प्राणि) के शरीर में ३ लाख ५० ह़ज़ार नाडियँा रहते हैं।उसमें ७२ ह़ज़ार मुख्य हैं। उनसे भी ज्यादा मुख्य सिर्फ दस ही है। वे दस से भी मुख्य तीन नाडियाँ हैं। वही सूर्यनाडी, चंद्रनाडी, ब्रह्मनाडी हैं। ये तीन नाडियँा हमारे शरीर के अंतर्गत में बीच में सर से शुरू होकर गुदस्थान तक रीड की हड्डी के पास हैं। रीड की हड्डी के बीच में ब्रह्मनाडी है। उसके दोनों तरफ सूर्य, चंद्रनाडीयाँ मोतियों के हार के जैसे फैले हुए हैं। इसमे मुख्य नाडी ब्रह्मनाडी है। सीधे तरफ की नाडी का नाम सूर्यनाडी,बायें तरफ की नाडी का नाम चंद्रनाडी है। सूर्य चंद्रनाडियों में हमारे अंदर का मन रहता है। बीचवाली ब्रह्मनाडी में जीवात्मा से अतीत सर्व जीवरासियों में बसी हुयी आत्मा है। सूर्य चंद्र नाडियों में रहनेवाला मन ब्रह्मनाडी को पहुँचन को ही योह कह रहे हैं। मन ब्रह्मनाडी को पहुँचने से उसमें की आत्मा को जीवात्मा अनुभव कर रही है। इसका मतलब यह है कि जीवात्मा और आत्मा एक होगये हैं। यह जानलें कि जीवात्मा आत्मा की ऐक्यता को बतानेवाली ज्ञान ही तीन नामम् है।

बडोंने यह पहचाना कि दायें तरफ का नामम् सूर्यनाडी है, बायें तरफ का नामम् चंद्रनाडी है, बीच का नामम् ब्रह्मनाडी है। मन का निवास स्थल सूर्य चंद्रनाडियों से भी आत्मा का निवास स्थल ब्रह्मनाडी ही मुख्य है। इसीलिए सूर्य चंद्रनाडियों की तरह दायें, बायें रहनेवाले नाममों को सुफेद रंग घिसके आत्म स्थान ब्रह्मनाडी की तरह जो है उसे लाल रंग घिसना हुआ। इसतरह के रंग घिसने के

कारण यह है कि देखते ही मालूम हो रहा है कि मद्धनाडी प्रत्येकता रखनेवाली है। मद्धनाडी की प्रत्येकता दिखाते हुये सैडवाले दो नाडियों भी लम्बे से सजाना हुआ। अगर कोई भी जीवात्मा ब्रह्मनाडी में के आत्मा में पहुँचगयी तो आखिर में मोक्ष मिलजाता है यही उद्धेश बताते हुये बीचवाले नामम् के पहले हिस्से से मोटापन कमकरते हुए आखिर के हिस्सा सुई जैसा तेज़ रखना हुआ। इस बात के सबूत के तौर पर बीचवाले नामम् के आखिर का हिस्सा सुई जैसा रख्खा कि जो लोग आत्मा में पहुँचेंगे वे बयान न करपाने वाले परमात्मा में मिलजायेंगे। तिरुपति देवस्थान में वेंकटेश्वर के मुख पर ऊपर के उद्धेश को दिखाते हुए बडा नामम रख्खा है। इसतरह इस बात के निशान के तौर पर नाममों को रख्खा गया कि वेंकटेश्वर नामम् से दर्शन होने से उनका विवरण जानलेंगे। उनके नामम् का रहस्य कोई जाने बगैर साधारण (हलकी) बात की तरह ले रहे हैं। हम भी नामम् पहन रहे हैं। लेकिन उस नामम् के बारे में कोई भी बयान नहीं करले रहे हैं।

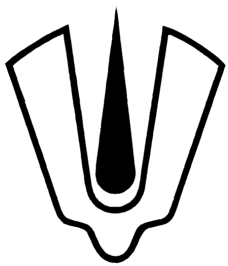

नामम्

उस ज़माने के बडे लोग आज नहीं रहें। आज हमारी हालत ऐसी हो गयी कि हमें ज्ञान के रहस्य मालूम नहीं हैं। इसलिये हम लोगों ने आज यह समझ बैठे कि जिन्हों ने नामम लगालियाँ वे वैष्णव है और जिन्होंने विभीति रेखायें लगालियें वे शैव हैं।असल में त्रिनामम

और विभूति रेखायें आत्मज्ञान बोधा करने के निशानात है लेकिन यह बात मालूम न होने से हम यह समझ रहें हैं कि वे निशानात कुल वर्ग को दिखानेवाले निशान हैं। देवालयों में जो ईश्वर है उन्हे भी हम ऐसा चीरडाल रहे हैं कि एक वैशणवों का देव है तो दूसरा शैवों का देव है कहरहे है। लिंग जो परमात्मा की निशानि है उसे शैवों का ईश्वर कहना और रंग का प्रतिमा जो भगवान की निशानि है उस प्रतिमा को वैशणवों का देव कहना अधर्म है।

15. हस्त

ईश्वर के गर्भगुडी में प्रतिमा की बडी विशेषता है तो वह प्रतिमा दिखा रही हस्त का और भी बडी विशेषता है। जो हस्त प्रतिमा को है वह हमें भी हैं। अगर हमें यह मालूम होजाये कि प्रतिमा दिखा रही हस्त में कितना अर्थ या मतलब बसा हुआ है तो हमें यह भी मालूम होजायेगा कि हमारे हस्त में भी वही विशेषता मौजूद है। इसलिए देवालय में रहनेवाले प्रतिमा के हस्त के बारे में मालूम करते हैं। हस्त के आकार को तसवीर में देखते हैं।

हस्त के बीच में तीन रेखायें (लिकीरें) हैं। वे तीन रेखाओं में से नीचे के दो रेखाओं के कोने एक तरफ एक दूसरे से जुडे हुये हैं। तीसरी रेखा नीचे के दो रेखाओं से भी ऊपर रहकर दो रेखाओं से मिले बगैर अलग से है। इनका ऐसा रहने में मतलब यह है कि भगवद्गीता पुरुषोत्तम प्राप्ति योग अध्याय में

श्लो १६. द्वा विमौ पुरुषौ लोके क्षराक्षरा एवच
क्षर स्सर्वाणि भूतानि कूटस्थो क्षर उच्यते

ज़मीन पर दो क़िस्म के पुरुष हैं। उन दोनो में से एक क्षर (नाश होनेवाला) दूसरा अक्षर (नाश न होनेवाला) है। क्षर कहलानेवाला सर्व प्राणियों में जीव की तरह है। अक्षर कहलानेवाला सर्व प्राणियों के शरीरों में कूटस्थ की तरह रहते हुये जीव के साथ मिल कर है। श्रीकृष्ण परमात्मा की इस बात के प्रकार हस्त के बीच में क्षरअक्षर कहलानेवाले दो रेखायें अलग अलग रहकर सिर्फ कोने मिलकर है।यह जान लें कि वह जीवात्मा जो सर्व जीवशरीरों में क्षर की तरह मौजूद है ऐसा ही वह आत्मा जो समस्त शरीरों में चैतन्य शक्ती की तरह मौजूद है इन दोनों की (जीवात्मा, आत्मा) निशान ही हस्त में के नीचे के दो रेखायें हैं।

उत्तमःपुरुष स्त्वन्यः परमात्मे कहकर सत्रह श्लोक में जो वाक्य है उसके प्रकार और **यस्मात क्षर मतीतो ह मक्षरादपि चोत्तमः** कहकर अठ्रा श्लोक में जो वाक्य है उसके प्रकार दोनों पुरुषोंसे भी उत्तम पुरुष एक है वही परमात्मा है। वो क्षर से भी अतीत है अक्षर से भी श्रेष्ट है इसलिए उसको पुरुषोत्तम कह रहे हैं। उसे परमात्मा इसलिए कह रहे है क्योंकि वह आत्मा से परे हैं,पुरुषोत्तम इसलिए कह रहे है क्योंकि वह जीवात्मा, आत्मा से उत्तम है। परमात्मा पुरुषोत्तम वास्तव में नाम नहीं हैं वे ऐसे शब्द है जो उसकी खाबिलियत बताते हैं। क्योंकि दोनों पुरुषों से वह अलग और अतीत है इसलिए हस्त में तीसरी रेखा दोनो रेखाओं से भी अलग से ऊपर है। वह हस्त जो प्रतिमा के द्वारा दिखाया जारहा है जो इस सृष्टी का कारण है और सृष्टी में मूल पुरुष क्षर अक्षर पुरुषोत्तमों के निशानियों को बताती है। बडे लोग कहा करते थे कि हथेली (हाथ के बीच) में ही सब कुछ है, हथेली में वैकुंठ हैं क्योंकि प्रपंच में मुख्य तीन मूल पुरुषों की विषय हस्त में रहने की कारण से। हथेली के हिस्से का

अर्थ ही नहीं बलकि एक हथेली को ही नहीं बलकि पूरे हस्त को छानबीन करके देखते हैं।

हस्त को पाँच उंगलियाँ हैं। पाँच उंगलिया पाँच भूतो के,पाँच ज्ञानेंद्रियों के, पाँच वायुओं के प्रतीक हैं। इनको संदर्भ के अनुसार समझ करलेना चाहिए।यहाँ पाँच उंगलियों को पंचभूत कहलानेवाले आकाश, हवा, आग, पानी, ज़मीन समझना चाहिए।हस्त के बीच में के रेखाओं को तीन पुरुषों की तरह पाँच उंगलियों को पाँच प्रकृती के हिस्सों की तरह हिसाब करलेने से यह समझ में आजायेगा कि पूरा प्रपंच और उसका आधार परमात्मा, आत्मा,जीवात्मा अर्थात यावत् अंडपिंड ब्रह्मांड पूरा हस्त में ही मौजूद है। प्रतिमा यह दिखाती है कि पंच भूत प्रकृती परमात्मा दोनों हस्त में ही बसे हुये हैं, इतनाही नहीं बलकि यह भी मालूम करने के लिए कह रही है कि हर एक में भी प्रकृती परमात्मा मौजूद है।

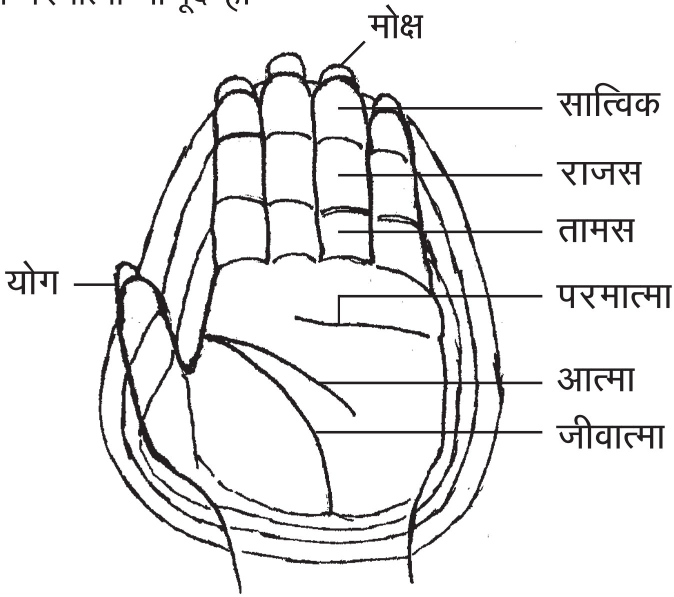

हस्त

हस्त में यह बताया गया कि एक मनुष्य के शरीर में जीवात्मा, आत्मा ही नहीं बलकि परमात्मा और प्रकृती भी मौजूद है इतना ही नहीं शरीर के अंदर का और एक रहस्य या राज़ भी ज़ाहिर या बहिर्गत हो रहा है। वह रहस्य यह है कि अगर मनुष्य प्रकृति में रहे तो वह कैसा रहेगा? परमात्मा में दाखिल हुये तो वह कैसा रहेगा। शरीर में प्रकृती में फसा हुआ जीव प्रकृतिजनित तीन गुणों में मौजूद है यह विषय दिखाना एक तरीका है तो, (और उसी हस्त में) यह बात भी ज़ाहिर किया जा रहा है कि अगर जीव प्रकृतिजनित तीन गुणों को पार करें तो वह हालत कैसे रहता है और तीन गुणों को अतिक्रमण कर के रहने से थोडे वक्त के बाद वह जीव किसतरह बदल जायेगा। यह सब विषय हस्त में किसतरह है यह परख कर देखते हैं। हस्त के उंगलियों को तीन जोड (गड्डे) हैं । उंगलियों के आढे रेखाओं (गीता ओं) से एक एक उंगली तीन भागों में विभजित (डिवैड) होकर दिख रही है। पाँच उंगलियाँ पंचभूत के प्रतीक हैं तो पंचभूत कहलानेवाले प्रकृती को तीन गुण पैदा हुये, सिर्फ यह मालूम होने केलिए ही पाँच उंगलियाँ तीन हिस्सों में डिवैडेड है कि तीन गुण पंचभूत से ही निर्मित हुये है। मंदिर में ईश्वर अपने हाथ को दिखाते हुये यह बता रहा है कि प्रकृती में पैदा हुआ जीव प्रकृती के गुणों में ही फसा हुआ है। हस्त में की हथेली बीच में है तो हथेली के नीचे मनिबंध (कलाई) पर तीन मोड दिख रहे हैं। कलाई के तीन गीतेओं को उंगलियों के गीताओं से मिलाये तो ऐसा लगता है कि हथेली के गोल एक चक्र बना हो। जैसे हस्त के तसवीर में दिखाया गया तीन रेखाओं के बीच के हथेली में तीन आत्मायें दिख रहे हैं तो हथेली से उंगलियों के तरफ तीन गुण के हिस्से है ना! यह जानलें कि उसमें से पहलावाला तामस गुण का हिस्सा है, दूसरा राजस गुण का हिस्सा है, तीसरा सात्विक गुण का हिस्सा है।जैसे हाथ में दिखाया

गया वैसे जीवात्मा भी शरीर के अंदर यह तीन गुणों में ही है। हाथ के जोडें जो गुणों के निशान है उनमें सात्विक की तरह पहचानी गयी उंगलियों के कोने के हिस्से के जोडों में शंक चक्र के आकार रहते हैं। हमने सामने के अध्याय में ही मालूम किये कि शंख ज्ञान बोधा है और चक्र कर्म नाशन है। यह जान लें कि उंगलियों के शंख चक्र का अर्थ यह है कि (वे हमें ये बताते हैं कि) ज्ञानबोधा जानकर कर्मनाश करलेने का तरीका एक मौजूद है। उंगलियों के आखिर में शंक चक्रों को देखने के बाद यह मालूम होगा कि उसके संबंदित विधान गुणों के पीछे सुफेद नाखुन की तरह है। तीन गुण ही नहीं बलकि उनको और उनसे आनेवाला कर्म को जीतने की युद्ध भी है इसीलिए ईश्वर ने उंगलियों के कोने के हिस्से में युद्ध के चिह्नों की तरह शंख और चक्रों को चित्र करना हुआ। ऐसे कई आकार हस्त में चित्रित है तो आज कुछ लोग हस्त के रेखाओं को शंख चक्रों को ज्योतिश्य की तरह हस्त मुद्रिका की तरह बोललेना गलती है। सात्विक गुण भाग जो आखरी भाग है उसके बादही नाखुन दिखते रहते हैं।अगर हम नाखुन को गैर करके देखें तो उंगलियों के तीन जोडों के चमडे से भी नाखुन मज़बूत रहकर उंगलियों के रंग से भी अलग सुफेद रहता है। उंगलियों के कोने के हिस्से में ही नाखुन को रखने का अर्थ यह है कि जीव तीन गुणों में रहना ही नहीं बलकि जीव को चौथा स्थान भी हैं । जैसे भगवद्गीता में कहा कि **चातुर्वर्णम** उसके प्रकार जीवों में सात्विक राजस तामस ही नहीं बलकि योगी भी हैं।` प्रकृती में के उन योगिया का स्थान को बताने वाली ही नाखुन है।नाखुन सुफेद रंग में रहकर योगियों की स्पष्टता को बता रही है। जो लोग योगी होते है वे ज्ञान रखते हैं या जिन के पास ज्ञान रहता है वही योगी होते है,ज्ञान से ही योग प्राप्त होता है, इसलिए इसके निशान के तौर पर

ज्ञानचिह्न चंद्र सुफेद नाखुन पर और भी ज्यादा सुफेद दिखता रहता है। इसतरह उंगलियों के तीन जोडें तीन गुण हैं तो आखिर में ऊपर दिखनेवाले नाखुन योगियों का स्थान को बता रही है। नाखुन पर उदयहोने वाला चाँद ज्ञान की सूचना है।

तीन गुणों में रहनेवाले को सुखदुख रहते हैं। तीन गुणों को पार करके योग में रहने वाला भी सुखदुखों को झेलता हैं। क्योंकि तीन गुणों में रहो या योग में रहो जीव को सुखदुखों को भुगतनाही पडेगा। अगर सुखदुख मकम्मिल तरीके से खत्म करना चाहें तो जीव गुणों को योग को सबको छोडकर उसे मोक्ष पाना होगा। जो जीव मोक्ष पालेता है उसे किसी तरह की अनुभूती से संबंध नहीं हैं। सुखदुख के अनुभव बिलकुल नहीं रहते। तीन गुणों के निशान अर्थात उंगलियों के जोडों में अगर चाखू से चुबायेंगे तो फौरन दर्द दिखता है। योग की निशान नाखुन भी उंगलियों से थोडा फरख से दर्द दिखता है। जो शक्स (जीव) ने मोक्ष पाली उसे कोई अनुभूती नहीं रहती हैं इसलिए सुफेद नाखुन के आखरी में उंगली के ऊपर के हिस्से में आखिर में सुफेद नाखुन से नील रंग का नाखुन उगा रहता है। वे नाखुन मोक्ष की निशान है इसीलिए नील वर्ण रखते हुए प्रत्येकता से रहती है। नील वर्ण के नाखुन को चाखु से काटने पर भी ज़रा भी दर्द हो या सुख हो नहीं रहते` इससे यह साफ ज़ाहिर है कि जो शक्स मोक्ष को पालिया न उसे सुख की अनुभूती रहती है न दुख की। सिर्फ यह बात बताने केलिए ही आखरी नाखुन बिना दर्द वाली है कि मोक्ष पाया हुआ जीव इसतरह रहता है। तीन आत्माओं का विधान, तीन गुणों का विधान, ज्ञान और योग का विधान, आक़िर में मोक्ष का विधान ये सब बतानेवाला ही ईश्वर का हस्तदर्शन है। प्रतिमा में जब इतना ज्ञान बसा हुआ है तो उसे पकड कर अभयहस्त कहना

बडी भूल नहीं है क्या! आकारवाले प्रतिमा के हस्त में जो अर्थ बसा हुआ है वही अर्थ तेरे हाथ के हस्त में भी मौजूद है। यह जानलें कि देवालय में ईश्वर हाथ को इसलिए दिखा रहा है कि तेरे हाथ को तू देखले उसका अंतरार्थ मालूम करलो।

योग के लिए ज्ञान ज़रुरत है इसीलिए परमात्मा ने भगवान के रुप में भगवद्गीता में यह बताया कि **श्रेयोहि ज्ञान मभ्यासात,**इसके प्रकार यह मालूम हो रहा है कि हमारे हस्त में भी योग को बतानेवाली सुफेद नाखुन को (उसके अंदर ही) और भी सुफेद चंद्र है (यह सब साफ तौर पर दिखायी देने के बावजूद भी) कुछ लोग माया के वश में आकर कह रहे है कि ज्ञान से कोई काम ही नहीं हैं, (उसके बदले में तुम लोग) मुख पर ध्यान रखलो या मुख पर रहनेवाले नाक पर ध्यान रखलो या तो नाक के अंदर जानेवाले साँस पर ध्यान रखलो इसतरह कहना और करना क्या गीता में ईश्वर की बात की धिक्कार करना नहीं है? देवालय में प्रतिमा की हस्त की संदेश को भूलकर अपनी ध्यान को कहीं और रखे जैसा नहीं हुआ क्या? उनके अपने अपने हाथ में के ईश्वर की संदेशमुद्रा को **नज़रअंदाज़ किये जैसा नहीं हुआ क्या? ज्ञान को कचरे के समान करके बात करना क्या यह माया की बात नहीं है? अगर ऐसी बात है तो भगवान ज्ञान को गीता में बताने की ज़रूरत ही नहीं है ना! श्रेयोही ज्ञान मभ्यासात बात की कोई अहमियत ही नहीं रही ना!** चाहे कोई कुछ भी समझले ने पर भी यह जानलें कि देवालय में ईश्वर के हस्त में बहुत ही अहम संदेश है और वह संदेश यावत् प्रपंच का, मोक्ष का, गुणों का, योग का,ज्ञान का प्रत्यक्ष साक्ष है। पूर्व में सुबह उठते ही हस्त को देखलेना मुख्य सांप्रदाय की तरह इंदुओ में रहा करता था। आज भी वह संप्रदाय सौ को एक प्रतिशत के हिसाब से कहीं रहसकता है। पूर्व

में सुबह (उदय) उठते ही आँख खोलते ही सबसे पहले दृश्य की तरह हस्त को ही देखलिया करते थे। ह स्त को देखने से हस्त में के तमाम रहस्यों को याद लालेकर आज पूरा दिन मैं मोक्ष केलिए ही कोशीश करूँगा ऐसा तलब कर के उस रेखा को जो परमात्मा का चिह्न है भक्ति के साथ आँखों को लगालेते थे । हम आप लोगों से यह कह रहे हैं कि जिस भाव के साथ बडेलोग पूर्व में रहते थे हम भी उसी भाव के साथ हस्त को देखना चाहिए, दूसरों को भी हस्त का विवरण देना चाहिए, और देवालय आध्यात्मिक केंद्र हैं, आराधनायें बहुत ही अर्थ के साथ है कह कर (बाखी लोगों को) बतायें तो जो लोग विग्रहाराधना के व्यतिरिक्त हैं वे भी व्यतिरेक किये बगैर (सच को) समझ करलेंगे।

16. मोर का पिच्छ (मोर का पिंछ)

अब श्रीकृष्ण की देवालय को आते हैं। उस देवालय के कृष्ण प्रतिमा में बहुत ही ज्ञान बसाकर रख्खा हैं। कृष्ण प्रतिमा के सर पर मोर का पिंछ रख्खा हुआ रहता है। कृष्ण मोर के पिंछ को न खूबसूरती केलिए पहना न अलंकार केलिए। कृष्ण यह बात बताते हुए मोर के पिंछ को पहना है कि यह वह स्तिथि है जिसमें मैं हूँ,और आप लोग भी इसी स्तिथि में रहना चाहिए। विशेष यह है कि! पिंछ के बीच का हिस्सा नीलेरंग में थोडा गोल रहता है। वह हिस्सा पूरे पिंछ में सब रंगों से भी ज़्यादा मुख्य जैसा दिखता है। उसके गोल रेशम सा हरा रंग रहता है। उसके बाद कम्‌ला घेऊँ का रंग का आकार गोल रहता है। यह हल्कासा घेऊँ के रंग के गोले के आख़िर में चमकता हुआ रहता है। इसकी आखरी अंचल के चमक के बाद गोल

हल्कासा एक रंग का हिस्सा रहता है जिसे पहचान नही सकते (खूब गौर करने पर पहचान सकते है)। इसतरह पिंछ में पूरे चार भाग है जैसा निशान के तौर पर मालूम हो रहा है। हम चाहते हैं कि आप लोग एक पिंछ को हासिल कर के खूब देखकर इन चीजों को पहचानें। मुख्य भाग बीचवाला है जो काले रंग से मिलाहुआ नीलरंग में रहता है। दूसरा गोल रेशमवाला हरा भाग, तीसरा हल्का घेऊँ का रंग, चौथा ऐसा भाग है जिसे पहचान नहीं सकते। तीसरी वाली अंचल की तरह चौथीवाली आखरी अंचल भी थोडा चमकता रहता है।इसीलए चौथे भाग को भी बिना तकलीफ के ही पहचान सकते हैं। बाहर से तीन गोल भाग रहकर बीच में आँख की तरह, केंद्र की तरह रहनेवाली मोर की पिंछ को ब्रह्मविद्या गीताशास्त्र को बताया हुआ कृष्ण पहनने में बहुत ही बडा रहस्य या अर्थ बसाहुआ होगा। हमारे शरीरों में शिरोभाग में गुण बसे हुये हैं। वे गुण जो शरीर के तमाम कार्यो का कारण है वे सब एक तरीके के बराबर सेट करके हैं। वह तरीका एक चक्र की तरह फिट किया गया हुआ हमारे शरीरों में शिरोभाग में गुण बसे हुए हैं। वे गुण जो शरीर के तमाम कार्यो का कारण है वे सब एक तरीके से सेट करके है। वह तरीका एक चक्र की तरह फिट किया गया हुआ है।

गुण तीन क़िस्मों में विभाजित हैं। सात्विक्, राजस्, तामस् कहलाने वाले गुण के क़िस्म चक्र में तीन हिस्सो में फिक्स करके है। उन्ही को सात्विक् भाग, राजस् भाग, तामस् भाग के नाम दिये गये हैं। यह तीन भागों के बीच में गोलसा एक हिस्सा रहता है वही ब्रह्मनाडी है। उसमें आत्मा निवास करती है। आत्मा निवास करनेवाली ब्रह्मनाडी को धुरा (Axle) बनालेकर आँखों को न दिखनेवाली गुणचक्र फिक्स होकर है। सर्व जीव गुणचक्र में फसे हुये हैं।बडों ने कहा कि

मोर का पिंछ

जिस भाग में जीव ज्यादा रहता है उसी भाग का नाम उस जीव को दिया जाता था। सात्विक् गुणभाग में रहनेवाले को सात्विक्, राजस् गुणभाग में रहनेवाले को राजस्,तामस् गुणभाग में रहनेवाले को तामस् कहना हो रहा है। चाहे कौनसे भी गुणभाग में रहें हर जीवरासी को आत्मा देख रही है। इसीलिए आत्मा ही साक्षी की तरह है। ऐसी कोई जीवरासी (प्राणि) ही नहीं है जिसे आत्मा नहीं जानती हो।सब जीवरासियों के गुणचक्र के मध्यभाग में रहनेवाली आत्मा गोल रहनेवाले गुणों से संबंध न रखते हुये साक्षी की तरह देख रही है।

हर जीवरासी (प्राणि) गुणों के कारण ही काम कर रहे हैं। कामों के कारण ही उन उन जीवों को पाप पुण्य संभव हो रहे हैं। पाप पुण्य जिसे कर्म कहते है वे सिर्फ जीवात्मा को ही है मगर बीचवाले आत्मा को कर्म (पाप पुण्य) नहीं लगते। आत्मा की शक्ती ही पूरे

शरीर में फैल कर हिलने की ताकत दे रही है फिर भी हर प्राणि के हरकतें गुणों के अनुसार ही रहते है। इसीलिए आत्मा वह ताकत है जो सिर्फ कारण है मगर कार्यवाली कम नही है । शरीर में गुणों के आदेश के प्रकार विविध काम होने पर भी किसी भी तरह का कार्य संबंध न रहते हुए किसी भी तरह का कर्म लगे बगैर आत्मा सब शरीरों में साक्षिभूत की तरह है।

मोर के पिंछ के मध्य भाग गुणचक्र में बीच में रहनेवीली आत्मा का निवास स्थान है। उसके गोलवाला दूसरा भाग गुण चक्र में सात्विक है, उसके गोल का तीसरा स्थान राजसभाग है। ऐसा ही आखरी चौथा भाग तामस भाग है।इसतरह मोर के पिंछ गुण चक्र जैसी ही दिखती है। वह मोर की पिंछ जो तीन भागों के बीच प्रत्येक से दिखनेवाली आकार को रखती है उसे कृष्ण ने अपने सर पर यह बताने केलिए पहना कि मैं काम करता हूँ फिर भी मुझे किसी भी तरह का गुण कर्म नहीं लगता, और मैं तीन गुणों के बीच आत्मा के रुप में हूँ। इतनाही नहीं इस भाव से कृष्ण ने पिंछ को पहनना हुआ कि सब के अंदर तीन गुणों में आत्मा साक्षी की तरह मौजूद है।

हमारे जिस्म में ब्रह्मनाडी में आत्मा निवास कर रही है। वह नाडी सर से लेकर गुद स्थान तक फैली हुओी है। रीड की हड्डी के बीच में फैली हुयी ब्रह्मनाडी से आत्मशक्ति प्रसार होने केलिए दोनों तरफ से छोटे छोटे नर (नस) बाहर निकले। ब्रह्मनाडी शक्ती का निलय है तो वह शक्ती को गुण इस्तेमाल कर रहे हैं। ऊपर रहने वाली गुण चक्र से आदेश बीचवाले ब्रह्मनाडी के द्वारा ही आना होगा। ऐसा ही बाहर के इंद्रियों से आनेवाले सारे विषय छोटे नरों (नसों) के द्वारा ब्रह्मनाडी को पहुँच कर, उस में सफर करके गुण चक्र में

रहनेवाले जीव को पहुँच रहे हैं। यह छोटे नरों की व्यवस्था (इंतेज़ाम), ब्रह्मनाडी का व्यवस्था और ऊपर रहन वाले गुण चक्र की व्यवस्था मोर की पिंछ को देखेंगे तो अच्छी तरह समझमें आयेगा। पिंछ के नीचे का हिस्सा मोटा सुफेद से शुरु होकर लम्बा रहता है। उसे ब्रह्मनाडी जैसा समझना चाहिए। वह लम्बी काडी (लकडी) के दोनों तरफ छोटे छोटे पर (पंख) सैड में फैले हुये होते हैं। उन्हे ब्रह्मनाडी से बाहर निकले हुये छोटे छोटे नरों की तरह हिसाब करलेनी चाहिए। ऊपर में चार भागों में दिखने वाली पिंछ को गुण चक्र की तरह हिसाब करलेना चाहिए।

१. सर्व जीवों के शरीरों में भी यही इंतेज़ाम रहता है यह ज्ञान बताने केलिए ही कृष्ण ने पिंछ को पहना है।

२. सर्व जीवों को गुणों को आत्मा साक्षी की तरह है यह सूचना बताने केलिए ही कृष्ण ने पिंछ को पहना है।

३. आत्मा तीन गुणों के बीच में रहकर किसी भी गुण से संबंध नही रखती है, यह बताने केलिए ही कृष्ण ने पिंछ को पहना है। मैं किसी भी तरह का काम करुँ तो भी बीच में रहने वाले मुझे कर्म नही लगते यह बताने केलिए ही पिंछ को सर पर रख्खा है।

४. सर्व जीवों के सर के अंदर ही गुण मौजूद है और आत्मा भी यह बात बताने केलिए ही कृष्ण ने सर पर पिंछ को पहना है।

६. आखरी अंचल का रंग हल्कासा है, दूसरी उससे ज्यादा दिखती है, तीसरी उससे भी ज्यादा दिखती है, चैथी सबसे खूबसूरत दिखनेवाली आँख की तरह है। यह जान लें कि ऐसी पिंछ को पहनना सिर्फ यह बताने केलिए ही है कि कोई भी जीवरासी हो आखिर में उसको यहीं स्थान पर पहुँचना चाहिए।

७. जिन्होने गुण चक्र का राज़ यह रहस्य को जानलिया वह मेरी तरह है, यानि मेरे बराबर के है, यह बताने केलिए ही कृष्ण ने सर पर पिंछ को पहना है।

८. गीता कर्म योग का अध्याय २८ श्लोक तत्ववित्तु महाबाहो गुण कर्म विभागयोः गुणा गुणेशु वर्तन्त इतिमत्वान सज्ञते जो मानव गुण कर्मो के भागों को जानता है वह आत्मा को जाने जैसा होगा। ऐसा व्यक्ती गुणों से होनेवाले इंद्रिय के काम कितने भी करने पर भी वह ऐसा है कि उसने कुछ किया ही नहीं है। यह बताने केलिए ही कृष्ण ने सर पर पिंछ को पहना है। कृष्ण ने पहनी हुई मोर के पिंछ में इतना आत्मज्ञान बसा हुआ है लेकिन अबतक हमें यह बात मालूम न होना बहुत ही बद्नसीबी है।

17. मुरली

सबके शरीरों को ९ रंद्र हैं। आँख दो, कान दो, नाक के सुराख दो, मुख एक, गुद एक, गुह्य एक पूरे सर्वजीवों के शरीरों को ९ रंद्र रहते हैं। इसलिए कुछ बडे लोगों ने शरीर को ऐसा वर्णन किया है कि वह नौ रंद्रों (छेदों) का साँप का पहाडी (साँप का सुराख) है और उसमें जीव साँप की तरह निवास कर रहा है। पहाडी में रहनेवाला साँप बाहर से नहीं दिखता। इसीलिए बडेलोगों ने कहा कि जिसतरह कौनसे पहाडी में कौनसा साँप है मालूम नही होता उसीतरह यह भी पता नहीं चलता कि कौनसे शरीर में कौनसा जीव रहता है।

बाँसुरी को भी ९ रंद्र होते हैं। बाँसुरी को जीवों के शरीरों से कम्पार करसकते हैं। शरीरों के नवरंद्रों की तरह बाँसुरी के रंद्र भी ९ हैं। यह बताने केलिए ही कृष्ण ने अपने हाथ में हमेशा बाँसुरी को रखलिया कि जीवों के सब शरीरें मेरे ही हाथ में है ।इससे यह साफ ज़ाहिर है कि शरीर स्वतंत्र नहीं हैं वे सब ईश्वर के हाथ में खिलोने हैं। जीवों के शरीर प्रकृती से बनें हैं।उस प्रकृती को ही ईश्वर ने अपने आधीन में रखलिया।

अज्ञान को निकाल कर ज्ञान मालूम कराना ही श्रीकृष्ण का जन्म रहस्य है। इसीलिए उसने अपनी बाँसुरी को जीवों के शरीरों से कम्पार करते हुये, उसमें संगीत को बजारहा है।नवरंद्रों की बाँसुरी को अपने मुख से पूँकते हुये उसमें एक शब्द पैदाहुये जौसा कर रहा है। वह शब्द लयबद्द के साथ बाँसुरी से बाहर आकर थोडे दूर तक सुनाते जाकर लय (नाश) हो रही है। नौ रंद्रों की बाँसुरी को मुख से पूँकते संगीत पैदा करना भी आत्मज्ञान ही है समझना

चीहिये। कुछ लोगों को यह शक हो सकता है कि उसमें क्या ज्ञान बसा हुआ है? इस केलिए हमारा जवाब यह है कि! हर मानव को अज्ञान से ज्ञान की तरफ लौटना ही होगा।ऐसा ज्ञान पाने केलिए एक गुरू की ज़रुरत है। गुरुमुख से आनेवाले बोधा के द्वारा अज्ञानी ज्ञानी में बदल सकता है। जो शक्स ज्ञानी जैसा बदलगया वह योगी बनकर परमात्मा में ऐक्य हो रहा है।नव रंद्र की बाँसुरी को नव रंद्र की शरीर समझना चाहिए। बाँसुरी को पूँकनेवाला (बजानेवाला) कृष्ण है तो शरीरों को ज्ञान पूँकनेवाला गुरु है। यह सूचना देतेहुये कृष्ण बाँसुरी को बजारहा है कि बाँसुरी में जो बजाया जाता है वह संगीत है तो शरीर को पहना हुआ जीव को गुरु की ज़रुरत है,गुरू के द्वारा ही ज्ञान हासिल करना होगा। यह जानलें कि बाँसुरी बजाने पर बाहर आनेवाला शब्द गुरु जब ज्ञानशक्ती देगा तब बाहर पडनेवाले कर्म हैं। कृष्ण इसलिए बाँसुरी बजाता था क्योंकि जिसतरह शब्द थोडे दूर सफर करके शून्य में नाश होजाता है उसीतरह कर्म कहलानेवाली शब्द नाश होते ही जीव भी शून्य परमात्मा में दाखिल होजायेगा।

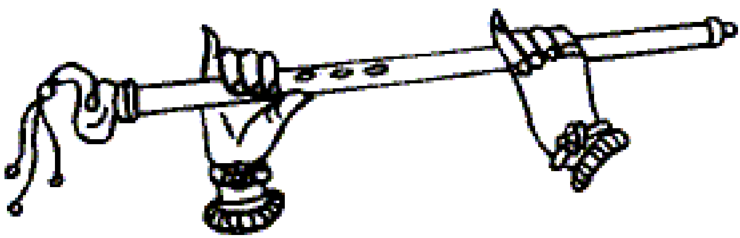

मुरलि

ज्ञान शास्त्र बद्द होती है ऐसा ही संगीत भी लयबद्ध होती है।अगर बजानेवाला नहीं हैं तो बाँसुरी में संगीत नहीं बजेगा। ऐसा ही अगर गुरू नहीं है तो ज्ञान नहीं मिलेगा। शब्द बाहर आने के बाद ही शून्यमें मिलजायेगा।ऐसा ही जो शक्स ज्ञान हासिल कर के योगी बनगया वही परमात्मा में दाखिल होगा।सिर्फ यह बात बताने केलिए ही कृष्ण ने बाँसुरी को दिखाया।

18. पैर

कहीं पर भी देखलों कृष्ण ठहर कर ही रहता है। वह कहीं पे भी ठहरें एक पैर ज़मीन पर रख कर और एक पैर बस ऐसे ही सहारा लगाकर रखता है। इससे यह मालूम हो रहा है कि कृष्ण के शरीर का पूरा वज़न एक पैर ज्यादा एक पैर कम ढो रहा है। कृष्ण के दो पैरों को ऐसा समझना चाहिए कि सर्व जीवरासियों में रहनेवाले दो साँसें हैं।हमारे शरीर में दो नाक के रंद्रों में जो साँस चल रहा है वह एक में ज्यादा और एक में कम खेलता रहता है। अगर सीधे नाक के रंद्र में ज्यादा साँस आया(चला) तो बाये नाक के रंद्र में कम साँस आता है। अगर कुछ समय में बायें रंद्र में ज्यादा आयें तो सीधे नाक के रंद्र में कम आता है। इसतरह आने का कारण यह है कि शरीर में सूर्यचंद्रनाडियों पर मन बदलता रहता है। जब मन सूयनाडी पर रहता है तब सीधे रंद्र में, जब मन चंद्रनाडी पर रहता है तब बाये रंद्र में साँस ज्यादा आता है।जब मन सूर्यचंद्रनाडियों पर रहता है तब मनुष्य तमाम कामों में प्रपंच में बसाहुआ रहता है। जब मन सूर्यचंद्रनाडियों पर नहीं रहता है तब मनुष्य प्रपंच से संबंध न रखते हुये नीन्द में हो या योग में हो बसाहुआ रहता है।

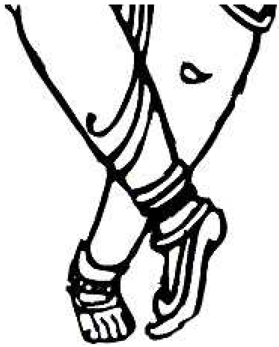

पैर

सर्व शरीरों में साँस दो भागों में रहते हुये एक ज्यादा एक कम है और अंदर की मन की स्तिथी को बताते हुये कृष्ण ने एक पैर को पूरा रख कर और एक पैर को थोडा सा रख्खा है। ठहरा हुआ कृष्ण होश में जागृति के अवस्था में मौजूद है। इसलिए यह मालूम हो रहा है कि जागृति के अवस्था में ही मन दायें बायें नाडियों पर बदल रही है। जागृति के अवस्था में मनो गमन के स्थानों को बताने केलिए ही कृष्ण ठहर कर पैरों को दिखाया है। जो शक्स जागृति के अवस्था में मन की गमन को जानता है वह नींद में मनोस्थान को जानने की कोशीश करेगा। इसतरह नींद और जागृती में मन कहाँ रहता है जानना ज्ञान होता है। जो शक्स यहजानता है कि मन सूर्यचंद्र नाडियों से नींद में ब्रह्मनाडी में पहुँचती है तो वह व्यक्ती आत्मा के ज्ञान को खरीब होसकता है।

19. शरीर का नीला रंग

परमात्मा पूरे प्रपंच में फैलाहुआ है,इंद्रियों से मालूम न होनेवाला है,वह अनंत शक्ती है। ऐसे वाले को कम्पार करने केलिए

प्रपंच में खरीबी संबंध जो है वह आकाश ही है।आकाश शून्य है आँख को दिखायि नहीं देती।हम यह कहरहे हैं कि आकाश प्रकृती का एक हिस्सा है वह परमात्मा नहीं है फिर भी परमात्मा के विषय को कम्पार करने के वक्त ज़ाहिर है या शून्य है।शून्य का भी एक रंग हैं, वह नीला रंग है।कोई भी रंग हो एक वस्तु पर या पदार्थ पर रहता है । लेकिन आकाश का नीला पन किसी परदे पर नहीं हैं। उसे शून्य में कितना भी ढूँढो ढूँढे जैसाही रहता है मगर उसके खरीब पहुँच नहीसकते । इसलिए कृष्ण यह बताते हुये नीले देह को धारण किया कि मैं भी उस आकाश के जैसा हूँ जिसका कोई हद नहीं हैं और सब जगह फैली हुयी है। इसलिए यह बताने के लिए ही परमात्मा का शरीर नीलरंग में है कि जिसतरह आकाश का कोई हद नहीं हैं उसीतरह मैं अनंत हूँ।

20. आराधना

अब तक देवालय के विषयों के बारें में मालूम किये थे। अब हम उन भक्ति आराधनाओं के बारे में मालूम करते हैं जिन्हे हम आचरण कर रहे हैं और जिन्हे हम (असल में) आचरण करना चाहिए। इस ज़माने के मानवों में भक्ति बहुत ही कम हैं। कुछ न कुछ लोंगों में भक्ति भाव रहने पर भी वह सहीं विधान (तरीके) में नहीं है। एक एक जन एक एक तरीका आचरण करते हुये जो तरीका वे जानते हैं वही तरीका सही समझ रहे हैं। सिर्फ कुछ लोग सही भक्तिरखते हुये ज्ञान हासिल करके आत्मा, परमात्मा के बारे में जानने की कोशीष कररहे हैं। कुछ लोग रास्ते में जाते हुये देवालय के सामने सिर्फ नमस्कार करके ऐसा समझ रहे हैं कि हमसे ज्यादा

भक्तीवाले (दुनिया में) है ही नहीं। कुछ लोग संवत्सर को एक नारियल (टेन्काया) देवालय में पोङ कर बाक़ीलोगों से हम ज्यादा बडे भक्त है समझते हैं। कुछ लोग देवालय तक भी जाये बगैर ही घरमें ही कुछ न कुछ देवता की तसवीर के सामने नमस्कार कर के ऐसा समझकर दिल में तसल्ली पाते हैं कि मैं भी भक्ति रखता हूँ। कुछलोग तिरुपति वगैरा यात्रों पर जाकर थोडा बहुत पैसा डालकर इच्छाये माँगनाही भक्ति समझ रहे हैं। कुछ लोग इसतरह माँगना भी पद्दती समझते हैं कि शिवलिंगों को अभिषेक करवाकर मृत्युदोष जाना है।कुछ लोग तो दिखनेवाले झाड,पहाड को भी माँगते हैं। इन सबका भी भक्ती ही है मगर उसका उचित अर्थ या मतलब नहीं है। जिस पर चल रहे हैं वह रास्ता ही है मगर पहुँचनेवाला गम्य (मंज़िल) स्मशान हो सकता है,ज़ंगल हो सकता है,तालाब हो सकता है,ग्राम् हो सकता है। ऐसा ही जो कर रहे हैं वह सब भक्ती ही है लेकिन वह किसी भी तरह का हो सकता हैं। इसका कोई यकीन नहीं हैं कि वह भक्ती परमात्मा तक पहुँचायेगी। बगैर मालूम हुये चलने पर भी जिसतरह रास्ता ज़ंगल को पहुँचाता है उसीतरह बेमतलब भक्ती इच्छाओं से भरीहुयी होकर जन्म को भेजती हैं।

यह बहुत ही विचार करने की बात है कि परमात्मा के बारे में बताने केलिए निर्मित किये गये देवालय आज ऐसे स्थल बनगये कि जिस के आगे जाकर पैसों की घंटियाँ रिशवत् में दिखाकर इच्छाये ंमाँग रहे हैं। अगर इच्छायें पूरे नहीं हुये तो ईश्वर की दूषण कर रहे हैं। क्या किसी भी मंदिर में ईश्वर ने कभी भी ऐसा कहा कि तुम इच्छायें माँगों और मैं उन्हे पूरा करूँगा? **आशा कहलानेवाली रस्सी से बाँधे जाकर विविध इच्छायें माँगना भक्ती नहीं कहलाती है। सौ**

रुपये खर्च कर के अभिषेक करवाकर लाख रुप माँगना भक्ती नहीं कहलाती हैं। कर्म से आयेहुये रोग दुरुस्त होने पर मैं पैसा दूँगा कहना भक्ती नहीं कहलाती हैं। आत्मा अवगाहन करानेवाले देवालय मानव और ईश्वर के बीच इच्छाओं के व्यापार केंद्र होना शोचनीय है।

चौरासी लाख जीवरासियों में उत्तम बुद्धि रखनेवाले मानव की जन्म उठाकर, पाप पुण्य के बीच व्यत्यास (फरख) मालूम हुये बगैर, इस के बारे में विवरण या योचना न करते हुये कि होनेवाले तमाम कामों का कारण क्या है? अपनी अखल ही सबका कारण है समझना अहंकार ही होता है। मौत और पैदायिश उसके बाद की स्तिथि क्या है? इस बात पर योचना या गौर न करते हुये बेकार से वक्त गुज़ारना, उस ज़िंदगी का ही कोई मतलब नहीं हैं।यह बात मालूम न होना अज्ञान ही होगा कि बिना नाम, रूप के परमात्मा के बारे में मालूम करने केलिए एक पद्धती (तरीके) से जुडाहुआ मार्ग है। यह बात अच्छी तरह जानलीजिये कि सुबह उठना ही देरी कामों में लग्न होकर असल ज़िदगी का मतलब क्या है? इसके बारे में न सोचने वालों की ज़िदगी ऐसी है कि जैसे पशु पक्ष ज़िदगी गुज़ारते हैं मगर उससे बडकर विशेष कुछ नहीं हैं। इस यकीन पर आधारित होकर कि ईश्वर मौजूद है उसके लिए जो जानकारी चाहिए उसको मालूम न करते हुये और उसके बारे में कुछ न जानते हुये देवालयों को जाकर पूजा करनेवालों को देखकर कुछ लोग ऐसा कहते हैं कि यह जो यकीन है वह एक रोग है। कुछ लोग ऐसे भी है जो यह बात नहीं जानते कि हर काम का भी एक विशेषता होता है और अंधेपन से भक्ति मार्ग में जानेवालों को देखकर यह फैसला करलेते हैं कि इन सब आचरणों का कोई आधार ही नहीं है इसलिए वे लोग

समझते हैं कि ईश्वर ही नहीं हैं। जिसतरह दूर से देखनेवाले को इमली के पेड और जम्मि के पेड के बीच फरख मालूम नहीं होता है उसीतरह भक्ति मार्ग में अर्थ रहितों को देख कर ज्ञानि और योगियों को भी आस्तिक रोगियों के नीचे जमा करनेवाले नास्तिक भी मौजूद है।बहुत से लोगों को यह बात नहीं मालूम कि योगियों को आस्तिक और नास्तिक इन दोनों वर्गों से किसी तरह का भी संबंध नहीं हैं यैनि योगियाँ इन दोनों डिपार्टमेंट्स के हीं होते। आस्तिक वे है जो विश्वास रखते हैं, नास्तिक वे है जो विश्वास नहीं रखते हैं।योगी वे होते हैं जो विश्वास, अविश्वास पर आधार न होते हुये सत्य को निरुपण करलेके अनुभव करते हैं। पुराणों के प्रकार चलनेवाले आस्तिक है तो नास्तिक वह है जो इसतरह बहस् करते हैं कि उनका (यानि पुराणों का) कोई निरूपण नहीं हैं। **योगी वे होते हैं जो सिर्फ पुराण ही प्रमाण नही हैं कहते हुये शासत्र भी जानकर अमल करते हैं।आस्तिक और योगियों के बीच में फरख न जाननेवाले नास्तिक जैसे (बडो ने कहावत में कहा कि एक शक्स ने कहा कि बैल बच्चा जनी है तो दूसरे ने बिना सोचे समझे कहदिया कि बच्चे को कोठी में बाँधो अर्थात उसने ज़रा भी यह नहीं सोचा कि बैल बच्चा नहीं जनती) बिलकुल वैसे ही योगियों को भी आस्तिकों में जमा कर रहे हैं। नास्तिक यह बात नहीं जानते हैं कि आस्तिको को विश्वास ही मुख्य है,योगियों को निरूपण ही मुख्य हैं। नास्तिक यह बात नहीं जानते हैं कि आस्तिक बिना जाने जो आचरण कर रहे है उन आचरणों का सही मतलब बतानेवाले योगी हैं। कुछ लोग अज्ञान से समझते हैं कि भक्तिमार्ग वह विधान है जो इच्छाओं केलिए करते हैं और इच्छाओं को पूरा करने के केंद्र ही देवालय समझते हैं ऐसे लोगों को देखकर नास्तिकलोग उनके पूजाविधानों को बेकार काम समझके ऐसा समझ रहे हैं कि**

जो लोग ईश्वर का डर रखते हैं उनलोगों ने ही देवालयों को बनाया है मगर उन देवालयों का कोई मतलब नहीं हैं।

देवालयें वह निर्माण है जिसके हर मोड में आत्मा ज्ञान भराहुआ है। हमलोगों ने पहले ही मालूम करलिया कि बिना रूप और नाम वाले शून्य शक्ती के बारे में जानकारी देनेवाले ही देवालय निर्माण है।वे योगियाँ जो न आस्तिक है न नास्तिक उन्होने निर्माण किये हुये देवालयों में होनेवाले हर काम का अर्थ योगियों को ही बताना पडेगा। आस्तिक वे है जो आत्मा निरुपण मार्ग को दिखानेवाले देवालयों को समझ नहीं सकते फिर भी, एक कहावत में कहते है ना कि अंधेपन से भी ढेरापन बहतर है उसी तरह नास्तिकों से भी आस्तिक बेहतर है कहसकते हैं। हम यह समझ रहे हैं कि जो लोग आस्तिक है वे ज्ञान की आँख रखते हुये हर आचरण का अर्थ जो हम बता रहे हैं उसे सही तरीके से समझले कर योगमार्ग आचरण करेंगे। नास्तिकत्व को नाश कर के आस्तिक को छोडकर निरुपण ही मुख्य ध्येय है समझते हुये योगमार्ग आचरण करना चाहिए। अब हम देवालय के पूजा के विधानों के अर्थ बता रहे हैं।

21. दिया

पूजा विधानों में दिया जलाना पहला काम है, प्रमिदा में तेल डालकर दो बत्तियाँ डालकर जलाने का आचार है। सिर्फ रोशनी केलिए ही नहीं बलकि ज्ञानार्थ के साथ दिये का सारांश है। हर जीव को शरीर है,उस शरीर में कर्म भी हैं। उसमें आत्मा, जीवात्मा निवास कर रहे हैं। जीवात्मा शरीर में ज्ञान के ज़रिये योग आचरण करके आत्मा में मिलने से योगशक्ति हासिल होती है।उस योग शक्ति

से सारे कर्म जलजायेंगे। बिना ज्ञानाग्नि (योगशक्ति) के कर्म नहीं जलजातें। अगर कर्म खत्म नहीं हुआ तो जन्म होते ही रहते है।इसलिए जो लोग जन्मराहित्य चाहते हैं उसके बराबर अर्थ दिये जैसा बाह्यार्थ से दिया जलाया करते थे। प्रमिदा को शरीर से कम्पार करके, उसमें के दो बत्तियों को जीवात्मा, आत्मा की तरह कम्पार करके, अगर ज्ञान के साथ योग आचरण करने के वक्त आत्मा, जीवात्मा मिलगये जैसा दो बत्तियों को मिलाकर जलाया करते थे। दो बत्तियाँ एक ज्योति की तरह रोशनी देने को योग कहा करते थे। जब शरीर रहता है तो ज़रुर कर्म रहता है । इसलिए प्रमिदा रखते ही पहले तेल डालके रख के बाद में बत्तियाँ डालकर जलाते हैं।सिर्फ गुरु से ही ज्ञान मिलता है इसीलिए सैड के आग से ही बत्तियाँ जलाते हैं। ज्ञान की आग से दो बत्तियाँ (जीवात्मा, आत्मा) एक होकर जब जलते है तो कर्म कहलानेवाली तेल खत्म होजाती है।प्रमिदा में तेल खत्म होजाना यह सूचना देता है कि ज्ञानाग्नि के ज़रिये ही शरीर में का कर्म खत्म होजाता है।

प्रमिदा में तेल खत्म होते ही फौरन दो बत्तियाँ बुज जाते हैं। ऐसा ही शरीर में का कर्म खत्म होते ही फौरन शरीर में आत्मा,जीवात्मा न रहते हुये परमात्मा में ऐक्य होजाते हैं। जिसतरह शरीर में आत्मा,जीवात्मा जाने के बाद मृतदेह बाक़ी रहता है उसीतरह तेल खत्म होकर दो बत्तियाँ बुझ जाने के बाद प्रमिदा बाक़ी रहता है। जिसतरह मृतदेह की कोई अहमियत नहीं रहती उसीतरह बुझाहुआ प्रमिदा की भी कोई अहमियत नहीं है। पूर्व में मिट्टी के प्रमिदाओं को पेंक देते थे।मृत शरीर नाश होनेवाली है इसलिए टूटनेवाले मिट्टी के प्रमिदाओं को रख्खा करते थे। असल में पद्धती के बराबर लोहे के प्रमिदाओं को लगाना नहीं चाहिए। अगर लोहे के प्रमिदा रखें तो

दिया

साफ करके इस्तेमाल किया करते थे। आजतक भी कुछ देवालयों में मिट्टी के कटोरियों में हो या छोटे मिट्टी के प्रमिदाओं में हो दिया जलाने का सांप्रदाय है। यह जानलें कि जीवात्मा गुरु दिये हुये ज्ञानाग्री से आत्मा के साथ मिलकर जलकर सबको छोडकर परमात्मा में मिलजाने की सूचना ही दीपाराधन का अंतरार्थ है। चाहे मंदिर में कितने भी दिये क्यों न जलाये बत्तियाँ और तेल ज़रुर रखते है इसलिए सभी का एक ही अर्थ हैं। बडेलोगों ने यह बताया कि बडे पूजाये न कर सकने पर भी विशेषार्थवाला दीपाराधन हर घर में करनी चाहिए। आज भी कुछ लोगों के घरों में सुबह शाम को दीपाराधन करने का सांप्रदाय है। फिर भी वे सिर्फ नामकार्थ का काम ही हुआ है और अर्थ शून्य हुआ है यानि उसका कुछ मतलब ही नहीं रहा। कुछ लोग एक ही बत्ती डालकर जलातेरहते है।ऐसा नहीं जलाना या लगाना चाहिए।ऐसे जलाने से आचरण भी गलत किये जैसा होगा। इस ज़माने में कुछ देवालयों में प्रमिदाओं में दीपाराधन किये बगैर करेंट का बल्ब लगाकर नमस्कार कर रहे हैं। अर्थ या

मतलब न रहने पर भी कम् से कम् आचरण रहना तो बेहतर है। लेकिन अगर आचरण भी नहीं हैं तो वह बिलकुल अज्ञान होगा। इसीलिए चाहे कितने भी करेंट के बल्ब जलायें या लगाने पर भी, मतलब के साथ मिट्टी के प्रमिदाओं में दीपाराधन करना अर्थ के साथ किया हुआ सांप्रदाय होगा।

22. ताम्बूल (पान का पत्ता)

पूजा के विधान में ताम्बूल रखना भी है। ताम्बूल में १.पान, २.सुपारी, ३.चूना पूर्वकाल में रख्खा करते थे। ताम्बूल में पान विशाल रहता है। उससे थोडा कम् परिमाण में सुपारी होती है। सुपारी से भी कम् परिमाण वाली चूना है। अगर यह तीन मिले तो लाल में बदलजाने का स्वभाव रखते हैं। तीखापन पान के पत्ते की खासियत है। ऐसा ही सुपारी कटु की खासियत रखती हैं। चूना भी तेज़ (तीखी) है। यह तीन तीन तरीको में खासियत रखते हैं। हमारे शरीर में भी गुणचक्र में विशाल भाग तामस् भाग है।उससे भी परिमाण में छोटी राजस् भाग है। राजस् से भी छोटी सात्विक है। अब हम ताम्बूल में बडीवाली पान को गुणचक्र में विशाल भाग तामस् की तरह कम्पार करले सकते हैं।ऐसा ही सुपारी को राजस् की तरह, चूने को सात्विक की तरह बडों ने हिसाब किया। अंदर से गुणचक्र में तीसरीवाली तामस है,दूसरीवाली राजस् है,पहलीवाली सात्विक है। इसलिए तीन पत्ते, दो सुपारियाँ, एक चूने का टुकडा रख्खा करते थे।जिसतरह ताम्बूल में के तीन चीज़ों को प्रत्येक टेस्ट (स्वाद) है उसीतरह गुणचक्र में के तीन गुण भागों को प्रत्येक आचरणायें हैं।

जिसतरह ताम्बूल में के तीन चीज़ों से लालपन बना उसीतरह गुणचक्र में के तीन गुणों से कर्म कहलानेवाली लालपन बनी है। इसलिए मैं जीवात्मा उन तीन गुणों को जो कर्म का कारण है तेरे सामने ही छोड दे रहा हूँ। बिना गुणवाले मुझे तुझ में मिलाले कह कर माँगना ही ताम्बूल रखने का बाह्यार्थ है समझना चाहिए। इस ज़माने में पूजा के समय में ताम्बूल रखने पर भी सिर्फ पान, सुपारी रख रहे हैं। मगर चूना नहीं रख रहे है। वह कहते है ना कि दो गुण चलेजाने पर भी तीसरीवाली रहनी चाहिए वैसा तीसरावाला चूना न रखना बडा विचित्र है। बिना चूने वाला ताम्बूल दैवसन्निद में बिना मतलब का होता है।

ताम्बूल के साथ अलग अलग क़िस्मों के खाने के चीज़ें नैवेद्य के तौर पर रखना हो रहा है। खीर, दूध,केला, शक्कर, दही का खाना, लड्डू वगैरा वगैरा नैवेद्यों की तरह समप्रित कर रहे हैं। यह सब जो भी पदार्थ या खाने की चीज़ खाने पर मू में उसका रंग नही बनेगा। सब चीज़ों से भी, प्रत्येक से ताम्बूल खाने पर ज़बान लाल होजाता है। पूरे पदार्थो का रंग और बो को ताम्बूल ढक रही है। ऐसा ही आहार यानी खाने के पदार्थों की तरह हमारे शरीर में कई क़िस्म के विषय हैं। मुझ में रहनेवाले कई क़िस्म के तमाम विषयों को तुझे ही समर्पण कर रहा हूँ कहते हुये सब क़िस्म के पदार्थो को नैवेद्द में रखते हैं इस कार्य में इतनी गहरी सूचना बसी हुयी है।सब पतार्थों से बढकर ताम्बूल को इसलिये रख्खे हैं कि शरीर में रहनेवाले तमाम चीज़ यह तीन गुणभाग के ही है । नैवेद्द के रुप में किसी तरह के भी खाने के चीज़ें रख सकते हैं।कुछ पूजायें ऐसे भी है जिस में नैवेद्द के सूरत में मांस रखते हैं।

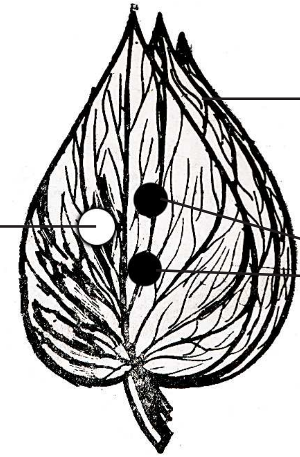

ताम्बूल

चाहे वह शाखाहार नैवेद्द हो या मांसाहार नैवेद्द हो ताम्बूल का रखना सब करते हैं। इससे यह मालूम हो रहा है कि हर विषय तीन गुणों में बसे हुये ही है। यह ज़माने में भी नैवेद्द रखने वाले सब जगह हैं। लेकिन ताम्बूल में चूना रखनेवाले कोई नहीं है। सुना है कि सिर्फ एक तिरुपती के देवस्थान में ताम्बूल में चूने को रखने की सांप्रदाय है। ऐसा ही हमने सुना कि मधुरा के पास का बृंदावन में भी चूना रखने का सांप्रदाय है।

23. फूल का हार

पूर्वकाल में ज्ञानदृष्टी रखनेवाले उनके आराधना में ईश्वर को फूल का हार समर्पित करते थे।ऐसा ही देव समान गुरुओं को भी फूल का हार समर्पित करते थे। आज के ज़माने में राजकीय नायकों को फूल के हार डाल रहे हैं। हज़ार सालों के पूर्व मंदिर में के ईश्वर

को, विद्यालय में के गुरु के सिवा किसी दूसरों को फूल का हार नहीं डालते थे।फूल का हार न मिलने के समय में कम से कम थोडे फूलों से तो ईश्वर की पूजा किया करते थे।कहते थे कि पूजा वह है जो फूल से पैदा हुयी है।इसीलिये सिर्फ पूज्य भाव रखनेवाले गुरुओं के पास, देवालयो में के ईश्वर के पास ही फूलों को इस्तेमाल किया करते थे।सिर्फ आकार रखनेवाले प्रतिमाओं के पास फूलों का इस्तेमाल किया करते थे लिंगाकार वाले ईश्वरालयों में लिंग के पास फूलों का इस्तेमाल न किया करते थे। अब कुछ लोगों में एक सवाल पैदा होसकता है कि लिंग को फूल का हार न डालाजाना, आकारवाले प्रतिमा को फूल का हार डालने में क्या अंतरार्थ है? इसके जवाब में शुरु में हमने कहा था ना कि आकारवाले शरीर में आत्मा ही ईश्वर है। वह ईश्वर शरीर के बीच में फैलीहुयी ब्रह्मनाडी में निवास करते हुये पूरे शरीर में चैतन्य रुप से फैला हुआ है। शरीर के बीच में सर से लेकर नीचे तक फैला हुआ ब्रह्मनाडी में आत्मा है। वह भी पूरे सात नाडिकेंद्रों पर फैली हुई है। फूल के हार को ईश्वर को समर्पित करता हूँ इसतरह का भाव रखते हुये वह माला सात केंद्रों तक रहे जैसा सर के ऊपर से नीचे तक फैले जैसा फूल के हार को सजाते थे। संप्रदाय के अनुसार सर के ऊपर से फूल का हार सजाना आज भी तिरुपति देवस्थान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के प्रतिमा के पास देखसकते है। वास्तव में कहीं पे भी हो किसी भी ईश्वर पर हो इसीतरीके से अमल करना चाहिये लेकिन ऐसे न करते हुये गर्दन से यानि कंठ के पास से पहना रहे है। कंठ के पास से माला रहने की वजह (कारण) से ब्रह्मनााडी के पाँच केंर्दो को ही माला डाले जैसा होगा। बाखी दो केंद्रों को छोडे जैसा होगा। कुछ लोग छोटे मालाओं को पहनाने के कारण यानि कंठ स्थान से हृदय स्थान तक फैलने से सिर्फ दो

स्थानों के तक ही बराबर होजा रहा है। नीचे के तीन केंद्रों को छोडे जैसा हो रहा है। ऐसा करना हरगिज़ संप्रदाय ही नहीं है। इसलिये अगर सामर्थ्य है तो लम्बे माला से सात केंद्रों को माला डालनी चाहिये। वरना थोडे फूलों से हो या एक फूल से हो आराधना करना आच्छा है। ऊपर के एक केंद्र पर रखने से पूरे आत्मा को रख्खे जैसा होगा। ऊपर छोडकर नीचे के पाँच केंद्रों को रखने पर भी कोई फायदा नहीं होगा।

आलय में के ईश्वर के बाद जो पूज्य स्थान में है वह गुरु है। गुरु शरीर में आत्मा स्वरूप होकर सात केंद्रों में फैला हुआ है इसी भाव के साथ फूल के हार को पहनाया करते थे। भक्ति भाव से आराध्य भाव के साथ गुरु के सर पर से डाला हुआ फूलके हार को बाद में गुरु निकाल कर रखता था या सर पर से गरदन पर लटकालेते थे।मंदिर में की प्रतिमा नहीं हिलती इसलिये फूल के हार को वैसे ही सर पर रखते थे। गुरु हिलनेवाला है इसलिये माला नीचे गिरने का मौका है। वैसा न गिरने केलिए बाद में गर्दन पर सरका लेते थे, नहीं तो पूरा निकाल कर सैड में रखदेते थे। जो बी हो सप्त स्थान को माला पहनाना ही मुख्य उद्देश है। पहनाते समय यह भाव रखते थे कि सात केंद्रों में रहकर शरीर को खिलोने की तरह खिलानेवाले ईश्वर को फूल का हार पहना रहा हूँ । गुरु के शरीर में भी वही आत्मा है समझ कर गुरु को भी डालते थे। बाक़ी सब शरीरों में भी आत्मा ही रहने पर भी सबको माला डाले बगैर सिर्फ गुरु और ईश्वर को ही डाल कर यह बताये कि सिर्फ वे दो ही पूज्य है (और कोई नहीं)। आज के ज़माने में पूज्य भाव न रहने पर भी इज़्ज़त के लिये हो या अपने आप को जतालने केलिए हो या पहचान पाने केलिए हो दूसरों को भी माला डालना हो रहा है।ऐसे डालने से आज के

लोगों को यह मालूम नहीं है कि पूज्य कोन है? इसीलिए आलय में के ईश्वर को और ज्ञान बतानेवाले गुरु को ही फूल का हार डालेंगें ताकि यह मालूम होजाये कि सिर्फ ये दो ही पूज्य है।

हमने कहा था ना! कि शिवलिंग को माला नहीं डालनी चाहिए । तो कुछ लोग पूछ सकते हैं कि क्या वह पूज्य नहीं है। उसका जवाब लिंग मानवाकृती नहीं है। आकृती वाले प्रतिमा का इस भाव से माला ऊपर से डाला गया कि मानवाकृती में आत्मा ही ईश्वर हो कर रहता है। लिंग में न आत्मा है न जीवात्मा, लिंग परमात्मा स्वरुप है।सब जगह फैली हुयी चीज़ को लिमिटेड करके फूल का माला नहीं डाल सकते बाक़ी देवालयों जैसा उसका अभिषक आराधना बाखी सब में बहुत ही फरख रहता है। लिंग वह है जो मोक्ष का चिह्न कहलाता है, पुरुषोत्तम का भाव है ऐसे लिंग के सामने आराधना नहीं रहता लेकिन सिर्फ समझ करलेना ही रहता है, यही लिंग की प्रत्येकता है। सृष्टि रहस्य को बतानेवाली लिंग को देखकर उसकी अहमियत को मालूम करलेना ही है मगर आराधना के लायक नहीं है। पूर्व में ज्ञानी लोग जिस तरीके से चले थे उसी प्रकार सही मतलब मालूम कर के चलना हमारी ज़िम्मेदारी है। जैसे हमारी मरज़ी है वैसे न करते हुये यह समझले कर कि हर एक चीज़ का एक हद और आचार रहता है और उन आचार के सही मतलबों को जो देवालयों में बताये गये उसके हिसाब से ही ईश्वर को समप्रित करने के फूल के हार को पूरे अर्थ के साथ सप्त स्थानों को भी समप्रित करते हैं।

24. अभिषेक

देवालयों में के देवों को अभिषेक करते रहते हैं। पूजा विधान में अभिषेक भी एक भाग है। पूर्व के ज्ञानी लोग देवालयों को और देवालयों में होनेवाले कामों को भावयुक्त आचार की तरह मतलबों को बसाकर रख्खे हैं। लेकिन उनकी जानकारी कालगर्भ में मिलजाने से (यानि पोशीदह हो जाने से) कुछ आचार बाक़ी रहने से उनके सही मतलब आज नही रहे। इसीलिए कुछ लोग आचारों को सक्रम से आचरण न करते हुये उनके स्वबुद्दी को जैसा लगा वैसे कुछ कामों को मिलालिये।ऐसे कामों में अभिषेक का कार्य भी एक है। अभिषेक का मतलब प्रतिमा को पानी नहलाना का अर्थ रखता है। पूर्व में गर्भगुडी में के प्रतिमा केवल तीन द्रवों से साफ किया करते थे। वह एक शहद, दो दूध, तीन पानी।अभिषेक कहलाने वाली प्रतिमा का स्नान केवल आकारवाले प्रतिमाओं को ही किया करते थे। बिना आकारवाले शिवलिंग को नहीं किया करते थे। इस ज़माने में शिवलिंग को भी अभिषेक का कार्य कर रहे हैं। ऐसे कई लोग है जो यह समझते हैं कि लिंगाभिषेक ही मुख्य हैं, यह तो बिलकुल सांप्रदाय के विरुद्ध हैं। ऐसा कहना तो और भी बडा मूर्खत्व हैं कि लिंग अभिषेक का प्रिय है। कुछ लोगों को हमारे यह बातें पसंद नहीं आसकते।पसंद आये या न आये तो भी जो लोग सच को जानना चाहते हैं उनसे हम यह कह रहे हैं कि!

हम लोगों ने शुरु में ही बयान करलिये कि लिंग को देवताओं में नहीं मिलाना चाहिये, ऐसा ही लिंग के मंदिर को गर्भगुडी नहीं कहना चाहिये। और हमने यह भी साफ बतादिया कि लिंग को साक्षात् निराकार परमात्मा समझना चाहिये। यह भी कहा था कि लिंग को सिंहतलाट नहीं रखना चाहिये।इन सब का कारण हम जिसे पुरुषोत्तम

कह रहे हैं, जो आत्मा, जीवात्माओं से परे हैं यानि जिसे परमात्मा कह रहे हैं उसे ही प्रतिबिंब की तरह लिंग रूप में देवालयों में दिखाये हैं। इसीलिये लिंग को ऐसा समझना चाहिये कि वह सबसे अतीत है।ऐसा समझलेना चाहिये कि लिंग निराकार ईश्वर है तो बाक़ी सब प्रतिमायें रुपवाले ईश्वर है। लिंग को परमात्मा समझे तो रुपवाले ईश्वर को भगवान समझना चाहिये।लिंग मायातीत है इसलिये प्रतिमा के आचार उसे नहीं रहते।रुपवाले प्रतिमायें भगवान के चिह्न है इसलिए उन प्रतिमाओं केलिये बडोंने प्रत्येक अभिषेक निर्णय किये।भगवान भग से पैदा होकर हमारी तरह ज़मीन पर संचार करता है। इसीलिए भगवान को हमारी तरह गुण भी रहते हैं। गुण ही नहीं बलकि सर्वसाधारण की तरह उसे ज़मीन पर चलना पडेगा।सिवाये एक ज्ञान बोधा के , सब में साधारण व्यक्ति की तरह रहनेवाले भगवान को पहचानना ना मुमकिन है। इसलिए कई बार जब परमात्मा भगवान की तरह ज़मीन पर आया था तो हम उसे पहचान नहीं पाये। सर्व साधारण रहनेवाला भगवान भी गुणों से ही हरकत करता रहता है। उसे भी साधारण इनसान के तरह सात्विक, राजस, तामस कहलानेवाले गुण रहते हैं। वे तीन गुण सर के अंदर ही रहते है। सब की तरह सर के अंदर रहनेवाले गुणों से ही भगवान भी आचरण करने पर भी वह हमारी तरह कर्मबद्द नहीं रहता। जिसतरह कमल के पत्ते पर पानी रहने पर भी गीलापन नहीं लगता है उसी तरह गुणों में भगवान रहने पर भी भगवान को गुणों का फलित कर्म नहीं लगता। नित्य गुणों में रहने पर भी उन गुणों का कल्मश यानि कर्म उसे नहीं लगेगा इसी मतलब के साथ पहले शहद के साथ बाद में दूध के साथ फिर पानी से प्रतिमा का अभिषेक करके नरम नूल के कपडे से पोछते हैं ताकि गीलापन न रहे।

तामस गुण बहुत ही नीच है जो लोग उसमें फसे हुये है वे कई क़िस्म के अज्ञान के हालातों में पडजाते हैं। शहद मीठा रहते हुये और चिपकाहट भी अपने अंदर रखती है। शहद के मीठेपन केलिये उस पर गिरे हुये कीटक (मख्खियाँ) शहद के जिगेटपन से उसमें फंसकर डूब के आखिर में मरजाते हैं। जिस तरह शहद है उसी तरह तामस गुण के छे गुण भी प्रपंच में जीवात्मा को मादुर्‍य को दिखानेवाले होकर उस गुण में फसेहुये जीव को ईश्वर के तरफ जाये बगैर करते हुये अदोगती जन्म में भेज रहे हैं। इसीलिए तामस गुण को शहद के बराबर कम्पार करके वह गुण भगवान के सर में रहने पर भी उसका मालिन्य सर से नीचे उतर गया कहते हुये पहले शहद को सर से नीचे गिरे जैसा प्रतिमा पर डालरहे हैं। बाद में शहद से भी रंग और स्वाद में बहुत ही भिन्न रहनेवाली दूध को राजस गुण से कम्पार करकेदूध को भी सर पर से नीचे गिरे जैसा प्रतिमा पर डाल रहे हैं। शहद और दूध खत्म होने के बाद सात्विक गुण के समान पानी को कम्पार करके पानी को भी उसी तरह डालकर गीलापन को भी न रहे जौसा पोछ कर यह अर्थ को बताये कि उनसे ही परिशुद्ध हुआ है।पूर्व में इसतरह मतलब के साथ अभिषेक रहता था तो आज अभिषेक अर्थहीन होगया। अभिषेक में शहद, दूध, पानी के अलावा घी और दही को भी इस्तेमाल कर रहे हैं। इसतरह घी, दही इस्तेमाल करना आचार के विरुद्ध हैं। अभिषेक इस मक़सद से करते हैं कि आकार वाला और गुण रखनेवाला भगवान गुणातीत है। लेकिन वह परमात्मा जो पैदा नहीं हुआ निराकार होकर जब उसे किसी भी तरह के गुण से संबंध ही नही है तो, ऐसे परमात्मा के उद्धेश से लिंग रख्खा गया तो, उस लिंग का अभिषेक करने में लिंग का ही अर्थ गुम होजाता है यानि बेमतलब होजाता है। इसीलिये हम यह बता रहे हैं कि लिंगाभिषेक ठीक काम नहीं है, आकार प्रतिमाओं

को भी सिर्फ शहद, दूध, पानी से ही अभिषेक करनी चाहिये, तब जाकर वह इंदू धर्माचरण होगा, अगर दूसरे तरीके से करना अधर्मआचरण होगा, यह जान लें कि धर्म प्रतिष्टापना करनेवाले भगवान को अधर्म अनुचित या अयोग्य है। कम से कम अब से तो अर्थहीन हुये बगैर प्रतिमाओं को ही अभिषेक करें।

25. नारियल (टेन्काया)

देवालयों में हो घर में हो चाहे कितने नामालूम पन वाले क्यों न हो बिना नारियल के पूजा नहीं करते। बहुत से लोगों में ऐसा भाव है कि नारियल पोढने पर ही पूजा होती है। टेन्काया को प्रतिमा के सामने क्यों पोढते हैं? अगर कुछ लोगों से इसतरह का सवाल पूछें तो, यह बतायें कि ईश्वर को टेन्काया अप्रित करके उसे हम प्रसाद की तरह लेनेकेलिए वह मुख्य हैं। तो इस जवाब पर फिर सवाल किया कि टेन्काया क्यों मुख्य है? दूसरे क्यों नहीं पोढना चाहिये सिर्फ टेन्काया ही क्यों? इसतरह सवाल करने पर सही जवाब न देते हुये कह रहे हैं कि जैसे बडोंने किया वैसा करना चाहिये मगर इसतरह से विवरण नहीं पूछना चाहिये। और कुछ लोगों से पूछा कि नारियल का पीच यानि नारियल पर रेशम जैसे रहनेवाले धागे या बाल पूरा निकाल कर सिर्फ थोडे ऊपर के बाल रख रहे हैं ना ऐसा क्यों? उन्होने कहा कि जो तरीका पिछले से आरहा है उसे वैसे ही करना चाहिये मगर उसकी विमर्शा नहीं करनी चाहिये।उन्होंने इसतरह इसलिए कहा क्यों कि उसके बारे में वे लोग नहीं जानते लेकिन वास्तव में टेन्काया में बहुत ही अर्थ बसा हुआ है।वह अर्थ को मालूम करने की कोशीष न करते हुये उसे पूजा के सामान की तरह रखले

कर ईश्वर से बेपार कर रहे है। अगर टेन्काया का सारांश मालूम करें तो भक्ती बहुत अच्छी रहती थी। उसका सारांश न जानते हुए कुछ भक्त एक जन चार, एक जन दो, पैसेवाले तो और भी ज्यादा पोढ रहे है। अगर ज्यादा नारियल पोढेतो ज्यादा भक्ती, कम नारियल पोढे तो कम भक्ती होती है क्या? वह गरीब जिसके पास कुछ नहीं रहता अगर उसने नारियल नहीं पोढा तो क्या यह कहेंगे कि उसमें कोई भक्ती नहीं हैं? क्या ऐसा कोई कहसकता है कि ईश्वर उसकी भक्ती खुबूल नहीं करेगा? सबसे मुख्य मन होता है। ईश्वर ने गीता में कहचुका है कि कुछ रहे या न रहे सिर्फ मन है तो उससे बडकर मेरेलिए प्रिय कोई भी नहीं हैं। तो टेन्काया को पूजा विधान में क्युँ लाकर रख्खा है, उसकी खासियत क्या है?

नारियल

टेन्काया भी परमात्मा को मालूम करने में चिह्न की तरह इस्तेमाल हो रही है।इसलिए बडों ने पूर्व में टेन्काया को देवालयों में इस्तेमाल किया। यह काम बडों ने इसलिए किया ताकि नारियल से लोग जाहिल से ज्ञानी बनेंगे। लेकिन वक्त के साथ साथ उसकी मतलब भी चलागया।उसका असली मतलब बतानेवाले भी चले गये। आज के ज़माने में नारियल मानवो ं के और ईश्वर के बीच व्यापार का सामान जैसा बदलगया। जब टेन्काया के गोल रहनेवाला रेशमी बाल निकाल देते है तो वह तीन हिस्सों में दिखता है। उस पर रहनेवाले तीन लिखीरों के कारण वह तीन भागों में दिख रहा है।हर भाग पर आँख की तरह एक गड्ढा है। तीन भागों को तीन आँखें हैं इसलिए टेन्काया को मुक्कंटी (यानि तीन आँखोंवाली) नाम सार्थक हुआ। टेन्काया के तीन भागों के ऊपर थोडे बालों को चोटी की तरह ठहरा रहे हैं। आखिर में रहनेवाली इस चोटी को एक खासियत है।टेन्काया के बालों को ऊपर करके उसके ऊपर रहनेवाले बडे पेट (भाग) को हमारे सामने के तरफ रख के देखेंगे तो बडे भाग के दोनों तरफ दो भाग होते है ना, उन भागों पर आँख (खड्डे) है ना! यह जानलें कि दायें तरफ के भाग को सूर्यनाडी, उस भाग के ऊपर रहने के आँख को उसका नाडी केंद्र कहते हैं, बायें तरफ के भाग को चंद्रनाडी, उस भाग के ऊपर रहने के आँख को उसका नाडी केंद्र कहते हैं। जब सूर्य, चंद्र, ब्रह्मनाडियाँ एक होते हैं तब ही ज्ञान उद्भव होता है। उसके बाद जीव ईश्वर जैसा बदलकर मौत, पैदाइश पाये बगैर चला जायेगा।यह बताने केलिए टेन्काया पर तीन भागों से एक करके चोटी को रखना हुआ कि जो शक्स इन तीन नाडियों का एक करेगा वह योगी कहलाता है।जिसमें तीन नाडियाँ एक होगये है वह बिना जन्म के आत्मा में ऐक्य होजायेगा इसलिए तीन भागों से एक

हुयी चोटी का कोने का भाग आकाश के तरफ दिखा रहा है।जीव उसमें ऐक्य होजायेगा जिसका कोई आकार नहीं है। इसलिए चोटी या बालों का कोने का हिस्सा भी आकाश के ओर इशारा कर रहा है।जिसने तीन नाडियों को एक किया वह ज्ञान के आखरी हिस्से में पहुँचा हुआ होता है। इसलिए नारियल के बालों को भी ज्ञान शिखा का नाम सार्थक हुआ। ज्ञान शिखा यानि ज्ञान का आखरी हिस्सा है। विवेकवान ब्राह्मण उनके सर पर छोटी या बाल इसलिए रख रहे हैं कि!शरीर में ज्ञानशक्ति स्टोर होने की जगह एक सर ही है, इसलिए ज्ञान शक्ति रखने वाले ब्राह्मण बाह्यार्थ के लिये सर में रहनेवाले तमाम बाल निकाल कर सिर्फ शिखा को रखते थे।सर ही जीव का स्थान है,उसके अंदर ही सोचें या खयालें पैदा हो रहे हैं।ब्रह्मज्ञानी खयालों पर जीत हासिल किये हुये होंगें।इसीलिए वे इस भावना के साथ कि हमारे अंदर कुछ भी खयालात नहीं हैं बाहर बताने केलिए सर पर बाल निकाल डालरहे हैं। ऐसा ही टेन्काया के गोल भी जो बाल रहते हैं उसे निकाल दे रहे हैं। सर के अंदर ही ब्रह्मनाडी का सातवाँ केंद्र है ना! उसी के द्वारा ही जीव ब्रह्म के अंदर ऐक्य होना है। ब्रह्मनाडी शरीर के बीच में है। सर पर भी उसका स्थान बीच में ही है। इसीलिए ज्ञानशक्ती रखनेवाले अपने सर पर बीच के भाग में ज्ञानशिखा के नाम से थोडे बाल छोड दे रहे हैं। ऐसा ही टेन्काया पर भी ऊपर बाल छोड रहे हैं। पूर्व में इसतरह किया करते थे। जैसे जैसे वक्त गुज़रता गया वैसे वैसे यह न मालूम होते हुये कि बाल कहाँ पर रखना है, और कौन रखलेना चाहिये, क्यों रखलेना चाहिये बहुत से लोग भूल कर रहे है। ब्रह्मज्ञानी शिव अपने सर के बालों को ऐसे ही छोडदिये बगैर ज्ञानशिखा की तरह घँाटी डालदिये। वह घँाटी ईश्वर के सर के बीच के हिस्से में हैं। ऐसा ही कई महर्षियाँ भी ज्ञानशिखा को सर के बीच के भाग में रख्खे थे। इसतरह कई ज्ञानियाँ अपने

सूर्य, चंद्रनाडियों को ब्रह्मनाडि में ऐक्य करके बाह्यार्थ (बाहर लोगों को बताने) केलिए अपने सरों पर ब्रह्मस्थान यानि बीचवाले हिस्से में उनके बालों को रखके घाँटी डाले थे। ब्रह्मस्थान को छोटे बच्चों के सर पर प्रत्यक्ष से देखसकते हैं। एक साल के अंदर के बच्चों के सर के बीच में ब्रह्मनाडी के स्पर्शा को देखसकते हैं। उस भाग में ही ज्ञानियाँ ज्ञानशिखा को डालते हैं। ज्ञानशिखा आज के ज़माने में बहुत से लोगों में सर के बीच के भाग में न रहते हुये थोडा पीछे जाकर है। बाहर ज्ञानशिखा कहीं पर भी हो चलेगा।हमें अंदर अहमियत वाली ज्ञान रहेतो काफी है। देखा आप लोगों ने टेन्काया की परिशीलना करने से उसमें कितना अर्थ बसा हुआ है।टेन्काया को ज्ञानस्वरुप विषय समझना चाहिये।

जिसतरह आग्री से छोटे छोटे आग्नी के चिंगारियाँ बाहर आये हैं उसीतरह परमात्मा से जीव बाहर आया हैं।एक ही अंश होने पर भी जीव और ईश्वर की इसतरह अलग होगये। इसी तरह आत्म स्वरुप टेन्काया को मारने पर दो टुकडों में टूटजा रहा है। उसमें एक टुकडे को ज्ञानशिखा बच जारही हैं। दूसरे टुकडे को कुछ नहीं बच रहा है। ज्ञानशिखा बचा हुआ टुकडा आत्मा की तरह बगैर ज्ञानशिखा के तीन हिस्सो में बचाहुआ दूसरे टुकडे को जीवात्मा की तरह हिसाब किया जा रहा है। टेन्काया को दो टुकडे में ईश्वर के सामने पोढकर बाह्यार्थ के तौर पर ये दिखा रहे हैं कि एक ही परमात्मा के अंश से तुम और मैं अलग हुये। पूर्व में ज्ञानी लोग इसतरह के भाव के साथ किया करते थे।आज कुछ लोग किसी तरह का भाव न रहने पर भी सिर्फ इच्छायें रखलेकर नारियल पोढरहे हैं। टेन्काया को पोढनेवाले सब उसकी अहमियत को जानलिये तो बहुत की श्रेयस्कर हैं।

टेन्काया को पोढने पर उसके दो भाग हो रहे है ना! वे दोनो टुकडों के अंदर के भाग में सुफेद रंग रहते हुये बिना कल्मष के रहता है। उसका अर्थ यह है कि तुम ईश्वर हो, मैं जीव हूॅ, तुम बिना कल्मष के हो या किसी भी गुणों के बगैर हो। मैं भी तुम्हारी तरह बिना कुछ इच्छाओं के, खयालों के बगैर या निष्कल्म में बदल गया हूॅ, यह बात बाहर बताने केलिए ही दो टुकडे सुफेद है।इसतरह ज्ञानी टेन्काया पोढ कर बाह्यार्थ में बतायें। और दो में बदले हुये तुम और मैं एक होना है कहते हुये बाह्यार्थ से ही दो हाथ मिलाकर दिखायें, उसी को हम नमस्कार कहते हैं। यह जानलें कि बायाँ हाथ आत्मा है और दायाँ हाथ जीवात्मा, ये दोनों हाथों को मिलाना ही जीवात्मा और आत्माओं को एक्य करना। पूर्व में ज्ञानीलोग मुख से कुछ बात न करते हुये उनके अंदर का भाव बाहर टेन्काया के द्वारा, नमस्कार के द्वारा बाह्यार्थ से ईश्वर को बताते रहे।आज के ज़माने में कई क़िस्म के इच्छाओं से पवित्र टेन्कायाओं को अपवित्र कर रहे हैं। यह बात न मालूम होते हुये कि दोनो हाथों को जोडकर दिखाने में जीवात्मा और आत्मा का ऐक्य का अर्थ है हाथों को जोडकर ठहरके कई क़िस्म के इच्छायें माँगनेवाले,न माँगनेवाले चीज़ें भी माँग रहे हैं।

कुछ लोगों को इसतरह का शक भी आसकता है कि नारियल के आँखों में सिर्फ एक आँख को रंद्र (सुराक) गिरता है। बाकी आँखों को क्यों नहीं गिर रहे हैं? और उसमें के पानी को सब तीर्थ जैसा पी रहे हैं या ले रहे हैं। उसका फलित क्या होसकता? इसकेलिये हमारा जवाब यह है कि अगर जीव को परमात्मा तक पहुँचना है तो उसे अपने बीच में रहनेवाला ब्रह्म नाडी में ही ऐक्य होना पडेगा। इसलिए टेन्काया कि आखों में भी ब्रह्म नाडी कहलागयी बडी भाग पर रहनेवाला आँख को ही सुराक गिरेगा। बाक़ी नाडियों

में रहकर मराहुआ जीव आत्मा को नहीं पहुँच सकता। हमारे किये हुये पूजा का फलित टेन्काया के पानी को आवह करके रहता हैं। इसीलिए उसको तीर्थ की तरह ले रहे हैं। वह जो तीर्थ लेते हैं उसमें उतनी ही शक्ती होती है जितनी भाव के साथ उन्होने पूजा की हो। इसलिये बिना भाव का पूजा व्यर्थ है। इससे यह मालूम हो रहा है कि तीर्थ यानि शक्ति से जुडी हुयी है। पूजा विधान का भाव न मालूम होते हुये उसमें की भक्ती के अनुसार न चलते हुये जो पूजा की जाती है वह पूजा और उसका तीर्थ दोनों भी बिना शक्ति के होते हैं।

बहुत से लोग जब टेन्काया को पोढते हैं तो बाल को नीचे के तरफ पकड कर पोढते हैं। इसतरह करना सही तरीका नहीं हैं। जब टेन्काया को मारते हैं तो बाल को ऊपर के तरफ रख कर मारना चाहिये। इसतरह मारने से सीधे हाथ में नीचे का टुकडा बच जाता है।बाल वाला टुकडा बायें हाथ में बचता हैं। फिर दायें और बाये हाथों को मिलाकर दिखाने का भाव यह है कि मुझे तुझमें मिलाले। इसतरह सही भाव से पूजा करें तो उस पूजा में ज्ञानशक्ती हासिल होती हैं। ज्ञान से आगे आगे सही मार्गों को मालूम कर के योग साधनायें कर के ईश्वर में एक्य हो सकते हैं। बगैर उस तरीके के, बिना भाव वाला पूजा व्यर्थ हैं। टेन्काया को लगाये हुये पैसे भी बेकार ही हैं। टेन्काया में, घंटी में, नमस्कार में बहुत ही मतलब बसा हुआ हैं। इस मतलब को मालूम न करते हुये इसतरह कहने से कोई फायिदा नहीं हैं कि दूसरे कर रहें हैं तो हम भी उन्ही की तरह कर रहे हैं।

ब्रह्मविध्या में प्रवेशहुये लोग टेन्काया के बारे में बोलना हमने सुना हैं। उसमें वे लोग टेन्काया को तीन भागों में तीन गुण समझकर कहरहे हैं।तीन गुणों पर जीत हासिल किये बगैर और भी कुछ गुण बाखी रहने वाले टेन्काया को भी थोडे बाल रख रहे हैं। और वे भी

अपने सरों पर थोडे बाल रखले रहे हैं। जो लोग पूरे तरीके से गुणातीत हुये हैं वे बाल को ज़रा भी न रखते हुये निकाल दे रहे हैं। वे टेन्काया को भी बाल न रखते हुये पूरा निकाल कर पोढते हैं। अगर वह मार्ग में टेन्काया को समझलिये तो उस मार्ग में कई संशय शुरू होजाते हैं। कितना ढूँढने पर भी उन संशयों के समाधान नहीं मिल रहे हैं। इसलिये आत्मा ही ऊहा (बुद्धी) को अंपडाकर जो बतायी है वही मैं बता रहा हूँ। अगर ये मार्ग में गये तो एक संशय भी शुरू नहीं होगा। अगर शुरू हुये तो भी उसका जवाब फौरन मिलजायेगा।

26. सर के बाल समर्पण करना

देवालयों के आरधनाओं में सर के बाल मुंडवालेना भी मुख्य कार्य हैं। पूर्व काल के ज्ञानी लोग भावसहित के साथ सर के बाल निकाल कर सरको टकलू बनालेते थे। ऐसा ईश्वर के सन्निधान में उनके मन में जो उद्देश हैं उसे आचरण रूप में दिखायें। वह आचरण का भाव तो पूर्व के बडों के साथ ही खत्म हो गया फिर भी सिर्फ आचरण उस ज़माने से ज्यादा आज ही हैं। वह कहते है ना कि बिना चित्तशुद्दी के शिवपूजा बेकार है ऐसा ही बिना भाव शुद्दी का आचरण भी बेकार है। पूर्व से भी आज के ज़माने में भक्ति ज्यादा दिखने पर भी भक्ति में जो काम कर रहे हैं उनका तो कोई मतलब ही नहीं रहा।अगर देवस्थान में बाल निकाले गये लोगों के पास जाकर पूछने पर कि तुमने बाल क्यों निकलवाये? तो उनके पास से जो जवाब आता है वह यह है कि क्योंकि मेरी इच्छा पूरी हुयी है तो लोग कहते हैं कि बाल निकलवाकर बालों को समर्पित करलो। (इसीलिये करवारहा हूँ) ठीख है तेरी इच्छा तो पूरी हुयी लेकिन तेरे बालों से ईश्वर को

क्या काम? उसके बदले में ईश्वर को पैसे देसकते हैं, अनाज दे सकते हैं लेकिन ये बाल देने में क्या मतलब है? ऐसा सवाल करने पर सही जवाब न देते हुये यह कह रहे हैं कि सबलोग कर रहे हैं इसलिये मैं भी कर रहा हूँ। वैसे भी सब लोग क्युँ कर रहे हैं यह भी किसी को नहीं मालूम।एक को देख के दूसरा कर रहा है मगर यह जानकारी हासिल नहीं करपायें कि आखिर सामनेवाला ऐसा क्युँ कर रहा हैं? यह विषय में सब में किसी भी तरह का अवगाहन यानि कोई भी इस के बारे में वाखिफ नहीं हैं। न करनेवाला जानता है न देखनेवाला इसलिये देखनेवाला करनेवाले की तरह बदलजाना बाल निकलवाना बेमतलब की भक्ती हुयी है।

पूर्वकाल में असली भक्ती रखनेवाले हुआ करते थे। वे ईश्वर के भक्ति के कामों में बहुत ही अर्थ के साथ जुडे हुये काम किया करते थे।उस ज़माने में वे देवालयों में ज्ञानयुक्त भावों के साथ रहा करते थे।देवालयों में किसी भी तरह के इच्छायें नहीं माँगते थे।गोपुर के पास रहनेवाले इच्छाओं को द्वजस्तंभ के पास ही खत्म करलेते थे।अगर कोई खयाल बाक़ीरहता है तो घंटानाद में मन को मिलाकर मन को निर्मल करके ईश्वर पर लग्न करते थे।मन में इच्छायें रहने पर भी उनको खत्म करने केलिए देवालयों को आकर वहाँ की आध्यात्मिकता को बडालेते थे। और ज्ञानी लोग यह अपने आचरण में दिखाते थे यानि अपने बाल निकलवाकर ईश्वर के सामने कहते थे कि हमारे मन में किसी भी तरह के इच्छायें नहीं हैं। एक जब ज्ञान जाना हुआ एक भक्त तिरुपति वेंकटेश्वर आलय को जाकर ऐसा समझा कि इच्छाओं का, खयालों का निलय सर है, सर पर के बालों की तरह सर के अंदर खयालें भी बेहिसाब रहते हैं, तेरे सन्निधान में आया हुआ मुझे प्रपंच के कोई खयाल या इच्छायें नहीं हैं, यह बात

ईश्वर को बतालेने केलिए सर पर के सब बाल मुंडवालूँगा फिर उसने अपने सर को झुका कर ईश्वर को दिखाते हुये कहा कि मैं संकल्परहित होगया हूँ, जैसे सर के ऊपर बाल है वैसे सर के अंदर इच्छायें रहना भी सहज ही है, मैं मेरे सर के अंदर के इच्छाओं को खत्म करलियाँ हूँ, यह बात तुझे बताने के लिये बाह्यार्थ के तौर पर मेरे सर के बालों को हटादिया हूँ। वह दृश्य को और एक दूसरा व्यक्ती देखा जिसे कुछ भी जानकारी नहीं मालूम (यानि क्यों वह पहला व्यक्ति ईश्वर को अपना मुंडवाया हुआ सर दिखा रहा है) । उस दूसरे व्यक्ती ने उस काम को ऐसा समझलिया कि इस तरीके से करने से शायद कुछ फायदा मिलेगा, इसीलिए उस व्यक्ति ने ऐसा किया होगा, फिर फौरन उसने ईश्वर से मन्नत माँगी कि अगर मुझे फायिदा मिला तो मैं भी उस पहले व्यक्ति की तरह अपनी सरको मुंडवालूँगा। इसीलिए आज उसी विधान को सब ऐसा समझ रहे हैं कि वह तरीका इच्छायें माँगने के लिए ही हैं, ईश्वर इच्छाओं को पूरे करन वाला हैं, उस काम के बदले (प्रतिफल) में बालों को देना चाहिये।पूर्व का ज्ञान मिटजाने के कारण आज ईश्वर के और हमारे बीच बाल रिश्वत में बदलगये। इस बात के निशान के तौर पर पूर्व में सर पर बाल निकाल दिया करते थे कि सर के अंदर के सब खयाल खत्म होगये लेकिन आज वह भाव नहीं हैं मगर सिर्फ टकला बनवारहे हैं। इसीलिए वेमना योगी सहाब ने उनके पद्य में कहा सर मुंडवालेने से क्या उसके अंदर के खयाले भी खत्म होजायेंगे? (यानि नहीं होंगे)

उन दिनों में इस भाव से सर मुंडवाते थे कि मुझे किसी भी तरह के इच्छायें नहीं हैं तो आज सर भर इच्छायें रख कर अगर वे (मन्नतें) पूरे हुये तो बाल निकलवालूँगा कहना क्या यह गलत तरीका नहीं है?गलत तरीके से माँगना ही नहीं ऊपर से ऐसे इच्छायें माँग

रहे हैं जिन्हे माँगना ही नहीं चाीहये।भाईयों को मरगये जैसा करके अगर जायेज़ाद पूरा मुझे ही मिला तो मैं बाल मुंडवाइऊँगा,साँस के एक लौते बेटे को मरगये जैसा करके साँस की पूरी जायेज़ाद अगर मुझे मिला तो सर के बाल दूँगा, बिना पडे, बिना महनत किये विद्यार्थियो को पास करवाये तो सर मुंडवालूँगा इसतरह के मन्नतें माँग रहे हैं। पूर्व में बडों ने बिना इच्छाओं के तरीके के तौर पर सर मुंडवाते थे तो आज टकला बनजाऊँगा कह कर मन्नत माँग के विपरीत इच्छायें माँगना देखें तो ऐसा लग रहा हैं कि धर्म अधर्म में बदल गये।चलिये अब जो आचरण अधर्मों की तरह मौजूद है उन्हे वापिस धर्मो में बदल कर हम तो कम से कम सही तरीके में अमल करते हैं।

27. नमस्कार

ईश्वर के आराधनाओं में से नमस्कार बहुत ही मुख्य है। दोनो हाथों को जोडकर दिखाने को नमस्कार कह रहे हैं। कुछ लोग कहते हैं नमस्कार वह है जो सामने वाले के ओर पूज्य भाव या इज्ज़त का भाव हाथों के द्वारा प्रकट किया जाता हैं। अबतक तो वह सही ही है मगर पूर्व के बडों में और थोडा भाव रहता था। दो अलग से रहने वाले हाथों को देवालयों के प्रतिमा के सामने दिखाते थे। अब तक तुम और मैं अलग अलग थे।इस भाव से दो अलग अलग हाथों को जोडकर दिखाते थे कि अब से मैं तुम में मिलजाना चाहता हूँ। नमस्कार उन दिनों के लोगों के भाव में जीव और ब्रह्म ऐक्य संधान या मोक्ष की तरह रहती थी।पूर्व में ज्ञान जानने वाले रहा करते थे इसलिये उनके भाव में ऐसा रहता था कि मंदिर में का ईश्वर ही

ज्ञानशक्ति रखनेवालों के शरीरों में मौजूद है। इसीलिए जब उनके सामने कोई ज्ञानी हो या गुरू हो आजाता तो यह समझते थे कि उनमें दैवत्व है फिर फौरन उसी भाव के साथ उनके अंदर के ईश्वर को नमस्कार किया करते थे। वह सांप्रदाय आज भी मौजूद है लेकिन उनमें वह भाव नहीं हैं कि हम उनमें के ईश्वर को नमस्कार किया है।आज इसलिये नमस्कार कर रहे हैं कि आगे वाले से कुछ काम करवाने केलिये या तो सामने वाले को अपने तरफ करलेने केलिये। पूर्व में जो लोग ज्ञान रखते थे वे हर इनसान में ज्ञान को पकड के दैव को देखते थे।लेकिन आज हर इनसान में ज्ञान को देखे बगैर प्रपंच का मुखाम (Position) देख रहे हैं।पूर्व में ज्ञान के हिसाब से पूज्य भाव रहता था तो आज दर्जे को पकड कर पूज्य भाव हैं। पूर्व में अपना पैर अगर दूसरों को लगता है तो उनके जिस्म में भी ईश्वर मौजूद है समझकर वही भाव के सात फौरन नमस्कार किया करते

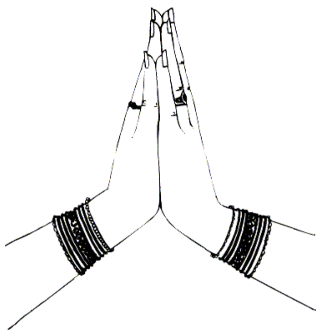

नमस्कार

थे।अब भी कुछ जगहों में यह आचार मौजूद है। चाहे कहीं भी किसी भी तरह का भाव रहे मगर देवालयों में तो नमस्कार का अर्थ यह है कि मुझे तुझमें मिलाले इसीलिए दो हाथों को जोड रहा हूँ अगर सब लोग इसी इरादे के साथ मंदिर में नमस्कार करेंगे तो नमस्कार की

अहमियत, अर्थ रहेगी। वरना वह नमस्कार उस नमस्कार के बराबर माना जायेगा जो रौडियों को, गुन्डों को, राजकीय नायकों को, पोलीसों को किया है। लेकिन यह समझलें कि देवालयों में का नमस्कार प्रत्येक है।

28. शठगोप

आलय के पूजा में पूजारी भक्तों को शठगोप सर पर टच कराके भेजते हैं। टोपी के आकार वाले शठगोप सर पर रखवाले ने से भक्तों को एक तरह का सुकून के अलावा उससे क्या मिल रहा है या उसका फलित क्या है? किस मक़सद से यह कार्य को रख्खा है? इस तरह न शठगोप रखनेवाले योचना कर रहे है न ही रखवालेने वाले।कुछ आलयों में शठगोप तक नहीं है। सिर्फ तिरुपति वगैरा कुछ बडे आलयों में ही शठगोप का इस्तेमाल हो रहा है। असल शठगोप क्या चीज़ है ज़रा उसके बारे में बयान करलेंगें।एक चीज़ को दिखे बगैर छिपालेने को गोप्य से रखना कहते हैं ।जो चीज़ मौज़ूद है उसे रहस्य में रखते हुये बाहर दिखे बगैर करना भी गोप्य से रखना ही होता है। जिसे रहस्य में रख्खा है वह एक विषय हो सकता है या एक वस्तु भी हो सकता है। कुछ लोग अपने अंदर की बात को किसी को मालूम हुये बगैर बहुत ही गोप्य से रख सकते हैं। गोप्य का शब्द और उसका अर्थ आज भी रहने पर भी सिर्फ देवालयों में तो गोप्य जाकर गोप जैसा बदल गया।पूर्व शठगोप्य का शब्द आज शठगोप होगया।

कुछ प्रमुख्य देवालयों में शठगोप भक्तों के सर पर ही रख के भेजदेते हैं। अगर बडे लोग आशीर्वाद दिये तो भी या शठगोप रख्खे तो भी सर पर ही रख्खेंगें क्योंकि हमारे सर में ही गुण और

गुणों से आनेवाले कर्म वगैरा मौजूद हैं। आलय में पूजा खत्म होने के बाद भक्त को सर पर ही शठगोप रखने में अंतरार्थ यह है कि!

हमारे शरीर में ऊपर सर में ही कर्मजनित गुण हैं। वे गुण अच्छे और बुरे इसतरह दो क़िस्मों में विभजित है। उसमें बुरेवाले छे गुणों का एक समूह, ऐसा ही अच्छेवाले छे गुणों का एक समूह है। इसका मतलब अच्छे बुरे गुण एक एक शट वर्गो में विभजित है। काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर कहलानेवाले छे बुरे गुण एक शट वर्ग है तो दान, दया, औदार्य, वैराग्य, विनय, प्रेम कहलानेवाले छे अच्छे गुण एक शट वर्ग हुये।शट यानि छे, समूह यानि वर्ग है।बुरे शट वर्ग से पाप, अच्छे शटवर्ग से पुण्य आना सत्य है। अगर परमात्मा में ऐक्य होना है तो अच्छे, बुरे दोनों कर्मफल खत्म होजाना चाहिये। इसलिए मंदिर में गया हुआ भक्त को छोटी टोपी जैसी परिकर को सर पर रख्खे यह संदेश देते हुये शठगोप्य कहते थे कि दो क़िस्म के कर्मो को तुम्हे खत्म करलेना होगा। पूर्व में एक भक्त के सर पर बराबर होनेवाले परिकर (Instrument) को दो बार रख्खा करते थे। लेकिन आज एक बार ही सर पर रख रहे हैं। एक बार रखना अशास्त्रीय काम है। दो बार रखने में मतलब है। एकबार जब रखते थे तब शटगोप्य, दूसरी बार जब रखते है तो शटगोप्य कहा करते थे। इसतरह दो बार रख कर दो मरतबह शटगोप्य कहने में कहने का अंतरार्थ यह है कि! जब पहली बार रखते है तब तेरे सर में के बुरे गुणों का समूह छे ऊपर दिखे बगैर चलेजाना चाहिये कहते हुये शटगोप्य कहते थे।ऐसा ही जब दूसरी बार रखते हैं तब सर में के अच्छे गुणों का समूह भी गोप्य से रहना चाहिये इसी भाव के साथ दूसरी बार भी शटगोप्य कहते थे इसतरह इस्तेमाल किये जाने के परिकर को फलाना काम के लिए हम इसे इस्तेमाल कर रहे हैं कह

कर हमेशा याद रहे जैसा उसे शटगोप्य नाम रख्खे हैं। थोडे दिनोंके बाद उसका नाम शठगोप्य होगया।काल क्रम में आज भी शठगोप नाम से कुछ देवालयों में अभी भी मौजूद है। शटगोप्य शठगोप की तरह नाम में बदलाव आने पर भी आचार में दो बार सर पर रखना जाकर एक बार रखने का आचार आने पर भी मतलब तो आज बिलकुल ही खत्म होगया। ऐसा इंदुओं का आचार बहुत ही नाश होकर सिर्फ नाम के वास्ते बचकर है। ऐसे बचे हुये आचार को वापस जान डालना है तो शठगोप को शटगोप्य नाम रख के, एक बार सर पर रखना छोडकर दो बार सर पर रख के, दो बार जब सर पर रखते है तब ऐसा मन में समझे कि गुण का समूह खत्म होजाये। देवालय के पूजाओं में अंतरार्थ भक्त ईश्वर में ऐक्य होने के लिए है तो, शठगोप सर पर दो बार रखना अच्छे बुरे जब दो क़िस्म के गुण दबजाते हैं तब तुम मुझ में ऐक्य हो जाते हो, यह अर्थ ईश्वर ने भक्त को बताया है।बहुत ही अर्थ के साथ हमारे बडोंने जो आचार रख्खे हैं उनको आज के ज़माने में कोई भी मालूम न करसकना बहुत ही विचारकर विषय है।

29. प्रदक्षण

देवालय के पूजा के विधानों में प्रदक्षण करना भी हैं। पूर्व काल में सिर्फ पाँच बार ही प्रदक्षण किया करते थे ।इस ज़माने में ऐसे लोग मौजूद है जो बेहिसाब से करते हैं। पूरे प्रपंच में परमात्मा की शक्ती फैली हुयी है। **मयाध्यक्षेण प्रकृति स्सूयते सचारचरम** इसके प्रकार पूरे प्रकृती पर परमात्मा ने अध्यक्षत रख्खा हुआ हैं। परमात्मा को आधार करले के प्रकृती है। प्रपंच कहलानेवाली चक्र परमात्मा को

धुरा (Axle) बनालेकर घूम रही है। प्रकृती पाँच भागों में विभाजित है। प्रकृती के पाँच भागो में ही सर्व जीव फसकर हैं।पूर्व में प्रदक्षण करना आचार की तरह रहता था वह इसलिए कि तुम (ईश्वर) धुरा की तरह हो, मैं (जीव) प्रकृती के चक्र में फसकर घूम रहा हूँ। इस प्रकृती के पाँच भागों से मुझे विमुक्त करो। पूर्व में प्रतिमा के सामने से शुरू होकर चक्र जैसा घूमते हुये हर चक्कर में प्रतिमा के सामने ऐसा माँगते थे कि पहलेवाली आकाश से मुझे विमुक्त कर। ऐसा ही दूसरे बार चक्कर लगाकर माँगते थे कि दूसरी भाग हवे से रक्षा करो। तीसरा चक्कर लगाकर अग्नि से बचाओ, चौथा चक्कर लगाकर कहते थे कि पानी से बचाओ, पाँचवा चक्कर लगाकर कहते थे कि ज़मीन से बचाओ। यह जानलो कि इसतरह माँगना ही पंच प्रदक्षण है कि पंच भूतों से विमुक्त कर के मुझे तुझ में मिला लें। आज के ज़माने में प्रतिमा के गोल घूम रहे हैं। यह न जानते हुये कि क्या माँगना चाहिए एक तरफ प्रपंच के विषयों को दूसरों से बात करते हुये प्रदक्षण कर रहे हैं। हिसाब से इतने ही करनी चाहिये कह कर समझ रहे हैं लेकिन यह बिलकुल नहीं सोच रहे हैं कि हम वास्तव में प्रदक्षण क्यों कर रहे हैं? कुछ लोग तीन चक्कर लगाकर खत्म कर रहे हैं। कुछ लोग पाँच से भी ज़्यादा चक्कर लगा रहे हैं । पाँच से ज़्यादा हो या कम हो वह अर्थ हीन है। अर्थ के साथ जुडे हए प्रदक्षण सिर्फ पाँच ही करनी चाहिए। जिनको मालूम नही है उनको भी यह बताएँ कि इसका असली मतलब यह हैं और आचारण किये जैसा करने से भक्तिमार्ग के आराधना पद्दती साफल्य हो सकती है।

30. कपूर

पूर्व में भक्त देवालयों में जाकर घंटी बजाकर, नारियल पोढकर, हाथ जोडने के बाद कपूर जलाकर ईश्वर के सामने रख्खा करते थे। उसका अर्थ यह है कि रंग, रूप, गुणवाले मुझे ज्ञानाग्री के द्वारा जलाकर तुझ में को ऐक्य करलो कहते हुये उसे बाह्यार्थ से दिखाने केलिये रंग, रूप, बो वाले कपूर को आग्री से जलाकर ईश्वर के सामने रखते थे। देखते देखते ही कपूर अग्री से दहनकिये जाकर शून्य में ऐक्य होजाता है। रंग, रूप, बो वाले कपूर शून्य में मिलजाने के बाद यह कहने का मौका नहीं रहता कि वह फलाना जगह है। ऐसा ही जीव भी अपने अंदर के कर्मो को ज्ञानाग्नी से जलादेने के बाद शून्य में मिलजाता है। बाद में उसे भी यह कहने का मौका नहीं हैं कि वह फलाना जगह है या फलाना जगह में नहीं है। जिन लोगों को यह नहीं मालूम कि कपूर जलाने में भी इतना अंतरार्थ है वे पूजा खत्म होते ही फौरन मंगलआरती देना है समझकर कपूर नहीं है तो काटन (Cotton) के बत्तियाँ जलाकर आरती देते हैं। यह ठीक तरीका नहीं हैं। ज्ञानीलोग अपने अंदर के भाव को बाहर दिखाने केलिये शून्य में ऐक्य होनेवाले कपूर को जलाकर दिखाये। अगर कपूर नहीं हैं तो उसके बदले में हम शून्य में न मिलनेवाले बत्तियों को जलायेंगे तो वह सही तरीका कैसे होसकता है? इसलिये कपूर नहीं है तो नमस्कार से ही पूजा खत्म कर सकते है। पूर्व में पूजायें सब जानकर किया करते थे। उससे सार्थकता पाते थे। इस ज़माने में कुछ न जानते हुये भी, ज्ञानीलोग कहे हुये बातों को भी बेकार समझते हुये उसकी कोई खदर नहीं कर रहे हैं। पूर्व में आग्री से दहन होरही कपूर को खामुश से देखते रहजाते थे। वे इस भाव से किया करते थे कि हम भी इसीतरह ज्ञान कहलानेवाली आग्री के ज़रिये कर्म दहन होकर हर जगह फैलजाना चाहते हैं। क्योंकि शुभकर भाव के साथ

कपूर की आरती

किया जारहा हैं इसीलिये उसका नाम मंगलआरती रख्खा गया। मंगल आरती पर हस्त रखके कुछ लोग करना हो रहा है। कुछ लोग दोनो हाथों को रख के आँखों को लगाले रहे हैं। मंगल आरती के समय घंटानाथ करना भी है। पूर्वकाल में घंटानाथ हो, नमस्कार हो, आँखों को लगालेना हो नहीं किया करते थे। मंगलहारती दूर रहने पर उसे निश्शब्द से खामुश से देखा करते थे। जब वह पास में रहता है तब जलरहा आरती पर एक हस्त रखते थे। पूर्व में आत्मा ज्ञान रखनेवाले देवालय के मंगलआरती पर हस्त रख कर इसतरह शपथ किया करते थे कि मैं भी इस आरती कपूर की तरह शून्य में मिलजाऊँगा। शपथ करने के बाद वैसा ही बरताव करते थे। पूर्व में भाव या मतलब के साथ हाथ रखनेवालों को देख कर जिन्हे भाव नहीं मालूम वे कुछ फायदा होगा समझ कर आरती पर हाथ रखा करते थे। यह मालूम न होते हुये कि एक हाथ को रखना चाहिये वे दो हाथ दिखाकर आँखों पर रखले रहे हैं।

आज के लोगों को यह बात नहीं मालूम कि पिछले के लोग शपथ करने केलिये ही कपूर हारती पर हाथ रख्खे थे। हम यह चाहते हैं कि कम से कम अब से तो आरति को बत्तियों से न करें भाव के साथ बराबर होनेवाले शून्य में मिलजानेवाले कपूर को ही जलाये। कपूर को जलाना ही नही उस पर तुम्हारा सीधा हाथ रख के यह शपथ करना चाहिये कि मैं भी इसतरह ज्ञानाग्नि से दहन होकर कपूर की तरह शून्य परमात्मा में ऐक्य होजाऊँगा।

31. गोविंद

नामम् वाले देवालयों में गोविंद कह कर ज़ोर ज़ोर से पुकारना हम देखते रहते हैं। प्रत्येक से तिरुपति में गोविंद कहना ज्यादा है। बाक़ी देवालयों में भी भजन करने की जगह भजनगाना खत्म होते ही अंत में गोविंदा कहते हैं। ऐसा ही जब एक इनसान मरजाता है तो उसके शव (लाश) को ढोते हुए गोविंदा पुकारते हैं। और अगर एक इनसान जुये (पत्तों) के खेल में अपना पैसा गवाकर खालि हाथ होजाता है तो तब भी गोविंदा कहना होरहा है। भजन के अंत्य में, ज़िदगी के अंत में, जिस समय दिवाला उठाया उसवक्त गोविंदा कहना अंत्यस्थिति को ज़ाहिर कर रहा है। गोविंदा शब्द का मतलब खत्म होगया के है। पूर्व में गोविंदा का शब्द गाना खत्म होजाने के बाद, जीवित खत्म होजाने के बाद, धन खत्म होजाने के बाद इस्तेमाल करते थे।आज तक भी ऐसा ही पुकार रहे हैं। देवालयों में जाकर गोविंदा कहना आज तक भी है। फिर भी हम लोगों ने गोविंदा को ईश्वर का नाम समझा।लेकिन किसी को यह नहीं मालूम कि वह शब्द ईश्वर का नाम नहीं वह अंत्यदशा को बताने वाली एक

निशान है। पूर्व काल में देवालय में प्रवेश किये हुये लोग पूजा का पूरा तरीका खत्म होने के बाद गोविंदा कहा करते थे। पूर्व में इस भाव से गोविंदा कहते थे कि मेरा पूरा कर्म नाश करके ऐसी हालत में लेजाओ कि कुछ कर्म बाखी ही न रहें।यह जानलें कि गोविंदा गोविंद कहने में अंतरार्थ यह है कि प्रपंच में पूरा कर्म नाश करवाकर मौक्ष दिलवादो। यह ज़रुर याद रख्खे कि गोविंद शब्द ईश्वर का नाम बिलकुल नहीं है। और थोडा गोविंदा गोविंद कहने को गौर करें तो यह मालूम हो रहा है कि!

कहीं भी देखलो गोविंद का शब्द दो बार पुकारेंगे। यह शब्द दो बार पुकारने में भी शब्द शब्द में थोडा फरख हैं। पहले पुकारेजाने वाला शब्द गोविंदा...इसतरह उसे दीर्घ रहता है। दूसरी बार पुकारेजाने वाले शब्द में गो....विंदा ऐसा दीर्घ रहता हैं। वास्तव में गोविंद शब्द का अर्थ तो एक ही है तो सवाल यह पैदा होता है कि वह शब्द क्यों दो बार पुकारा जारहा हैं? इतना ही नहीं पहले गोविंदा में दा को ज्यादा खींचना दूसरी बार गो...विंदा में गो को ज्यादा खींचने में कुछ न कुछ विशेषता ज़रूर होगी। आखिर वह विशेषता क्या है? यह भी सवाल ही है। अगर इन के जवाबों के लिये ढूँढे तो चरित्र में मालूम हो रहा है कि कृता युग में ही यह शब्द मौजूद हैं और उस ज़माने में ही महर्षी सहित गोविंदा शब्द पुकारते थे। उन दिनों में ही ज्ञानी लोग गोविंदा शब्द को एक अर्थ बनाकर उस अर्थ के बराबर ही दो बार गोविंद शब्द को पुकारे जैसा, वह भी एक दूसरे में सिर्फ थोडा फरख रहे जैसा दिखा कर रख्खे थे।उन दिनों में वे लोग जो भी करते थे वह भविष्य में मानव को ज्ञान दिये जैसा योचना करके किया करते थे। शाश्वित से ज्ञान को प्रबोधित करनेकी उस ज़माने में उनका क्या खयाल है वहीं जाकर उन्हीसे पूछकर मालूम करते हैं।

गोविंदा शब्द का अर्थ **अब कुछ बाक़ी नहीं रहा या सब कुछ खत्म होगया** इस अर्थ को उस शब्द में जमाये थे। जिन्हे मालूम है और जिन्हे नहीं मालूम वे सब लोग शव को लेकर जाते समय वही अर्थ के साथ कह रहे हैं। जिन्हे नहीं मालूम वे लोग यह रिवाज है शायद इसीलिए कहना चाहिए समझकर कहने पर भी योचना करनेवालों को तो यह ज़रूर मालूम हो जायेगा कि संदर्भ वही है। ऐसा ही जुए के खेल में जब सबकुछ खोदेते है तब भी यही शब्द इस्तेमाल कर रहे हैं। वहाँ भी खत्म होने का इशारा देनेवाला शब्द ही है। चाहे अब यानि इस ज़माने में कौन कौनसे संदर्भ में भी इस्तेमाल करलें पूर्व में तो सिर्फ ईश्वर के पास गोविंदा कहते थे। उस वक्त दैवसन्निद में यानि देवालय में प्रतिमा के सामने ऐसा कुछ नही ं है जो मुझे इस जगति में चाहिये इसतरह के अर्थ के साथ गोविंदा.....कहते थे, ऐसा ही शरीर के अंदर लगलेने वाला कर्म भी कुछ नहीं है इसतरह का अर्थ रहे जैसा गो.....विंदा कहते थे। यानि बाह्य से रहनेवाले चीजों पर किसी तरह का भी आशा वगैरा गुण नहीं है, ऐसा ही शरीर के अंतर्गत में लगरहा कर्म भी कुछ नहीं है कहते हुये दो गोविंदाये थोडा फरख के साथ कहा करते थे। और भी अच्छी तरह से समझ में आना हे तो बाहर के संबंध के बगैर ब्रह्मयोग, अंदर की संबंध के बगैर कर्म योग में हूँ, इसतरह के मतलब से बाह्य तौर पर एक गोविंदा, अंतर्गत के तौर पर एक गोविंदा कहते थे।

दो भी योग होने पर भी उनमें थोडा फरख रहने से गोविंद कहनेवाली बात में भी थोडा फरख दिखाना चाहिये समझकर उस ज़माने के बडे लोगों ने ही कहाँ था।दो तरीके यह बताने के लिये ही है कि अब कुछ कर्म बाखी नही है फिर भी वे दो अलग अलग है यह मालूम हुये जैसा एक के आखिर में दीर्घ और एक के पहले में दीर्घ

रख्खे थे।दो बार पुकारने में वह भी थोडा फरख के साथ सब को मालूम हुये जैसा पुकारना उसदिन रहता था।आज वह अर्थहीन होगया। कहनेवालों को उसके बारे में पूरा न मालूम होने से उसमें का ज्ञान संदेश प्रबोधित नहीं हुआ। उसदिन इंदू धर्मों में मुख्य धर्म की तरह रहनेवाला गोविंद शब्द आज उसका अहमियत खो बैठा।अर्थ न रहने पर भी आचरण के रुप में गोविंद बचके रहने पर भी उन लोगों को जो यह कहते हैं कि गुरु के पास हम सब कुछ मालूम किये है, हमारा गुरू बहुत ही बडा है, बहुत से साल हमारे गुरु ने कही हुयी बातों को अच्छी तरह से हज़म करलिये वैसे लोगों को गोविंदा शब्द दो बार कहने में क्या फरख है न मालूम होना देख रहे हैं तो तुम लोग संपूर्ण ज्ञानी नहीं बनें जैसा ऊपर चिंगारि डाले जैसा हुआ।हम यह चाहते हैं कि पूरे ज्ञान का आचरण न रहने पर भी कम से कम पूरा ज्ञान तो मालूम करनी चाहिये।अर्थ के साथ एक बार गोविंदा गोविंद कहना अच्छा हैं।

32. तालाब (कोनेरु)

हत्तल इमकान देवालय नदी के किनारे ही बाँधते थे।थोडे देवालयों को नदियाँ खरीब न रहने से आलय के समीप में कोनेरु को बाँधते थे।टोटल्ली देवालय नदी के पास हो या चशमें (तालाब) के पास हो रहते थे।साल को एक बार होनेवाले तिरुनाल के समय में छोटा सा कश्ति तय्यार कर के नदी पर हो या तालाब पर हो उस कश्ति में उनके देवों को पार कराते थे।उसे तेप्प उत्सव कहते थे। देवालय उनमें के पूजाओं को परमार्थ समझकर किया करते थे। इसलिये तेप्प उत्सव में की परमार्थ को भी हमको जाननी चाहिये।

तेप्प उत्सव लिंग को नहीं करनी चालिये। रूपवाले ईश्वरों को ही करना चाहिये। क्यों कि परमात्मा जब भगवान की तरह पैदा होता है तो गुणों से अनेक अच्छे बुरे कार्य करते हुये उन कार्यों के द्वारा संभव होने वाले पाप पुणय कहलानेवाले कर्मो से वे पाक रहता है यानि उसे कर्म से बचने का तरीका मालूम है। मैं इसतरह हूँ। गीता में भी कहा कि तुम भी पिछले जनम के कर्मो के कारण आनेवाले सर्व काम करते हुये मेरीतरह ही नये कर्म पाये बगैर रहें। वह संदेश ही तेप्प उत्सव का भाव है।कलुष जलदि को छोटे कश्ति से पार करसकते हैं।यह बात को तेप्प उत्सव में दिखाये हैं। ऐसा ही कर्म कहलानेवाली समुद्र को ज्ञान कहलानेवाली छोटी कश्ति से पार करसकते हैं यही बात को तेप्प उत्सव में दिखाये हैं।यह बात अच्छी तरह जानलें कि भगवान वह है जो गु'ण रखता हो।वह गुणों से संभव होने वाले कर्मो को अपने ज्ञान से पार करके जा रहा है यह बात बताना ही तेप्प उत्सव का मखसद है। ऐसा ही हम भी असली ज़िदगी में ज्ञान से कर्म को पार करसकते है यह भाव पर आकर ज्ञान को कमालेना चाहिये ज्ञान वह परिकर है जिससे कर्म नहीं लगता। तेप्प उत्सव सांप्रदाय का अर्थ यह है तो कुछ देवालयों को तो न नदी है न कोनेरु। कुछ देवालयों को नदी कोनेरू रहने पर भी तेप्प उत्सव नहीं कर रहे हैं। देवालयों को बिना तालाब के कोनेरु के बाँधना और तालाब मौजूद रहने के देवालयों मे ंतेप्प उत्सव न करना सांप्रदाय के विरूद्ध है, अर्थ हीन है।सब रहने पर भी तिरुपति विजयवाडा देवस्थानों में तेप्प उत्सव हो रहे है फिर भी उनका भाव मालूम न करना बहुत ही अजीब है।

33. ऊरेगिंपु

(गाँव में ईश्वर का प्रदर्शन या जल्सा करना)

हमेशा देवालय में रहनेवाले ईश्वर को संवत्सर (साल) को एक मरतबा ऊरेगिंपु करना हो रहा है यानि गाँव में उसका प्रदर्शन कर रहे हैं (इसतरह के प्रदर्शन को तेलुगु ज़बान में ऊरेगिंपु कहते हैं)। गाँव में रहनेवाले देवालय के अंदर सब लोगों को जाने की आदत मौका नहीं रहता। ऐसे लोग सब इश्वर के बारे में जानने के लिये आलय के ईश्वर को प्रति बिंभ को गाँव के सब गल्लियों में घुमाकर ऊरेगिंपु करते थे। गाँव के सब लोग जानने केलिये आलय में के ईश्वर को गल्लियों में लाने को पूर्वकाल में ऊरु एरिगिंपु कहा करते थे। एरिगिंपु यानि खयाल या याद या ज्ञापक में लाना मतलब जिस ईश्वर के बारे में भूलकर ज़िदगी जी रहे हैं उसके बारे में याद दिलाने को एरिगिंपु कहते हैं। जैसे वक्त बदलता गया उसके साथ साथ यह ऊरु एरिगिंपु का शब्द भी आज ऊरेगिंपु में बदल गया।ऊरेगिंपु में कुछ न कुछ एक प्रतिमा को किसी न किसी वाहन पर प्रदर्शन करना हो रहा है। ईश्वर को वाहन पर ऊरु एरिगिंपु करने में यह मतलब ज़ाहिर कर रहा है कि ईश्वर को ज़रुर कुछ न कुछ वाहन है और वह वाहन हमारा शरीर ही है कह कर बताते हुये मनुष्य के शरीर पर और दूसरे जानवरों के शरीरों पर चडाहुआ ईश्वर की प्रदर्शन हो रहा है। यह बात जानलें कि इसतरह बताने का मखसद यह है कि ऐसा सब वाहनों पर ईश्वर की प्रदर्शन करने में सब शरीरों को चलानेवाले सारधि ईश्वर हैं। सब शरीर ईश्वर के वाहन है,इतनाही नहीं अगर इस जिस्म में के ईश्वर को मालूम करने की कोशीष करें तो वह ईश्वर हमारे लिये अभय की तरह रहकर हमारे कर्मों को खंडना या खत्म करलेनेवाला ज्ञान खड्गों को प्रसाद में देगा यानि

अता करेगा, इसी मखसद या मतलब से प्रदर्शन करनेवाले ईश्वर के हाथ में आयुध पहना कर रख्खे हुये होते हैं। सिर्फ यह बताने केलिये ही पूर्व में बडे लोगों ने यह कार्य रख्खा कि सब में ईश्वर कहनेवाला एक है, वही अपने अंदर की आत्मा है,वह आत्मा ही शरीरों को चला रही है, सब शरीरें वह (ईश्वर के) शरीर में के आत्मा के वाहन हैं, देह कहलानेवाली रथ को चलानेवाला ईश्वर है, उस के बारे में मालूम करने से ईश्वर के हाथ में के ज्ञानायुध हमारे कर्मों को जलासकती है।यह प्रदर्शन के द्वारा गाँव में रहनेवाले छोटे, बडे सब लोग ईश्वर पर ध्यान रख के जिस काम केलिये वह (ईश्वर) यह गाँव को आया है यानि जिसे याद दिलाने वह इस गाँव को आया है उस मखसद को कम से कम थोडा बहुत तो मालूम करलेते थे।उस ज़माने में बडे लोग उस समय यह काम क्यों कर रहे हैं और ऐसा करने के पीछे इसका क्या मखसद है उसे साफ तौर पर समझाते थे।आज सिर्फ ऊरेगिंपु कर रहे हैं मगर उसके मतलब किसी को नहीं मालूम।कम से कम अब तो ईश्वर के वाहन के बारे में, ईश्वर के आयुधों के बारे में एरिगिंपु (याद या ज्ञापक) कर लेते हैं।

34. तिरुनाल (उत्सव)

संवत्सर को एक बार तिरुनाम कहलानेवाले नाम से एक बडा उत्सव किया करते थे।उस ज़माने के तिरुनाम का उत्सव कालक्रम में आज तिरुनाल कहलानेवाले नाम में बदलगया। तिरुनाम यानि नामम में बीच में रहनेवाला। वेंकटेश्वर का नामम तीन नामों में है ना! उसमें दो नामम जो सैड में हैं वे सुफेद से है तो उन दोनों के बीच में वाला लाल रंग में सैड के दो नाममों से लम्बा रहता है।दो

सुफेद नाममों से भी रंग में लाल, सैज़ में लम्बा सा, बीच में रहनेवाले नामम का प्रत्येकता है।यह नामम भौतिक, अभौतिक दो अर्थ रखती हैं। भौतिक से शरीर में रहनेवाले तीन लाख नााडयों में मुख्यों में अतिमुख्य सिर्फ तीन ही हैं।उन्ही को इडा, पिंगल, सुशुम्ना या सूर्य, चंद्र, ब्रह्मनाडियाँ कहते हैं। उन्ही को मुख पर नाममों की तरह पहचानना हो रहा हैं। इडा पिंगल नाडियों को दो सुफेद नाममों की तरह पहचान कर बीच में ब्रह्मनाडि कहलानेवाली को लाल लम्बा नामम की तरह पहचाना। यह लम्बा लाल नामम को शरीर में सब से मुख्य आत्मा समझना चाहिये। सैड के सूर्य, चंद्र नाडियाँ मन का स्थान है तो बीच में वाला ब्रह्मनाडि आत्मा का निवास स्थान है। वे लोग जो ब्रह्मनाडि को आत्मा की तरह पहचान लिये उस के बारे में जानना ही जीवित का सारांश है। शरीर में रहनेवाले आत्मा का स्थान ब्रह्मनाडि को ही तिरुनाम कहते थे।वह तिरुनाम को यानि आत्मा को मालूम करलेने केलिये संवत्सर (साल) को एक बार सब प्रजाओं को मिलाकर देवालय के पास आत्मा बोधा करते थे।ऐसा सब प्रजाओं को आत्मा के ओर जागृत किया करते थे। इस तरह होनेवाले को ही जातरा (जल्सा) कहते थे और आत्मा के बारे में बोललेने केलिये मिल रहे होने से उसे तिरुनाम भी कहते थे।वह तिरुनाम आज भी रहने पर भी उसका उद्देश पूरा बदलगया। तिरुनाम या तिरुनाल ईश्वर पर भक्ती से ही नहीं बल्की अनेक तरीकों से अनेक उद्देशों से जारहे हैं। चलिये जो भी हो यह जानलें कि शरीर अंतर्गत आत्मा को मालूम करने की आध्यात्मिक रहस्य ही तिरुनाम है।यह तो भौतिक अर्थ है तो अभौतिक अर्थ और एक हैं।

शरीर में निवास करनेवाले आत्मायें पूरे तीन हैं। उसमें आत्मा पूरे शरीर में फैलाहुआ है तो शरीर में वह भी (सूजी के) रव्वे

के सैज़ में रहनेवाला जीवात्मा है तो तीसरावाला परमात्मा शरीर में सब जगह रहते हुये शरीर के बाहर भी हर वस्तु में बाहर फैली हुयी हैं। क्षरअक्षर नाम पाये हुये जीवात्मा आत्मा दो हमेशा जोडी में रहते हैं। जीवात्मा आत्मा इन दोनों से अतीत परमात्मा है इसीलिये बीचवाले नामम को लाल रंग रख्खे थे।क्योंकि दोनों से बडी हैं इसलिये बीचवाले नामम को बडे से रख्खे हैं। जीवात्मा आत्मा दोनों एक दूसरे से जब मिलजाते है तब ही परमात्मा जैसा बदल जासकते हैं कह कर सुफेद नामम दोनों मिलने के जगह से ही बीचवाले नामम को रख्खे हैं। इसतरह नामम को स्थूल से सूर्य, चंद्र, ब्रह्मनाडियाँ कह कर, सूक्ष्म से जीवात्मा आत्मा परमात्मा कह कर पहचान के दिखाये हैं। क्योंकि वह मुख्य विषय है उसे मुख पर ही सजाकर दिखाये हैं।तीन नाममों में जिसे तिरुनाम कहरहे हैं वह शरीर के अंदर ब्रह्मनाडि में रहनेवाली आत्मा के तरफ इशारा कर रही है तो शरीर छोडने के बाद परमात्मा के तरफ इशारा कर रही हैं। यह हमारी बद्नसीबी है कि पूर्व में रहनेवाला तिरुनाम शब्द आज तिरुनाल शब्द में बदलजाकर हमें यह तक मालूम नहीं हुआ कि वह स्थूल से ब्रह्मनाडि हैं और सूक्ष्म से परमात्मा है।

35. बट्टा बयलु

(चिदंबर रहस्य का परदाफाश)

कहते हैं कि कलियुग में तय्यार हुये अनेक देवालयों में श्रीरंग पट्ण में श्रीरंग के आलय में चिदंबर रहस्य हैं। यह बात आम है कि जो भी वहाँ जाता है वह श्रीरंग देवालय की दर्शन करने के बाद चिदंबर रहस्य को देखता हैं। लेकिन वहाँ के बडे लोग यह कहकर

उनको दिखाते हैं कि जो देखा जारहा है वह बहुत ही रहस्य है इसलिये इस रहस्य को किसी से मत कहना। जब कोई बात रहस्य होती है तो उसे बतानी नहीं चाहिये दिखानी भी नहीं चाहिये फिर भी रहस्त को किसी से मत बताओ कहते हुये ही दिखाने में क्या रहस्य है पता नहीं? ज़रुर वहाँ कुछ न कुछ बात तो है इसीलिये उसे रहस्य कह रहे हैं। चिदंबर रहस्य ऐसा रहस्य है जो बोलने के बावजूद भी समझमें नहीं आती और देखने पर भी कुछ समझमें नहीं आती इसीलिये उसे चिदंबर रहस्य कहा है। बहुत से लोगों को चिदंबर नाम का अर्थ मालूम नही हैं। चिद मतलब वस्त्र है, अंबर मतलब आकाश है। इसतरह चिदंबर के शब्द में वस्त्र आकाश या बट्टा बयलु (परदा हटाना) का अर्थ है। चिदंबर रहस्य बट्ट बयलु यानि चिदंबर रहस्य परदाफाश का वाक्य भी है। अब हम देखते हैं कि आखिर श्रीरंग पट्न का चिदंबर क्या हैं।

भगवद्गीता सांख्य योग अध्याय में श्लोक २२ में भगवान ने वासांसी का शब्द इस्तेमाल किया वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोपराणि तथा शरीराणि विहाय जीर्णा नन्यानि संयाति नवानि देहि इसमें कहा था कि जिसतरह हम लोग पुराने वस्त्र को छोडकर नये वस्त्र को पहनते हैं उसी तरह जीव पुराने शरीर को छोडकर नये शरीर को पहन रहा है।यहाँ शरीर को कपडे से कम्पार करके बताया है।वस्त्र कहें या कपडा कहें या चेल कहें एक ही अर्थ है। ऐसा ही अंबर कहें या आकाश कहें या बयलु कहें एक ही है। अब हम इसको परख कर देखते हैं कि आखिर वह चिदंबर रहस्य क्या है जो श्रीरंग के पट्न में हैं वहाँ पर एक द्वार को आढे एक कपडा लटकाया हुआ होता हैं।वस्त्र ऐसा लटकाया हुआ होता है कि द्वार के अंदर जो है वह बिलकुल दिखायि नहीं देगा।क्यों

कि यह नहीं मालूम कि अंदर क्या हैं इसीलिये उसे रहस्य कहा हैं।वे लोग जो यह देखना चाहते हैं कि अंदर क्या है उन्हे वहाँ पर रहनेवालों की अनुमति (इज़ाज़त) माँगनी होगी।उन लोगों के लिये जो देखना चाहते हैं उनकेलिये दिखानेवाले भी हैं। वे लोग देखनेवालों से कहते हैं कि यहाँ पर जो भी देखा जारहा हैं वह बहुत ही रहस्य है इसीलिये यह कह कर दिखाते हैं कि इस बात को किसी से मत कहना। बहुत से लोग चिदंबर रहस्य को देखने पर भी जितना उत्सुकता देखने से पहले है उतना देखने के बाद नहीं हैं। क्योंकि वे लोग देखने से पहले रहस्य को यानि जिसे देखना चाहा था उसके बारे में कुछ ओर ही समझ बैठे होंगें।चाहे कौन कुछ भी समझले कपडा हटाते ही आश्चर्य की बात यह है कि किसी को भी कुछ भी दिखायि नहीं देता।हम लोगों ने बयान करलिया ना कि वहाँ पर एक द्वार होता है और उसके आढे एक कपडा होता है। जिन्होने देखना चाहा उनको कपडा निकाल कर दिखाते हैं। कपडा निकाल कर देखें तो वहाँ कुछ वस्तु हो या आकार हो नज़र न आना आश्चर्य की बात ही हैं। सिर्फ बिना छतवाली आकाश ही दिखती हैं। कपडा निकाल कर देखने के बाद जिसने देखा वह आश्चर्य हो कर अरे यहाँ तो कुछ भी नहीं है इसतरह से दिखानेवाले को पूछने पर आकाश के ओर दिखाते हुये कहेंगें कि यहाँ पर आप को जो देखना है और जो दिखता है वह तो यही हैं।कुछ न रहना ही चिदंबर रहस्य हैं। अगर हम यह कहेंग

यहाँ पर कुछ भी नहीं है तो कोई भी नहीं आता इसीलिये वह कहते हैं कि आप इसको रहस्य से किसी को भी मत बतायिये। जिन्होने देखा है वे लोग भी देखके आने के बाद किसी को नहीं बता रहे हैं क्योंकि वे समझते हैं कि इसतरह बताने से कुछ बुरा होगा।

आचार तो है मगर बिना मतलब का। आध्यात्मिक तौर पर परमार्थ वाली मतलब को न कहते हुये यह कहना गलत है कि जो यहाँ पर देखे हैं उसे किसी से मत कहना। चाहे कोई किसी से भी कहें चिदंबर का अर्थ रहस्य कहनेवाली अर्थ से ही रहता है। चिद अंबर एक ऐसा विधान या तरीका है जिसमें यह दिखाते है कि इसी तरीके से एक रहस्य मौजूद है।

जब तक जीव इस शरीर में है तब तक वह मोक्ष पा नहीं सकता। जीव परमात्मा में तब ही ऐक्य होता है जब वह पूरा कर्म खत्म करलेकर फिर शरीर नहीं पाता।यह सच है कि जीव को दो ही दो गम्य है वे यह है कि या तो उसे रहना है तो इधर शरीर में रहना है या तो उधर मोक्ष में रहना हैं।जब तक उसे शरीर है तब तक ईश्वर मालूम नहीं होगा।ईश्वर और तेरे बीच मौत और पैदाइश वाली शरीर आढ है।पैदाइश से शुरु होकर मौत में खत्म होकर फिर फौरन पैदाइश से शरीर जीव को लगले रहा है या चिपकले रहा है।गीता में ईश्वर ने कहा कि शरीर कपडे जैसा है। पुराना कपडा जाते ही नया कपडा लगले रहा हैं। इसलिये अगर वह कपडा नहीं है तो तुम ईश्वर के पास आसानी से पहुँच जाओगे यह बात बताते हुये शरीर को कपडे की तरह और ईश्वर को बयलु (परदाफाश) की तरह दिखाये। शरीर को कपडा और परमात्मा को बयलु और शरीर को, परमात्मा को दोनों को मिलाकर बट्टा बयलु कहा है। जब कपडा हटाते हैं या निकाल देते हैं तब ही वहाँ की चीज़ दिखती हैं ऐसा ही जब शरीर नहीं होता है तब ही ईश्वर मालूम होगा, यह तरीका बताना ही चिदंबर रहस्य है चिदंबर को रहस्य इसलिये कहा गया क्यों कि जो चीज़ या बात मालूम नहीं है उसे रहस्य कहते हैं यहाँ बाह्यार्थ से बट्टा बयलु को देखने के बाद भी शरीरधारि जीव

परमात्मा के बारें जान नहीं पा रहे हैं कह कर चिदंबर को रहस्य का शब्द जोडदिया।यह विवरण मालूम न होते हुये ऐसा कहना गलत या बेमतलब है कि (बट्ट बयलु में जो भी आपने देखा) यह एक रहस्य है इसलिये इसे किसी से मत कहियेगा।हमने यह बयान करलिया ना कि चेल का मतलब समता शरीर है।मौत से गयी हुयी शरीर उसी पल में ही पैदाइश से लगले रही है। हमेशा बयलु की तरह कम्पार की गयी परमात्मा को वह शरीर आढे है जिसे चेल की तरह कम्पार किया गया, यह बात बताना ही श्री रंग में का चिदंबर रहस्य हैं। बट्टा बयलु को दिखाते हुये ऐसे बोलने में कोई गलती नहीं है या अर्थ सहित भी होगा कि जब शरीर आढे रहता है तो तब उस सैड में रहनेवाले बयलु कभी भी नज़र नहीं आयेगा। इसीतरह तुम्हे शरीर कहनेवाला चेल आढे रहने के कारण बयलु कहलानेवाला परमात्मा मालूम नहीं पडेगा। (अर्थात इसतरह बताते हुये उसे रहस्य कहने में मतलब हैं)

परदा निकाले तो बयलु (खुला दिखेगा), अगर परदा नहीं निकाले तो बयलु भी नहीं हैं। ऐसाही शरीर चलागया तो ही मोक्ष हैं इस हालत को बताते हुये ही अचेल कहा गया है। चेल यानि कपडा है, अचेल यानि बिना शरीरवाली मोक्ष हैं। पूर्व में बडे कहते थे कि अज्ञान में रहते हुये शरीर के साथ पैदा होनेवालों को चेल कहा है, ऐसा ही ज्ञान रखते हुये बिना जन्म की हालत को माँगनेवालों को अचेल कहा है। पूर्व में शरीर को चेल और मोक्ष को अचेल कहा करते थे। मोक्ष मार्ग को अचेल, अज्ञान को चेल भी कहा करते थे। अचेल जिसे ज्ञान मार्ग कहते हैं वह शब्द कालक्रम में अचल में बदल गया। ज्ञान मार्ग के अनुसार चलनेवाले आज भी मौजूद है लेकिन वे यह कहना बेमतलब की बात है कि हम अचल है । वे ऐसा कहसकते

हैं कि हमारा अचेल है या हम ज्ञान मार्ग में चल रहे हैं मगर अचल नही कहना चाहिये। सही मतलब या अर्थ के मुताबिक चिदंबर रहस्य को चेल अचेल कह सकते हैं। जैसे देवालयों में दिखाया गया वैसे आप खुद अपने अंदर योचना करलीजिये कि आप कोनसे पार्टी (पक्ष) है कपडा या बयलु (चेल या अचेल)। उस अचेल को पायिये जो चेल नहीं हैं। बट्ट बयलु का रहस्य परदाफाश करके कपडे को छोडकर बयलु (परमात्मा) में दाखिल होजायेंगें।

36. देवदासियाँ

अबतक देवालयों के निर्माणों के बारे में, उस में के पूजाविधानों को मालूम किये थे। और भी थोडा मालूम करना बाखी हैं। वह यह है कि! मानवों में स्त्री पुरुष के जात दो ही दो हैं। द्विजातीय मानवों में स्त्री पुरुषों से भिन्नवाले भी मौजूद है। स्त्री जात में उद्भव होने पर भी स्त्री को रहनेवाले मनोभाव, शरीर की अनुकूलता या श्रृंगार क्या है यह भी न जानते हुये, अगर मालूम होने पर भी किसी भी तरह का दिलचस्पि न रखते हुये रहते थे। उन्हे माचकम्मा कहा जा रहा है। जैसे वे श्रृंगार का भाव नहीं रखते वैसे उन्हे मास मासको रुतुस्राव (बहिष्टु) नहीं होता है। चाहे जितना भी उर्म आयें उनका शरीर जैसे बाल्य में रहता था वैसे ही होता हैं। जिस तरह श्रृंगार का मनोभाव भी बाल्य में मालूम नहीं होता उसीतरह बडे होने के बाद भी उनमें दिलचस्पि नहीं रहती। ऐसे स्त्रीयाँ संसार जीवित केलिये काम नहीं आयेंगे। इसीलिये उनमें यह इच्छा पैदा होजाता हैं कि मानव संघ से दूर रहें। ऐसे लोग संसार के जीवितों से जुडे हुये मनुष्यों के बीच के गृहों में न रहते हुये उन देवालयों में निवास करते थे जो आत्मज्ञान के निलय हैं।

देवालयों में निवास करते हुये ईश्वर को किसी न किसी तरीके से सेवा करते रहते हैं। देवालयों में कचरा साफकरने से लेकर पूजा विधान तक हमेंशा काम किया करते थे। और कुछ लोग नाट्य सीख कर ईश्वर के सामने नाट्य कर के देवालयों में आनेवाले भक्तों को आकर्षित कर के भक्तों की संख्या बढाने के लिये कोशीष करते थे। और कुछ लोग संगीत सीख कर सुबह शाम गातेहुये आनेवाले भक्तों को मनोरंजन किया करते थे। इसतरह देवालयों नें निवास बनालेकर किसी न किसी तरीके से सेवा करना पूर्व में आचार की तरह रहता था। ऐसे माचकम्माओं को देवदासियाँ कहते थे। गुज़रता हुआ वक्त के साथ साथ देवदासियों को वेश्याओं के नीचे जमा करने का ज़माना आगया हैं। आज के देवदासियों में माचकम्मायें नहीं हैं। उनके स्थान में साधारण स्त्रीयाँ ही प्रवेश किये। आज के देवदासियाँ देवालयों में निवास न करते हुये गृहों में ही रहते हुये वेश्यावृत्ति कर रहे हैं। जिसतरह ग्रामदेवता केलिये बैल छोडकर नहीं बाँधते और जिस तरह किसी भी जंगल में खाओ कुछ भी आढ नहीं है,उसीतरह एक देवता के नाम पर एक स्त्री का विवाह न करते हुये छोडदेना देवदासि (बसुवुराल) किये जैसा है। कोई भी पुरुष उसके पास जासकता हैं। यह तरीका कुछ जातियों (कास्टों) में मौजूद है। देवदासि में बदलनेवाली स्त्री की कोई पसंद रहें या न रहें ऐसी हालत आगयी कि जैसे बडों ने कहा वैसे बदलने की हालत आगयी।

पूर्व के देवदासियाँ निवास के योग्य नहीं है तो, आज के लोग योग्य होकर भी देवदासि पन कर रहे हैं। पूर्व में माचकम्मायें निस्वार्थ के साथ दैव सेवा करते हुये देवदासि का नाम पालिये तो आज के ज़माने में स्वार्थ के साथ वेश्यावृत्ति करनेवाले हैं। पूर्वकाल के देवदासियों को पवित्र भाव से सब इज़्ज़त किया करते थे। आज के देवदासियों को

सब नीच भाव के साथ देखते हैं। पूर्व काल के देवदासियों में भक्ति ज्ञान प्रवृत्तियाँ बहुत रहते थे। आज ज़रा भी भक्ती न रखनेवाले भी देवदासियाँ बनगये। प्रस्तुत काल में देवदासियों को बसुवुराल कह कर पुकारा जा रहा हैं। जैसे नागरिकता बडते जा रहा है यह बसुवुरालों की संख्या भी कम होते जा रही हैं। फिर भी आज भी वहाँ वहाँ कुछ वर्णों (कास्टों) में स्त्रियों को बसुवुराल करना हो रहा है।

37. देवदासें

जैसे स्त्रि जाती में माचकम्मायें हैं वैसे पुरुष जाति में भी नपुंसक हैं। वे भी माचकम्माओं के जैसा ऐसे शरीर रखते हैं जिस में पुरुषत्व नहीं रहता और वे संसार जीवन के कुछ काम नहीं आते। वे भी पूर्व में देवालयों में ही स्थान बनालेकर, वहाँ ईश्वर की सेवा करते थे। ऐसे नपुंसक नाचने का पेशा, संगीत वगैरा उनमें प्रवीण्य होकर देवालय का शोभा बडाते थे। निस्वर्थ से ईश्वर की सेवा करने वाले वे नपुंसक को देवदास कहकर पुकारते थे। आज के ज़माने में किसी भी मंदिर में देवदासियाँ नहीं दिखते, देवदास भी नहीं दिखते । आज के नपुंसक स्त्रियों के तरह एक याचक के काम करके वक्त गुज़ार रहे हैं। इनको उलिगम्मलाँ कहना हो रहा हैं। पुरुषाकार वाले ये लोग आज भी कर्णाटका में संप्रदाय सहित कुछ स्त्री देवताओं के आलयों में संवत्सर को एक बार तो नाट्य करना गाने गाना हो रहा हैं।

गौर करनेवाली बात यह है कि! स्त्री जात के माचकम्माये यानि देवदासियाँ पुरुष देवालयों में ही निवास किया करते थे। ऐसा ही नपुंसक देवदास स्त्रि देवता के मंदिरों में ही निवास रहते थे। इसीलिये आज को भी देवदास स्त्रि देवालयों में नाचना, गाने गाना

मौजूद हैं। ऐसा ही आज वेश्यावृत्ति करनेवाले भी पुरुषों के देवालयों में नाचना हो रहा हैं। स्त्रि देवालयों में नपुंसक सांप्रदाय सिद्ध से पैसा न लेते हुये वे खुद पूजा करके नाच कर गाने गाना कर्णाटका वगैरा प्रँतों में आज भी मौजूद हैं। यह बात तो सब जानते हैं कि वेश्यावृत्ति लिये हुये स्त्रियाँ पंडुगा (त्योहार) के समय में भी पैसा लेकर नाचना आज भी हम देख रहे हैं। भोगमों का नाट्य के नाम से पुरुष देवालयों में पंडुगा के दिनों में होना। अब आप लोग खुद योचना कीजिये कि पूर्वकाल के देवदासि, देवदासों में और आज के देवदासि, देवदासों में कितना फरख हैं।

38. नक्षत्र

प्रपंच थोडे वक्त तक रहकर और थोडा वक्त रहे बगैर चला जाता हैं। ये सारे जीवरासियाँ (प्राणियाँ) प्रपंच की मौजूदगी में ही मरते पैदाहोते हुये कष्ट सुखों का अनुभव करना होगा। बिना प्रपंच की हालत ऐसी हालत है जिस में कुछ भी मालूम न होता है पंचभूत नहीं रहते हैं, अगम्यगोचर हैं। पूरा जगत नाश होने पर भी ऐसी एक चीज़ है जो कभी भी नाश नहीं होती हैं वही परमात्मा हैं। उसमें ऐक्य हुये जीवात्मायें वे भी परमात्मा में बदलकर बिना नाशवाले होंगे। परमात्मा वही है जो कभी भी न बदलता हो तब भी जब ये प्रपंच मौजूद था और तब भी जब ये प्रपंच नहीं हैं। जिसतरह हमलोगों को दिन १२ घंटे का वक्त और रात १२ घंटों का वक्त है उसी तरह परमात्मा को हज़ार युग दिन है और हज़ार युग रात हैं। परमात्मा के दिन के हज़ार युगों में जीवरासियाँ मौजूद हैं परमात्मा के रात के हज़ार युगों में जीवरासियाँ नहीं हैं और प्रपंच भी नहीं हैं। जब प्रपंच

है तब भी और जब प्रपंच नहीं है तब भी परमात्मा अकेला (ऐक स्थायि) से हैं।

नक्षत्र रात के वक्त दिखता हैं। दिन के वक्त नहीं दिखता हैं। दिन में न दिखने के बावजूद भी नक्षत्र हमेशा रहते हैं। शाश्वित से रहनेवाला नक्षत्र रात के वक्त दिख कर दिन में नहीं दिखरहा हैं। पूर्व में बडे लोगों ने परमात्मा को जो प्रपंच के मौजूदगी और गैर मौजूदगी में नाश नही होता है उसे नक्षत्र से कम्पार करना हुआ जो दिन में हो, रात में हो हमेशा रहता हैं। मोक्ष के निशान के तौर पर नक्षत्र को रख्खे थे। इसीलिये नक्षत्र को दिखाना इंदूमत में पहली आचार की तरह रहती थी जिसमें यह बताते थे कि ईश्वर में ऐक्य होजाओ, और ईश्वर इस नक्षत्र की तरह हैं। आज भी नक्षत्र को अहमियत देना हम ईसायियों में, मुहम्मदियों में देखते हैं। नक्षत्र जब परमात्मा का चिह्न हैं तो यह शक ज़रुर आयेगा कि तो फिर आखिर परमात्मा तक पहुंचेंगें कैसे? उसका जवाब यह है कि! परमात्मा को मालूम करने केलिये आत्मज्ञान होना ज़रुरी हैं। आत्मज्ञान मालूम करने के बाद परमात्मा मालूम होजायेगा।

39. चाँद

ब्रह्मविद्या में ज्ञान चिह्न की तरह चाँद को कम्पार करना आम बात है। **चाँद्र मसम् ज्योति र्योगी प्राप्य निवर्तते** कहा कि कर्म शेष के कारण वापस पैदा होनेवाले योगी चंद्र तेजस के साथ पैदा होते हैं। यहाँ चंद्र तेजस का मतलब ज्ञानशक्ति है। इसीलिये ज्ञानशक्ति के बदले में चाँद को दिखाते हैं। यह बताने केलिये नक्षत्र रखकर उसके नीचे अर्धचंद्र यानि बडता हुआ चाँद को रख्खे हैं कि ईश्वर के अंदर ऐक्य होने केलिये ज्ञानशक्ति की ज़रुरत हैं।

चाँद

बगैर पूर्ण चंद्र के बडता हुआ चाँद को यानि नया चाँद को दिखाये हैं। इसका मतलब यह हैं कि ज्ञानशक्ति बडने से मोक्ष मिलता हैं। मोक्ष संबंध नक्षत्र को और ज्ञान संबंध चाँद को देख कर सब बहुत ही इज़्ज़त करते हुये उसे अहमियत देते थे।आज वह एक महम्मदीय मत के लिये हि परिमित होगया। फिर भी हमें यह नहीं मालूम कि वे लोग कितने हद तक नक्षत्र का अंतरार्थ जानते हैं!!!!

40. परों का घोडा

हमने कहा था कि मोक्ष पाने केलिये ज्ञानशक्ति की ज़रुरत हैं। ज्ञानशक्ति पाने केलिये योग अमलकरना पडेगा। योग यानि! मन चंचल हुये बगैर ठहरजाना।मन चंचल है। वह बहुत ही फास्ट हरकत करती रहती है। वायु की तरह फास्ट रहनेवाली, चंचल मन को ठहराने केलिये साधना की ज़रुरत है। नक्षत्र और नयेचाँद को दिखाये हुये बडों ने ही परों के घोडे को दिखाये ताकि यह समझ जाये कि इसतरह अमल करने से मोक्ष हासिल होगा।इसका मतलब यह है कि! घोडा दौड रहा है। उसमें भी परों का घोडा यानि वायु के फास्टनेस से भी ज्यादा फास्टवाली हैं। सिर्फ यह बताने केलिये ही परों के घोडे को दिखाये कि तेरा मन भी ऐसा ही हैं। सांख्या सूत्र के

प्रकार आकाश का पहला भाग, हवे का पहला भाग जब मिला तो मन तय्यार हुआ। इसलिये आकाश में हवे में उडनेवाले परों के घोडे को मन जैसा दिखाये मन तब ही ठहरजाता है जब शरीर में पाँच ज्ञानेंद्रियों का कोई भी विषय याद न आते हैं। ज्ञानेंद्रियों के विषयों पर ही मन चंचल होता रहता हैं। इसलिये चंचल मन को रोकना है तो पाँच ज्ञानेंद्रियों के खयाल (ध्यान या ध्यासा) ठहरजाना चाहिये। इसलिए मन को परों के घोडे जैसा दिखा कर पाँच उंगलियों के हस्त को घोडे के ऊपर के हिस्से पर इसलिए दिखाये क्योंकि अगर तुम चाहते हो कि यह घोडा ठहरजाये तो पाँच ज्ञानेंद्रिय को भी ठहरजाना पडेगा। ठहराओं या रुकाओ।हस्त में के ज्ञानेंद्रयों का ध्यान जब रुकजाता हैं तो चंचल मन कहलानेवाली परों का घोडा रुकजायेगा।परों का घोडा यानि मन ठहरने के कारण ज्ञानशक्ति बडता है कहकर नये चाँद को ही दखाये हैं।

परों का घोडा

ज्ञानशक्ति बढे तो मोक्ष मिलेगा कह कर नक्षत्र दिखाये।नक्षत्र, नयाचाँद, हस्त, परों का घोडा सब निशानों को एक ही तसवीर में देखसकते हैं। कुछ जगहों में परों का घोडा हस्त एक चित्र की तरह, नक्षत्र, नया चाँद एक चित्र की तरह हैं। यह कहसकते हैं कि अंतरार्थ के साथ बहुत ही ज्ञान अपने अंदर बसाकर रखे हुये इन चित्रों के बारे में किसी को भी नहीं मालूम हैं। सब को आत्मज्ञान बसे हुये चिह्न यानि इन सारे निशानों की इज़्ज़त करनी चाहिए।

41. पीराँ

इंदुओं के ईदों (त्योहार) में पीरों का ईद भी मिक्स होकर हैं। जैसे इंदू देश को हिंदू देश कहा जारहा हैं वैसे इंदुओं के कुछ आराधनायें परमत में मिलगये। दूसरा मत ही न रहनेवाले इंदू देश में परमात्मा के आराधनायें बहुत रहते थे। ऐसे कुछ चीज़ें कालगर्भ में मिलगये तो कुछ बाक़ी हैं। उनमें से कुछ मतलब न मालूम होने वाले आचार की तरह है तो कुछ परमत में फसगये। उनमें से परों का घोडा, नक्षत्र चाँद, पीराँ है तो पीराँ तो न इधर न उधर यानि हिंदुओं में आधा, मुस्लिमों में आधा फसे हुये हैं। बहुत ही मुख्य चाँद नक्षत्र, परों का घोडा पहले से हिंदुओं में ही था इसका आधार (सबूत) ऊपर से न दिखने पर भी यह बात गौर या सोचने की बात है कि सिर्फ पीरों का ईद ही हिंदुओं से अभी भी जुडकर रहना और हिंदू ही उसमें ज्यादा शामिल होना हम देख सकते हैं। किसी को मालूम हो या न मालूम हो चाँद नक्षत्र के बारे में, परों के घोडे के बारे में हमने बयान करलिया।अब पीरों के बारे में मालूम करते हैं।

जिसतरह इंदूमत में शास्त्रों के अलावा पुराण भी हैं उसी तरह मुस्लिम मत में भी चाँद और नक्षत्र के बारे में, परों के घोडे के बारे में पीरों के बारे में शायद कुछ कथायें रह सकते हैं। फिर भी ईश्वर ज्ञान की सन्निहित से हम उनके मतलब को बोल लेने में शायद कोई गलती नहीं हैं। रेक से तय्यार किया गया गोल भाग पीर की तरह रहता हैं। उस गोल भाग के ऊपर तीन शाखों की तरह रेकों को सेट करके रखते हैं। बिना नाक मू आकार वाला गोल आकार को खास अलंकार के तौर पर तीन रेखायें नाममों की तरह तय्यार करके रहते हैं। ऐसा समझलें कि बिना नाक मुख वाला आकार आत्म स्वरुप हैं। ऐसा दिखाने में उनका मुख्य उद्देश यह बताना ही है कि ईश्वर का कोई आकार ही नहीं हैं। ऊपर के तीन रेखाओं की पहचान यह हैं कि बिना आकार वाला ईश्वर प्रपंच में जीवात्मा, आत्मा, परमात्मा के जैसा तीन हिस्सों में ठहरकर हैं। खास दिखनेवाले तीन रेखाओं में से सैड के दो छोटेसे, बीच में वाला बडासा रहता हैं। ऐसा ही सैड के रेखायें दोनों तरफ झुक कर है जैसा बीचमें वाला झुके बगैर सीधे है जैसा दिखता हैं। बहरहाल, किसी भी पीर को हो सैडवाले रेखाओं से बीचमें वाला खास रहे जैसा तय्यार करके रहता है। देखनेवालों को दायें तरफ दिखनेवाली रेखा को जीवात्मा बायें तरफ दिखनेवाली रेखा को आत्मा कह कर याद रख्खे। ऐसा ही बीचवाले रेखा को परमात्मा की तरह याद रखलें। पीर का आकार एक ऐसी निशान है जो हमें यह बताती है कि ज़मीन पर परमात्मा क्षरअक्षर पुरुषोत्तम की तरह हैं, वह सबका आदिकर्ता है और उसे इंदू परमात्मा, ईसायियाँ यहोवा, मुसलमान अल्लाह कहकर पुकारते हैं। उसीसे एक तरफ जीव और एक तरफ आत्मा पैदा होकर प्रपंच में पूरे जानदार तय्यार हुये हैं।

वे बडे लोग जो यह बात जानलिये कि ईश्वर इसतरह है उन्होनें यह बात प्रजाओं को बताने के लिये कई ततंग किये हैं ।ऐसे लोगों के उद्देशों में भी पीर भी एक मुख्य उद्देश ही हैं। संवत्सर को एक बार पीरों का जल्सा या दर्शन कराना अलंकार करना आराधना करना उत्सव करना हो रहा हैं। पूर्व में बडों ने जिस मक़सद से पीर को रख्खा वह भाव आज नहीं रहा। आज पीरों का प्रदर्शन इंदू और मुस्लिम दोनों मिलकर कर रहे हैं। यह एक ततंग की तरह कर रहे हैं। उसमें पूर्व का भाव ज़रा भी नज़र नहीं आता है तो पीरों के पास भी इच्छायें माँगनेवाले लोग तय्यार होगये। पीरों के पास भक्ति भाव थोडेलोगों में है तो बहुत से लोग नशा पीकर उचलनेवाले ही ज्यादा दिख रहे हैं। पीरों को ईश्वर मानकर उनके सामने पूर्व में बडे लोग इस भाव से अग्निगुंड जलाकर उसमें लकडियाँ पूरे डालकर जलादेते

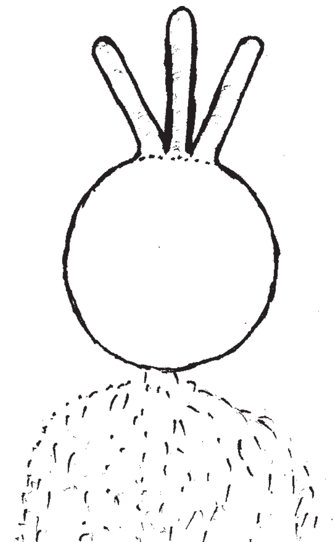

पीराँ

थे। शरीर कहलानेवेले गुंड में ज्ञान कहलानेवेली आग से कर्मा कहलानेवाली लकडियों को जलाकर तुझ में ऐक्य होजऊँगा कह कर उसदिन का क्रिया आज भी रहने पर भी यह पहचानने वाले ही नहीं है क़ि लकडियाँ कर्म है आग ज्ञान है गुंड शरीर है पीर ईश्वर है। पीरों की ईद नशा पीने केलिये मांस खाने के लिये प्रतीक है। आजके ज़माने के चिचोरे तरीके को छोडकर पूर्वजों की ज्ञान का तरीका अपनाये तो पीरों की ईद को पवित्रता मिलेगी। अज्ञान में रहनेवाले मनुजों को आत्मा ज्ञान बताने केलिये पूर्व में बडों ने बहुत ही कोशीष की हैं। उसके बावजूद भी उनके महनत की आज कोई अहमियत नहीं रहीं।मानवों के कुल मत की व्यवस्था आत्मज्ञान को जंगल में हकालदिया। आज अज्ञान ने मनुजों (लोगों) में टुकडे टुकडे बनाकर ऐसी हालत में गिरादी कि वे सब लोग कुल और मत के नाम से झगड रहे हैं। आज के मानव यह बात पूरा भूलगये कि सर्व मानवों के लिये ईश्वर एक ही है। ऐसे लोगों को एक झटका देके अज्ञान की नींद से उठाने की सोंच ही यह छोटी ग्रंथ की कोशीष हैं। यह छोटी सी ग्रंथ की कोशीष का उद्देश यह है कि मानवजाति में मत के चीरपाड नहीं रहनी चाहिये ।सब मतों के लिये आधार यानि बिना रुप, नाम वाले के बारे में बताना ही हमारा उद्देश हैं। मैं यह कहना चाहता हूँ कि मुझे कुछ भी मालूम न होने पर भी योचना को पहुंचाकर शरीर के द्वारा लिखाया हुआ ईश्वर यानि परमात्मा को ही यह ग्रंथ की कीर्ति अपकीर्तियाँ पहुँचनी चाहिये।

समाप्त

झूट को हज़ार लोग कहने पर भी वह सच नहीं होता

सच को हज़ार लोग इनकार करने पर भी वह झूट नहीं होता

हिंदू रक्षण! या हिंदू भक्षण!!

जिसने भगवद्गीता ही नहीं पढा क्या वह हिंदू रक्षक है ?

जिन्हे हिंदू धर्म ही नहीं मालूम क्या वे हिंदू रक्षक है ?

यह सत्य को तो सब जानते ही हैं कि हिंदू लोग आज जातियों में चीरे जाकर,उसमें भी ऐसा वर्णन किये कि कुछ जातियाँ बडे हैं तो कुछ जातियाँ छोटे हैं। ईश्वर ने सब मनुष्यों को बराबर पैदा किया तो कुछ मनुष्य अपने स्वार्थ बुद्धि से हिंदू(इंदू) समाज को टुकडे टुकडे करके चीरके बलहीन करके ऐसा प्रचार किये कि पूरे हिंदू समाज केलिये हम ही बडे हैं,जैसे हम कहते हैं वैसा ही सब लोग सुन कर कार्य करलेनी चाहिये। वह हिंदू समाज जो कई वर्णों की सूरत में हैं उसमें अपना कुल ही अग्रकुल है कह कर बोललेना ही नहीं बल्कि,यह ऐलान करलिये कि हम ही दूसरे कुल के सबलोगों के लिये मार्गदर्शक है,गुरु है। भविश्य में उनको कोई आढ न आये जैसा, सब कुलवालों को नीच कुल बनाकर, हिंदूसमाज के साथ बडा अन्याय किया है। उतने से रुके बगैर आज तक भी अपने आप को हिंदू समाज के रक्षकों की तरह बोललेते हुये, हिंदू समाज को सर्वनाश करते हुये, हिंदू समाज दूसरे मतों की तरह बदलने केलिये पहला कारक होरहे है। ऐसे लोग हिंदू समाज केलिये नुकसान पहुंचानेवाले कीडे होने पर भी, बाकी कुल के लोग उनकी असली स्वरुप को न मालूम होने से जैसे वे कह रहे हैं वैसे सुनने की वजह से,हिंदू समाज को पूरे तरीके से अज्ञान दिशा के तरफ, अधर्म मार्ग के तरफ मोडकर, लोगों को किसी भी हाल में दैवज्ञान को मालूम न होने दिया फिर उन्हे ऐसा यकीन दिलाया कि जो कुछ वे कह रहे हैं वही असली दैवज्ञान हैं।

ऐसी हालत में आज त्रैत सिद्धांतकर्ता श्री आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर जी ने अज्ञान दिशा के तरफ ठहरी हुयी हिंदू समाज को सही रास्ते में रखने केलिये,**भगवद्गीता में पुरुषोत्तम प्राप्ति योग अध्याय में**

बोधा की गयी क्षर, अक्षर, पुरुषोत्तम कहलानेवाले तीन पुरुषों के विषय को त्रैतसिद्धांत नाम से प्रतिपाद (निरुपण) करके दैवज्ञान सबको समझमें आये जैसा ग्रंथरुपमें लिखना, बोधा करना हो रहा हैं। इन ग्रंथों के ज्ञान से आज लोग खुश हो रहे हैं कि हमें अब असल ज्ञान मालूम हो रहा है। जो लोग अग्रकुल में हैं वे लोग भी अपने अज्ञान के अंधेरों को छोडकर, इस बात से खुश हो रहे हैं कि अबतक जो ज्ञान हमें मालूम नही हुआ वह ज्ञान आज हमलोगों को योगीश्वर जी के द्वारा मालूम हो रहा है और वे खुशी से उनके शिष्यों में दाखिल हो रहे हैं। तो अग्रकुल में सिर्फ कुछ लोग योगीश्वर जी जो ज्ञानविषयों को बता रहे हैं उनको देखकर यह ज्ञान से तो लोग ज्ञान चैतन्य होकर, ज्ञान नही जाननेवाले हमलोगों की इज़्ज़त तक नहीं करेंगे, इससे समाज पर हम जो हुकूमत कर रहे हैं वह पूरा चली जायेगी समझकर उन्होने ऐसा प्रचार करना शुरु किया कि योगीश्वर जी जो ज्ञान बता रहे हैं वह त्रैतसिद्धांत हो, त्रैतसिद्धांत भगवद्गीता हो हिंदुओं का ज्ञान ही नही है, वह ईसायियों के मज़हब से संबंध रखने वाला ज्ञान है, कोई भी उस ज्ञान को पढना नहीं चाहिये। इतना ही नहीं हम हिंदू धर्म रक्षक है कहते हुये थोडा राजकीय का रंग लगालेकर, वहाँ वहाँ हमारे ज्ञान प्रचार को आढे आना भी हो रहा है। अपनी बात को सुनने वाले दूसरे कुल के लोगों से भी यह कह रहे हैं कि जो ज्ञान प्रबोधानंद योगीश्वर बता रहे हैं वह हिंदू ज्ञान ही नहीं है,ईसायियों का ज्ञान है, हिंदुओं का परदा लगाले कर ईसायियत का मत प्रचार कर रहे हैं इतना ही नहीं बल्कि उनको उक्साकर हमारे प्रचार को आडे आये जैसा कर रहे हैं।

योगीश्वर जी ने स्थापना की हुयी हिंदू (इंदू) ज्ञानवेदिका इसतरह के रुकावटों को थोडे वक्त तक सबर के साथ देखना हुआ। हम में सबर खतम होजाकर हमें अन्यमतप्रचारक जैसा वर्णन करनेवाले अग्रकुल के लोगों को, उनके अनुचरों का सामना करके सवाल करना हुआ। हमने

पूछे हुये एक सवाल का भी उन्होने सही जवाब नहीं दिया। वे जवाब कैसे थे पाठकों की तरह आप देखिये।

हमारा सवाल :– हम गाँव गाँव फिर कर, गाँव में घर घर फिर कर हिंदू धर्म ऐसा प्रचार कर रहे हैं कि अबतक कोई भी हिंदू ने नहीं किया! इसतरह प्रचार करनेवाले हमें देखकर आप क्यों अन्यमत प्रचारक कह रहे हैं?

उनका जवाब :- हिंदू मत में कई स्वामीजियाँ हैं। उनमें से कोई भी घर घर जाकर प्रचार नहीं किये। हिंदू इसतरह प्रचार नहीं करते। ईसायियाँ ही बाज़ार बाज़ार, घर घर फिर कर प्रचार करते हैं। आप हिंदू का परदा पहनकर घर घर घूम कर ईसायियत का प्रचार कर रहे हैं।

हमारा सवाल :– अगर हम ईसायि है तो भगवद्‌गीता क्यों प्रचार करेंगे?

उनका जवाब :- आप जिसका प्रचार कर रहे हैं वह त्रैतसिद्धांत भगवद्गीता हैं,वह ईसायियों का है । आपने बैबिल को ही ऐसा नाम

रखा है।

हमारा सवाल :– ईसायियाँ तो अपने आप को ईसायी ही बोललेते हैं। ऐसा ही बैबिल को बैबिल की तरह ही बोललेते हैं। जब उनका प्रचार ईसायियत, बैबिल है तो वे लोग उसी नाम से प्रचार करेंगे मगर हिंदुओं की तरह भगवद्‌गीता के नाम से क्यों प्रचार करेंगे? अबतक इसतरह कहीं भी नहीं हुआ। जिस मत के लोग उनके अपने मत का नाम ही बोललेते हैं मगर दूसरे मत का नाम नहीं कहते। उतने दूर तक क्यों क्या तुमलोगों ने हमारी भगवद्गीता को खोलकर देखा हैं क्या? उसमें भगवद्गीता के श्लोक है या बैबिल के वाक्य है?

उनका जवाब :- त्रैतसिद्धांत कह कर है ना! हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि त्रैत का मतलब त्रित्व है या त्रिनिटि है।

हमारा सवाल :- हिंदू धर्मों में अद्वैत सिद्धांत को आदिशंकराचार्य ने प्रतिपादन किया। विशिष्टाद्वैत को रामानुजाचार्य ने प्रतिपादन किया, द्वैत को मध्वाचार्य ने ऐलान किया। अब आचार्य प्रबोधानंद योगीश्वर जी ने त्रैतसिद्धांत का प्रतिपादन किया। सिद्धांतकर्तायें, सिद्धांत अलग होने पर भी सब हिंदू ही है कह कर तुम लोगों ने क्यों नहीं समझा?

उनका जवाब :- आपने आपके त्रैतसिद्धांत भगवद्गीता में लिखा कि यज्ञों को नही करना चाहिये हेना! असल में तो भगवद्गीता में वैसा नही हैं ना!

हमारा सवाल :- तुमलोग हिंदुओ में मुख्य होकर इतनी मूर्खत्व से कैसे बात करसकते हो? पूरे प्रपंच केलिये एक ही भगवद्गीता होती है मगर, इसतरह तुम्हारा भगवद्गीता, हमारा भगवद्गीता कह कर अलग नहीं रहता। भगवद्गीता का विवरण एक एक जन एक एक तरह जिसको जैसे समझमें आया वैसे बोले होंगे मगर, यह बात याद रखें कि सबकेलिये भगवद्गीता मूलग्रंथ एक ही है। जिन ज्ञानियों ने पढा वे सब उसकी तारीफ ऐसे कर रहे हैं कि त्रैतसिद्धांत भगवद्गीता सबसे बढकर सही भाव के साथ है तो, तुम्हारे समाज में कई लोग उसकी प्रशंसा भी कर रहे हैं तो, सिर्फ तुम थोडे लोगों को ही वह भगवद्गीता व्यतिरेक से दिख रहा है कहने के पीछे आपकी हसद और स्वार्थ साफ नज़र आ रहा है। हमने यह कहीं पे भी नहीं कहा कि यज्ञ मत कीजिये। हमने साफ कहा कि यज्ञों से पुण्य हासिल होता है,स्वर्ग मिलता है। हमने कहा कि यज्ञों से मोक्ष नहीं मिलता, ईश्वर मालूम नहीं होगा (यानि ईश्वर को नहीं पायेंगे)। तुमलोग अपने आप को सब जातियों से स्वच्छ हिंदू बोलले रहे हैं ना! चलिये कम से कम एक हिंदू धर्म को तो बतायिये जो भगवद्गीता में कहा था।

उनका जवाब :- यह सब बातें हमें नही चाहिये....आप हिंदू नहीं है बस इतना ही....

हमारा सवाल :- इसतरह जिद्दी से बात मतकीजिये आप अग्रकुल वाले

हैं कह कर जैसे आपकी मरज़ी है वैसे बात मत कीजिये। हम हिंदू नहीं है कहनेकेलिये क्या आप इसका कोई आधार या सबूत दिखापायेंगे? हमारी कहानि सैड में रखके अगर आप सच्चे हिंदू है तो भगवद्गीता में विश्वरुप संदर्शयोग अध्याय में ४८ श्लोक में, ५३ श्लोक में भगवान ने क्या कहा आप ही बतायिये?

उनका जवाब :- हमने अबतक भगवद्गीता को नहीं पढा। अगर आप को चाहिये तो संपूर्णआनंदस्वामि से कहलवायेंगे।

हमारा सवाल :- कम से कम भगवद्गीता को भी आपलोगों ने नहीं पढा तो फिर तुम जैसे लोग योगीश्वर प्रबोधानंद स्वामि का दूषण करना अच्छी बात है क्या?कम से कम एक हिंदू धर्म को भी न जाननेवाले तुमलोग हिंदू धर्म रक्षक है कहना अच्छी बात है क्या?योगीश्वर जी ने जो ग्रंथ लिखे उनमें से एक ग्रंथ को भी पढे बगैर हमारे सिवा पूज्य,गुरुओं की तरह कोई और नहीं रहना चाहिये, इसतरह का हसद अपने अंदर रखलेके ऐसा बात करेंगे तो ईश्वर बरदाश नहीं करेगा।

उनका जवाब :- हिंदू मत में कई देवतायें है। शिव भी ईश्वर ही है,शिव का बेटा गणपति भी ईश्वर ही है,राम भी ईश्वर ही है,राम का सेवक आंजनेय भी ईश्वर ही है। वैसे हिंदू मत में आप कहरहे हैं कि ईश्वर एक ही हैं तो फिर इसतरह कहना गलत नही है क्या?

हमारा सवाल :- हमने मत के बारे में नहीं कहा। हिंदू मत में कई ईश्वर रहना सही है, तो हमने यह कहा कि हिंदू ज्ञान में, हिंदू धर्म के प्रकार पूरे विश्व केलिये ईश्वर एक ही है। भगवद्गीता में ईश्वर ने जो कहा वही हमने कहा है उसके सिवा हमने यह कब कहा कि देवतायें नहीं है! हमने कहा कि सब देवताओं का भी मालिक एक है उसीको ईश्वर या परमात्मा या सृष्टिकर्ता कहते हैं, वही देवों का भी देव हैं, सब उसीकी आराधना करनी चाहिये।

उनका जवाब :- आप राम का नाम नहीं कहते,शिव का नाम नहीं कहते,

विनायक का नाम भी नहीं कहते। किसीका नाम न कहते हुये ईश्वर, सृष्टिकर्ता है कह कर बहुत बार बतायें। ईश्वर शब्द को, सृष्टिकर्ता शब्द को ईसायियाँ ही इस्तेमाल करते हैं। हिंदू इस्तेमाल नहीं करते। इसीलिये आप को हिंदू नहीं ईसायि कह रहे हैं।

हमारा सवाल :- ईसायियत पैदा होकर दो हजार साल हुआ है। यह कोई भी नहीं बतासकते कि सृष्टी पैदा होकर कितने करोड साल हुये। सृष्टादि से सृष्टिकर्ता शब्द को,ईश्वर शब्द को हिंदू समाज इस्तेमाल करही रही हैं। तो हम यह पूछ रहे हैं ईश्वर, सृष्टिकर्ता कहलानेवाले शब्द पहले से हिंदू समाज में मौजूद थे तो उन शब्दों को क्या हिंदुओ ने ईसायियों को लीज़ पर दिया है? या पूरा बेच दिये? यह पूछ रहे हैं कि ऐसा कहाँ पर लिखा गया कि हिंदू लोग ईश्वर, सृष्टिकर्ता शब्दों को बोलना नहीं चाहिये?

उनका जवाब :- आपने कभी भी अपने आप को हिंदूओं की तरह नहीं बोललिये, हिंदू के बदले में हमेशा इंदू कहा था यह काफि है इस बात केलिये कि आप हिंदूमत की नहीं बल्कि अन्यमत की बोधा कररहे हैं। ऐसी सूरत में क्या आप ने हिंदू मत को चीरे जैसा नहीं हैं क्या! प्रत्येक से इंदू मत कहनेवाली की प्रचार किये जैसा नहीं हुआ क्या! जब आप हिंदू ही है तो आप अपने ग्रंथों में हो, अपने बोधाओ में हो प्रत्येक से इंदू कह कर क्यों बोल रहे है?

हमारा सवाल :- हम सीधे एक सवाल पूछते हैं जवाब दीजिये। हिंदू,इंदू लफ़्ज़ में थोडा शब्द के सिवा क्या फरख है आप ही बतायिये। तेलुगु भाषा लिखनेवाले सब कहते हैं कि हिरण्यकश्यप को **नरशिंह** स्वामि ने मारा और वैसा ही लिखते भी हैं। प्रस्तुतकाल में जिस व्यक्ति का नाम नर**शिं**ह होता है वह भी अपने नाम को नर**शिं**ह ही कहकर लिखता है यह बात तो सब जानते हैं। तो हम कह रहे हैं कि वह बात गलत है उस नाम को वैसा लिखना नहीं चाहिये उसे **नरसिंह** कह कर लिखना चाहिये। और हम यह

भी कह रहे हैं कि जंगल में मृगराजा को **सिं**ह कहते हैं लेकिन **शिं**ह नहीं कहते हैं। और हमने यह भी कहा कि **सिंह** शब्द का अर्थ है मगर **शिंह** शब्द का कोई मतलब नहीं हैं। उसीतरह अगर जो सच है वह कहे तो **इंदू** शब्द का अर्थ है मगर **हिंदू** शब्द का कोई मतलब ही नहीं हैं। सृष्टादि में जो पैदा हुआ वह इंदू समाज है (यानि पूरा विश्व जब पैदा हुआ उसवक्त ही इंदू समाज पैदा हुआ), लेकिन बीचमें वह जिसतरह **दृष्टि** शब्द **जिष्टि** शब्द में बदलगया वैसा ही इंदू शब्द हिंदू में बदलकर आज **इंदू** को **हिंदू** कह कर पुकार रहे हैं। इंदू लफ़्ज़ ही क्यों इस्तेमाल करनी चाहिये हिंदू क्यों इस्तेमाल नहीं करनी चाहिये यह बात भी हमने अपने ग्रंथो में साफ तौर पर विवरण दिया है। जो सत्य है वह आप अच्छी तरह से जानते हैं उसके बावजूद भी तुम लोग इस हसद (असूय गुण) से बात कर रहे हैं कि हमारे सिवा समाज में और कोई बडे नहीं रहना चाहिये।

अग्रकुल में कई बडे लोग हमारे त्रैत सिद्धांत ज्ञान को मालूम करके खुशी व्यक्त कर रहे हैं तो, कुछ लोग गल्लियों में घूमनेवाले गुंडों की तरह इसतरह कहना अच्छी बात नहीं है कि हम मारेंगे, भोकेंगे, जलादेंगे आप प्रचार नहीं करना चाहिये। हमारे ग्रंथ पढे बगैर ही बात करना, हमने जो बातें कहीं है उनको सुने बगैर ही यह सब ड्रामा,नाटक है कहना अच्छी बात नहीं है। हम यह पूछ रहे हैं कि आप में से कोई भी हो यह साबित करके दिखायिये कि हमारे ग्रंथो में कहीं पे भी हो दूसरे मतों का प्रचार किये जैसा, या फलाना मत में दाखिल होजायिये जैसा कहा हो। जिसने यह साबित किया उसे **इंदू ज्ञानवेदिका के तरफ से दस लाख रुपये दे सकते हैं। अगर साबित नहीं करपाये तो तुम लोग किसी भी गाँव में हो श्रीकृष्ण के मंदिर के लिये लाख रुपे देना चाहिये।** क्या कोई भी इस शर्त के लिये आगे बडेंगे?

इंदू ज्ञान वेदिका और प्रबोध सेवा समिति

देवालय के रहस्य

प्रमुखों की लेखा

साक्षि न्यूस पेपर २१-०१-२०१४

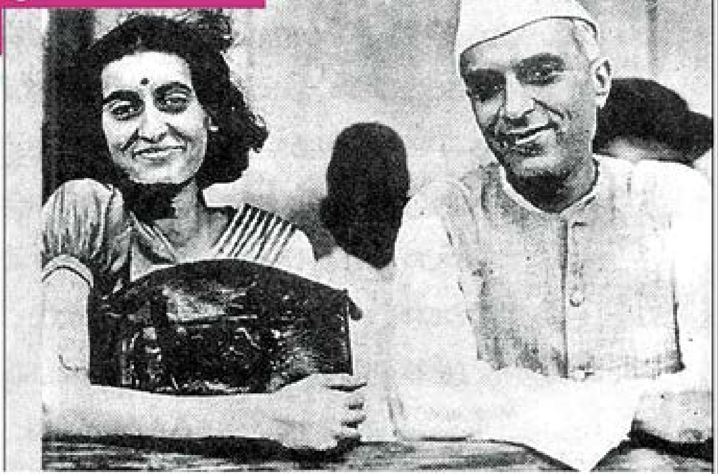

इंदू देश ही इंडिया है!

हिमालय, विंद्यापर्वतों के बीच उस ज़माने का, आर्यों का भूभाग कहाँ रहता था, उस जगह को तुमने हमारे देश के चित्र में देखा था। उसका आकार ऐसा दिखता था कि जैसे उगताहुआ चांद दिखता है, इसीलिये आर्यवर्तक को इंदूदेश नाम आया था। इंदू देश ही हिंदू देश हुआ हैं।

रामायण पैदा होने के बहुत वक्त के बाद महाभारत पैदा हुई थी। वह रामायण से भी बडी ग्रंथ हैं। उसमें जो कहा गया था वह आर्य द्राविडों का युद्ध नहीं था। आर्यों के बीच जो कुटुंब कलह पैदाहुआ वही भारत कथा हैं। महाभारत में कही गई कहानियाँ, धर्म इतने उतने नहीं हैं। वे बहुत ही खूबसूरत, गंभीर से रहते हैं। इन सबसे बडी महत्व वाली भगवद्गीता नाम की महाग्रंथ महाभारत में रहने की वजह से वह हम सबकेलिये प्रियतम हुई हैं। कई हज़ारों सालों पहले ही हमारे देश में ऐसे महत्व ग्रंथ पैदा हुये थे। इन्हे बडे महान लोग ही लिखे हुए होंगे। ये ग्रंथ पैदा होकर इतना वक्त गुज़रने पर भी उनके बारे में मालूम न किये हुए बच्चे हो, फायिदा नहीं पाये हुए बडे हो नहीं रहते।

* उस लेखा में से जो नेहरु ने इंदिरा को लिखा